जी-20 में प्रधानमंत्री

दक्षिण अफ्रीका के जोहानिसबर्ग में हो रहे जी-20 शिखर सम्मेलन को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने नशीली दवाओं और आतंकवाद के गठजोड़ पर गहरी चिंता जताते हुए इसे रोकने के लिए दुनिया के देशों को मिल कर कार्रवाई करने का जो सुझाव दिया है, उसे ग्लोबल साउथ की साझा चिंताओं के हल की कोशिश के रूप में देखा जाना चाहिए. उन्होंने एक नये विकास मॉडल की आवश्यकता पर भी जोर दिया है, जो समावेशी होने के साथ-साथ दीर्घकालिक हो. जी-20 ओपन सैटेलाइट डाटा साझेदारी का प्रस्ताव भी उन्होंने रखा. इससे जी-20 देशों की स्पेस एजेंसी के डाटा को ग्लोबल साउथ देशों के लिए उपयोगी बनाया जा सकेगा. इस सत्र का विषय था-'दुनिया को आपदाओं, जलवायु परिवर्तन और ऊर्जा परिवर्तन की चुनौतियों के बीच अधिक मजबूत बनाना, और साथ-साथ खाद्य सुरक्षा की मजबूत व्यवस्था तैयार करना'. प्रधानमंत्री ने साथी जी-20 नेताओं के साथ तस्वीरें खिंचवाई और एक्स पर लिखा, 'हम सब मिल कर दुनिया की तरक्की और खुशहाली के लिए अपनी प्रतिबद्धता दोहराते हैं'. दक्षिण अफ्रीका में पहली बार हो रहे जी-20 शिखर सम्मेलन के घोषणापत्र में अस्थिर भू-राजनीतिक हालात में युद्धों और संघर्षों की वजह से हो रही मानवीय त्रासदी को लेकर चिंता जतायी गयी तथा सदस्य देशों से अपील की गयी कि वे यूएन चार्टर के तहत क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता का सम्मान करें. घोषणापत्र में सूडान, कांगो, फिलिस्तीन और यूक्रेन में शांति कायम करने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया. शिखर सम्मेलन की शुरुआत के साथ ही शनिवार को सर्वसम्मति से जी-20 के घोषणापत्र को अपनाया गया. घोषणापत्र अमूमन सम्मेलन के आखिर में जारी होते हैं, लेकिन इस बार सम्मेलन की शुरुआत में ही इसे जारी किया गया. घोषणापत्र में नयी दिल्ली में हुए सम्मेलन के दौरान अपनाये गये कई बिंदुओं का भी जिक्र है. जैसे-इसमें हर तरह के आतंकवाद की कड़ी भर्त्सना की गयी है, एआइ, डिजिटल और इमर्जिंग तकनीक की संभावनाओं को पूरी तरह इस्तेमाल करने का जिक्र है तथा एआइ को और सुरक्षित बनाने की प्रतिबद्धता भी जतायी गयी है. कॉप-30 की तरह जी-20 सम्मेलन में भी अमेरिका अनुपस्थित है, जिस पर मेजबान दक्षिण अफ्रीका का कहना था कि जी-20 किसी एक देश पर निर्भर नहीं है. यह सम्मेलन ऐसे समय में हो रहा है, जब वैश्विक अर्थव्यवस्था, जलवायु संकट और असमानता जैसे बड़े मुद्दों पर दुनिया साझा समाधान की तलाश में है, और भारत की भूमिका इस बार भी बेहद महत्वपूर्ण मानी जा रही है.

दक्षिण अफ्रीका में पहली बार हो रहे जी-20 शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने नशीली दवाओं और आतंकवाद के गठजोड़ पर चिंता जताते हुए इसके खिलाफ सभी देशों को साथ आने का आह्वान किया है.

जलवायु संकट पर विकसित देश उदासीन

सहर रहेजा
प्रोग्राम ऑफिसर, क्लाइमेट चेंज
सेंटर फॉर साइंस एंड इन्वायरनमेंट
sehr.raheja@cseindia.org

उपमन्यु दास
प्रोग्राम ऑफिसर, क्लाइमेट चेंज
सेंटर फॉर साइंस एंड इन्वायरनमेंट
upamanyu.das@cseindia.org

कॉप-30 में यह तय किया गया कि जलवायु परिवर्तन से सर्वाधिक प्रभावित देशों को चरम मौसम से निपटने के लिए ज्यादा आर्थिक मदद दी जायेगी. लेकिन इसमें जीवाश्म ईंधन के कम इस्तेमाल से संबंधित कोई नया वादा नहीं किया गया, न ही गरम होती धरती को बचाने के लिए सख्त फैसले लिये गये.

कॉप यानी पार्टीज टू द यूनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कन्वेंशन्स ऑन क्लाइमेट चेंज का 30 वां सम्मेलन ब्राजील के अमेजन स्थित शहर बेलेम में संपन्न हो गया. जलवायु परिवर्तन पर इस सालाना सम्मेलन में दुनिया भर की सरकारों के प्रतिनिधियों, सिविल सोसाइटी संगठनों और तकनीकी विशेषज्ञों की उपस्थिति होती है, जो जलवायु बदलावों पर सरकारों द्वारा उठाये जाने वाले कदमों का आकलन और आगे का रास्ता निकालने के लिए बातचीत करते हैं. पिछले साल अजरबैजान में हुए कॉप-29 में मुख्य मुद्दा जलवायु वित्त की धनराशि था. उस सम्मेलन में बनी सहमति को विकासशील देशों और सिविल सोसाइटी ने विफलता बताया था. अमेरिकी अनुपस्थिति से जलवायु वित्त पर बड़ा असर पड़ रहा है. अमेरिका जैसे बड़े दाता के पीछे हटने से जलवायु वित्त के मुद्दे पर विकसित देश पीछे हट सकते हैं, जिसका खामियाजा भारत समेत तमाम विकासशील देश भुगतेंगे.

मौजूदा भू-राजनीतिक परिस्थिति को देखते हुए बेलेम में चल रहा सम्मेलन बहुत महत्वपूर्ण था : डोनाल्ड ट्रंप के दोबारा राष्ट्रपति बनने के बाद अमेरिका पेरिस समझौते से बाहर हो गया है और बेलेम में अमेरिका ने अपना कोई उच्च स्तरीय प्रतिनिधिमंडल नहीं भेजा. ऐसा तीन दशकों में पहली बार हुआ है. यह साल विकसित देशों द्वारा विदेशी मदद से संबंधित बजट में भारी कटौती, टैरिफ वार और सैन्य विवादों के लिए ही जाना गया. इस साल जलवायु परिवर्तन पर वार्ता के तीस वर्ष हो रहे हैं, और पेरिस समझौते के भी दस साल हो गये हैं. ब्राजील के राष्ट्रपति ने कहा है कि कॉप-30 वार्ता की जगह अमल करने का अवसर होना चाहिए. यही नहीं, 2025 वह वर्ष है, जब सभी देशों को ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाने और अपनी घरेलू नीतियों में बदलाव लाने से संबंधित नयी घोषणाएं करनी थीं. सम्मेलन शुरू होने के साथ ही बता दिया गया था कि विकसित देशों के वादे के मुताबिक जलवायु वित्त का भुगतान करने, जलवायु से संबंधित एकतरफा व्यापारिक कार्रवाई को प्रबंधित करने, जलवायु से संबंधित अभी के वादों और 1.5 डिग्री सेंटीग्रेट के फासले को खत्म करने तथा उत्सर्जन के क्षेत्र में हो रही प्रगति को जांचने जैसे राजनीतिक रूप से संवेदनशील चार मुद्दों को फॉरमल एजेंडा एडोप्टेशन से बाहर रखा जायेगा और इन पर प्रेसीडेंशियल कॉन्फ्रेंस में चर्चा होगी. विगत 18 नवंबर को प्रेसीडेंसी ने इन चारों मुद्दों पर सहमति बनाने की जरूरत से संबंधित एक मसौदा जारी किया, लेकिन इस पर प्रगति धीमी ही रही.

सम्मेलन में विभिन्न देशों के बीच बातचीत में भारी असहमति दिखाई पड़ी. जी-77 और अफ्रीकी समूह जैसे विकासशील देशों के समूहों ने इस पर चिंता जतायी कि विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तावित अनेक संकेतक पेरिस समझौते से मेल नहीं खाते. उनकी यह भी शिकायत थी कि इन उपायों में स्थानीय स्तर पर वित्तीय प्रबंधन पर ज्यादा जोर है तथा इनमें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मदद देने की जरूरत से पीछे हटने की कोशिश है. विकासशील देशों के समूहों ने कहा कि इंडिकेटर फ्रेमवर्क से संबंधित अंतिम फैसला लिये जाने से पहले जलवायु वित्त पर सहमति बन जाना आवश्यक है. ताजा मसौदे में इन बातों के अलावा 'बाकू अडेप्शन रोडमैप' तथा जलवायु वित्त की राशि बढ़ाने की बात कही गयी है. इसमें जलवायु वित्त को 2030 तक कम से कम 120 अरब डॉलर सालाना करने का प्रस्ताव रखा गया है. कॉप-30 में जेटीडब्ल्यूपी-यानी जस्ट ट्रांजिशन वर्क प्रोग्राम के तहत वार्ता स्पष्ट निर्णय लेने तथा जलवायु वित्त को तत्काल क्रियान्वित करने के लिए वैश्विक स्तर पर तालमेल बनाने के लिए नया तरीका अपनाने पर केंद्रित रही. जलवायु संबंधित एकतरफा व्यापार कार्रवाई (यूटीएम) को वार्ता में शामिल करने जैसा विवादित मुद्दा भी सामने आया, जब जी-77 और चीन ने इन पर बहस की जरूरत बतायी, क्योंकि इससे उनका कारोबार प्रभावित होता है. जी-77 समूह और चीन ने जलवायु वित्त, तकनीकी हस्तांतरण और क्षमता निर्माण के क्षेत्र में तालमेल बनाने के लिए एक नया जस्ट ट्रांजिशन मैकेनिज्म प्रस्तावित भी किया है, ताकि सिद्धांतों को कार्यरूप में बदला जा सके. लेकिन जलवायु संबंधित एकतरफा कार्रवाई के मामले में यूरोपीय आयोग के कार्बन बॉर्डर एडजस्टमेंट मैकेनिज्म जैसी नयी परेशानियां भी सामने आई हैं. जलवायु संबंधित एकतरफा कार्रवाई के मामले में कई राय सामने आई हैं. जैसे कि यूरोपीय आयोग ने अपना जस्ट ट्रांजिशन एक्शन प्लान (जेटीएपी) सामने रखते हुए दावा किया है कि तापमान को 1.5 डिग्री तक रखने के लिए यह सबसे प्रभावी तरीका है. बेलेम में कई नये उपायों पर भी चर्चा हुई. जैसे, ब्राजील के राष्ट्रपति कार्यालय ने टीएफएफएफ (ट्रॉपिकल फॉरेस्ट फॉरएवर फैसिलिटी) लॉन्च की. यह 125 अरब डॉलर का एक निवेश फंड होगा, जो वन संरक्षण के लिए उष्णकटिबंधीय देशों को बाजार आधारित मॉडल के जरिये भुगतान करेगा. इसके तहत ज्यादातर विकासशील देशों में निवेश किया जायेगा. हालांकि चिंता तब भी बनी रहेगी कि इस पहल से क्या विकासशील देशों को वन संरक्षण के लिए पर्याप्त फंड की व्यवस्था हो सकेगी. इसके अलावा जीवाश्म ईंधन का प्रयोग बंद करने से संबंधित योजना पर भी वार्ता हुई. हालांकि इस मुद्दे पर गहरी असहमति दिखी. कई देश इससे संबंधित स्पष्ट चरणबद्ध समय सारिणी तय करने की बात कर रहे थे, जबकि कुछ दूसरे देशों की मांग थी कि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को इसके लिए वित्तीय मदद देने की जरूरत है. कॉप प्रेसीडेंसी ने जलवायु और व्यापार पर एक नये मंच की भी शुरुआत की. इसके तहत कार्बन शुल्क पर संवाद बढ़ाने की पहल की गयी, ताकि व्यापार से जुड़े विवादों का हल निकाला जा सके.

जलवायु वित्त इस सम्मेलन का प्रमुख मुद्दा नहीं था, लेकिन यही अब सबसे निर्णायक मुद्दे के रूप में सामने है. दूसरी ओर, जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए देशों द्वारा अपनी घरेलू नीतियों में बदलाव लाने की जो बात थी, वह मुद्दा नेपथ्य में चला गया दिखता है. शनिवार को एक सामान्य से समझौते में तय किया गया कि जलवायु परिवर्तन से सर्वाधिक प्रभावित देशों को चरम मौसम से निपटने के लिए ज्यादा आर्थिक मदद दी जायेगी. लेकिन इसमें जीवाश्म ईंधन के कम इस्तेमाल से संबंधित कोई नया वादा नहीं किया गया, न ही गरम होती दुनिया को बचाने के लिए सख्त फैसले लिये गये. इस कारण अनेक देश और पर्यावरण कार्यकर्ता हताश हैं. दुनिया में जलवायु से संबंधित वादों की कमी नहीं है, लेकिन अब इसमें एक व्यवस्थित ढांचे की आवश्यकता है. समय कम बचा है, जबकि दांव पर बहुत कुछ है.

(ये लेखकद्वय के निजी विचार हैं.)

लड़ाकू विमानों के लिए स्वदेशी इंजन चाहिए

अरुणेन्द्र नाथ वर्मा
विंग कमांडर (सेवानिवृत्त)
arungraphicsverma@gmail.com

दुबई के एयर शो में तेजस दुर्घटनाग्रस्त हो गया. ऐसे हादसे पहले भी हुए हैं और तेजस का इतिहास संदिग्ध नहीं है. पर लड़ाकू विमानों के इंजन के लिए विदेशी निर्भरता को देखते हुए अब जरूरी है कि निजी क्षेत्र की कंपनियों को जेट इंजन बनाने के लिए प्रेरित किया जाये.

दुबई में आयोजित एयर शो में भारत के तेजस मार्क1 लड़ाकू विमान की दुर्घटना में एक अनुभवी और बहादुर पायलट की शहादत ने देशवासियों को गहरी ठेस पहुंचाई है. पर दुर्घटना के बारे में अटकलें लगाने से देश का, तेजस को उड़ाने वाले वीरों का और उसके उत्पादन में जुटी हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स का कोई हितसाधन नहीं होगा. वर्ष 1963 में भारतीय वायुसेना से जुड़े मिग 21 विमान के लिए अच्छे विकल्प की खोज के बाद 1980 में तेजस मल्टीरोल कॉम्बैट एयरक्राफ्ट के निर्माण का फैसला गहरी विवेचना और अध्ययन का परिणाम था. उत्पादन की दीर्घकालीन तैयारी के बाद इसकी प्रथम टेस्ट उड़ान 2001 में भरी जा सकी. उसके बाद भी भारतीय वायुसेना में प्रवेश मिलने में इसे काफी समय लगा. वर्ष 2016 में सक्रिय (ऑपरेशनल) रूप से अपनाये जाने के बाद मार्च, 2024 में पहला तेजस विमान दुर्घटनाग्रस्त होने तक इसका रिकॉर्ड बेदाग था. उसके बाद भी वायुसेना में सक्रिय रूप से इसका उपयोग होता रहा है. अतः तेजस का इतिहास संदिग्ध नहीं है. एयर शो के दौरान दुर्घटनाग्रस्त होने की यह पहली घटना नहीं है. इंग्लैंड का हॉकर हंटर टी7 जैसा सफल विमान उसी देश के एयर शो में दुर्घटनाग्रस्त हुआ. वर्ष 2002 में यूक्रेन के स्कनीलिव एयर शो में यूक्रेनी वायुसेना का सुखोई जैसा प्रतिष्ठित विमान दर्शकों की भीड़ के बीच आ गिरा था.

दुबई एयर शो में तेजस के पायलट ने जो कलाबाजियां दिखाईं, वे किसी भी विमान की क्षमता और विमानचालक के कौशल की चरम सीमा तक परीक्षा लेती हैं. ऐसी ही चरम कलाबाजी थी बैरेल रोल जैसा वह उद्यम, जिसके अंत में कम ऊंचाई से गहरी डाइव लगाते हुए हमारा विमान रेतीली जमीन से टकरा कर नष्ट हो गया. दुर्घटना के समय मौसम साफ था, आकाश की मध्य और ऊंची परतों में दर्शनीयता अच्छी थी, पर धरती की सतह के निकट धूल आदि के कारण तिरछी दर्शनीयता कम थी. ऐसे में, दुर्घटना के कई कारण हो सकते हैं-जैसे, विमान के इंजन में उस किस्म की खराबी, जैसी एयर इंडिया के बोईंग में हुई थी या फ्लाई बाई वायर तकनीक में प्रयुक्त होने वाली कंट्रोल सरफेस का ठीक तरह काम न करना. या पायलट से गलती होना. बहुत अनुभवी पायलट भी दिग्भ्रमित होकर गलती कर सकता है. डाइव करते विमान में चरम निगेटिव जी (गुरुत्वाकर्षण) के कारण पायलट का खून उसके मस्तिष्क की तरफ भागता है, वैसी स्थिति में उसका दिग्भ्रमित होकर क्षितिज की पहचान न कर पाना संभव है और वह विमान को ऊपर खींचने में क्षण भर की देर कर सकता है, खासकर जब वह धरती की सतह के बहुत निकट आ चुका हो. या फिर विमान के कल-पुर्जों में शत्रु द्वारा छेड़छाड़ हो सकती है.

वैज्ञानिक ढंग से जांच करने वाली एजेंसी द्वारा विमान के एफडीआर (फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर या ब्लैक बॉक्स) और सीवीआर (कॉकपिट वॉयस रिकॉर्डर) का परीक्षण पूरा होने के बाद ही कुछ कहना उचित होगा. पर इसमें शक नहीं कि इस दुर्घटना ने वायुसेना के भविष्य से संबंधित कठिनाइयों की तरफ भी ध्यान आकर्षित किया है. जो भारतीय वायुसेना अपेक्षित 42 स्क्वॉड्रनों की जगह अभी 29 स्क्वॉड्रनों से काम चला रही है और जिसमें 97 तेजस विमानों को शामिल करने का बहुत बड़ा आदेश दिया जा चुका है, उसके अनिश्चित भविष्य को यह दुर्घटना खूब रेखांकित करती है. तेजस चौथी और पांचवीं पीढ़ी के बीच का विमान है, पर तेजस एमके1ए और उसकी आने वाली विकसित किस्मों से पांचवीं पीढ़ी के विमानों वाली क्षमता की उम्मीद लगायी जा रही है. इतनी बड़ी संख्या में तेजस एमके1 का निर्माण अमेरिका से लाये जीइ एफ 404आइएन 20 इंजन की आपूर्ति पर निर्भर है. भारत ने अब 113 अतिरिक्त इंजनों का आदेश भी दे दिया है, जिनकी आपूर्ति 2027 में शुरू होगी. एचएएल (हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड) तो अपनी निर्माण क्षमता तेजी से बढ़ा रहा है, लेकिन जीइ कंपनी इंजन की आपूर्ति बेहद निराशानजनक ढंग से कर पा रही है. आगे चलकर तेजस एमके2 के लिए और अधिक सशक्त जीइ ए 414 इंजन की जरूरत होगी. ट्रंप के तेवर देखते हुए इतने महत्वपूर्ण विमानों के लिए अमेरिका पर इतनी निर्भरता खतरनाक साबित हो सकती है.

यह तथ्य है कि जिस भारत की इसरो जैसी संस्था चंद्रयान, गगनयान और उपग्रहों का निर्माण कर सकती है, जिसकी डीआरडीओ संस्था ड्रोन और ब्रह्मोस जैसे प्रक्षेपास्त्र बना सकती है, वह जेट विमानों के इंजन बनाने में अभी तक विफल रहा है. भारत में निर्मित कावेरी इंजन बहुत ऊंचाई पर समुचित शक्ति उत्पादन नहीं कर पा रहा है. हमारी प्रयोगशालाएं अति विकसित लड़ाकू विमानों के इंजन के लिए उपयुक्त धातु बनाने में अभी तक अक्षम रही हैं. ऐसे में, समय आ गया है कि निजी क्षेत्र की सबसे महत्वपूर्ण कंपनियों को जेट इंजन बनाने के लिए प्रेरित किया जाये और इस काम में सहायता देने को तैयार विदेशी कंपनियों से हरसंभव सहायता ली जाये. अंतरिम काल में रूस की एसयू 57 विमान देने की पेशकश पर भी गंभीरता से विचार किया जाये. तेजस विमान का एयर शो में प्रदर्शन विदेश में निर्यात की आशा से प्रेरित था. बेहतर होगा कि पहले हम अपने लड़ाकू विमान उद्योग को वैश्विक स्तर का बनाने पर जोर दें.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

दक्षिण एशिया में साझा नदियों को लेकर देशों के बीच सहयोग जरूरी

दक्षिण एशिया में सीमा पार जल बंटवारे की कहानी प्रतिस्पर्धी आशंकाओं और आपस में गुंथे प्रारब्धों की कहानी है. यारलुंग जंगबो बांध, गंगा संधि की समाप्ति, तीस्ता समझौते पर रोक और सिंधु नदी का समस्याग्रस्त ढांचा, ये सभी एक नाजुक क्षेत्रीय व्यवस्था की ओर इशारा करते हैं. आने वाले दशक में नदियां न केवल हमारे तकनीक की, हमारे भरोसे की भी परीक्षा लेंगी. बांग्लादेश के लिए यह परीक्षा पहले ही शुरू हो चुकी है. तिब्बत में यारलुंग जंगबो नदी पर चीन द्वारा दुनिया की सबसे बड़ी जलविद्युत परियोजना का निर्माण, दक्षिण एशिया के सबसे संवेदनशील मुद्दों में से एक है. यह नदी, जिसे भारत में ब्रह्मपुत्र और बांग्लादेश में यमुना कहा जाता है, करोड़ों लोगों के जीवन का आधार है. बीजिंग के लिए यह परियोजना तकनीकी शक्ति, ऊर्जा सुरक्षा और राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक है, पर भारत और बांग्लादेश के लिए यह पारिस्थितिक क्षति, आजीविका के खतरों और बदलती शक्ति असमानता की बात है, जो चिंता उत्पन्न करती है. पचास से अधिक सीमा पार नदियों पर निर्भर एक डेल्टाई राष्ट्र होने के नाते, बांग्लादेश का अस्तित्व इस बात पर निर्भर करता है कि ऊंचाई पर स्थित देश साझा जल का प्रबंधन कैसे करते हैं. इसके उपजाऊ मैदान, मछली भंडार और तलछट प्रवाह नियमित मॉनसून पैटर्न तथा पूर्वानुमानित नदी प्रवाह पर निर्भर करते हैं. ऐसे में ऊपरी धारा में किसी भी तरह का परिवर्तन, संतुलन बिगाड़ सकता है. बांग्लादेश और भारत के बीच गंगा जल बंटवारा संधि 2026 में समाप्त होने वाली है, और इसके नवीनीकरण के लिए बातचीत अनिश्चित बनी हुई है. प्रश्न केवल यह नहीं है कि इस संधि का नवीनीकरण होगा या नहीं, यह भी है कि क्या यह हमारी बदलती जलवायु, जनसांख्यिकीय और भू-राजनीतिक वास्तविकताओं के अनुकूल होगी. बहुत जरूरी है कि साझा नदियों को लेकर हम टकराव के बजाय सहयोग का रुख अपनायें.

The Daily Star

-शेख तौफिक एम हक व मोहम्मद परवेज हसन यूसुफ

बोधि वृक्ष

भावनात्मक बंधन

वर्तमान में हम ऐसी दुनिया में जी रहे हैं, जहां किसी से भी संपर्क करना बस एक क्लिक की दूरी पर है. फिर भी यह विडंबना ही है कि रिश्ते समय की कसौटी पर खरा उतरने में संघर्ष कर रहे हैं. स्थायी प्रेम की हमारी गहरी इच्छा के बावजूद, हममें से कई लोग स्वयं को अल्पकालिक संबंधों के उतार-चढ़ाव में फंसा हुआ पाते हैं. तो, ऐसा क्या है जो रिश्तों को समय की कसौटी पर खरा उतरने और उन्हें जीवनभर के बंधन में बदलने से रोकता है? ऐसा क्यों है कि हमारी गहरी इच्छाओं और गंभीर प्रयासों के बावजूद, कई रिश्ते लड़खड़ा जाते हैं और अपने पीछे गहरा घाव और उदासी छोड़ जाते हैं? अनुभव कहता है कि आधुनिक रिश्तों की अल्पकालिकता का एक बुनियादी कारक है जीवन की गति. सरल शब्दों में कहें, तो तत्काल संतुष्टि और निरंतर उत्तेजना से प्रेरित हमारे तेज-तर्रार समाज ने प्यार के प्रति हमारे दृष्टिकोण को बिल्कुल बदल दिया है. क्योंकि आज हम एक ऐसी संस्कृति का हिस्सा बन चुके हैं जहां सब कुछ एक क्लिक पर उपलब्ध है. ऐसे में धैर्य जैसे एक दुर्लभ गुण बन गया है. रिश्ते समय और प्रतिबद्धता की मांग करते हैं, जो दैनिक जीवन की हलचल में असंभव हो जाता है. यही कारण है कि आज भावनात्मक बंधनों के पोषण के लिए बहुत कम जगह बचती है. आज के दौर में रिश्तों को निभाने में सबसे महत्वपूर्ण चुनौती है असुरक्षा का डर. एक ऐसा समाज जो स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता का जश्न मनाता है, उसमें रहने वाले अनेक लोगों को आज भावनात्मक रूप से किसी के साथ जुड़ने में बड़ी झिझक महसूस होती है. कारण? आहत होने या अस्वीकार किये जाने का डर. इसी वजह से अधिकांश लोगों ने अपने आसपास रक्षात्मक दीवारें खड़ी कर ली हैं, जो उन्हें लंबे समय तक चलने वाले रिश्ते में पूरी तरह से निवेश करने से रोकती हैं. इसके अतिरिक्त, यह भी देखा गया है कि अवास्तविक उम्मीदों का बोझ अच्छे व मजबूत रिश्तों की भी नींव कमजोर कर देता है. अतः मनुष्य को चाहिए कि वह यथार्थवादी बन कर रहे, ताकि जो भी रिश्ते वह जीवन में बनाये, उसमें यथार्थता बनी रहे.

-ब्रह्माकुमार निकुंज जी

प्रबंध सूत्र

कर्मों से सम्मान, अपमान तय होता है

आलोक पुराणिक
स्तंभकार
puranika@gmail.com

एक दोस्त हैं. बहुत अच्छी बातें करते हैं और शिकायत करते हैं कि लोग उनकी इज्जत नहीं करते. मैं उन्हें बताता हूं कि लोग तुम्हारी अच्छी बातों को सीरियसली नहीं लेते, क्योंकि वे तुम्हारे कर्म जानते हैं. कर्मों के हिसाब से लोग आदर, अपमान करते हैं. अच्छी बातों वाले साहब के कर्म बहुत खराब हैं, सबकी पीठ पीछे वह बुराई करते हैं, उधार लेकर वापस नहीं करते हैं. बड़ी-बड़ी बातें बनाते हैं, करते कुछ भी नहीं हैं. ऐसे लोगों को फ्रॉड कहा जाता है.

'कर्मणैव हि संसिद्धिम'- कर्म से ही इज्जत और अपमान निश्चित होता है. लोग कर्म देखते हैं. तुम कितनी ही सुंदर बातें कर लो, वे फल नहीं देतीं. कर्मों से ही सम्मान और अपमान तय होता है. यह एक सार्वभौमिक सत्य है. महाभारत, रामायण, उपनिषद्, नीतिशास्त्र और सुभाषित-संग्रहों में बार-बार यही बात दोहरायी गयी है कि वाणी क्षणिक है, कर्म स्थायी है. कर्ण ने पूरी उम्र दान की बातें कीं और दान भी किया, पर जब दुर्योधन के साथ अन्याय में वह खड़े हुए, तो समाज ने उन्हें 'अधर्मी' ही कहा. लफ्फाजी से एकाध बार सम्मान मिल जाता है. पर अब दुनिया बदल गयी है. कोई कुछ करके छिपा नहीं सकता.

तमाम तरह के वीडियो वायरल हो जाते है. इसलिए अब कर्मों और वचनों का फासला बहुत जल्दी ही पकड़ में आ जाता है. विदुर ने सदा धर्म की बातें कीं. पर जब तक वह धृतराष्ट्र के दरबार में अन्याय देखकर भी चुप रहे, लोग उन्हें 'बुद्धिमान पर कायर' कहते थे. जब उन्होंने कौरव-सभा त्याग दी और पांडवों के साथ खुले रूप से खड़े हो गये, तभी उन्हें सच्चा सम्मान मिला. आज के युग में भी हम यही देखते हैं. कोई नेता चुनाव में मीठी-मीठी बातें करता है, सत्ता में आकर भ्रष्टाचार करता है-पांच साल बाद लोग उसे गाली देते हैं. कोई अभिनेता सोशल मीडिया पर प्रेम, पर्यावरण, नारी-सम्मान की बातें करता है, पर निजी जीवन में हिंसा करता पकड़ा जाता है, तो उसकी इमेज चौपट हो जाती है.

कोई शिक्षक किताबी ज्ञान तो बहुत देता है, पर व्यक्तिगत आचरण खराब करता है, तो बच्चे उसे गुरु नहीं मानते. वहीं एक साधारण पुलिस वाला बिना कुछ बोले ईमानदारी से ड्यूटी करता है, तो लोग मरने के बाद भी उसकी मूर्ति लगाते हैं. संस्कृत में एक सुभाषित है : 'वाग्मिनः बहवो लोके निन्दिता धर्मवर्जिताः। एकः सत्यव्रती शूरः सर्वान् मे नातिवर्तते॥' इस संसार में मीठा बोलने वाले बहुत हैं, पर धर्मरहित होने से निंदित हैं. एक सत्यनिष्ठ और कर्मशील शूरवीर सबको पार कर जाता है. अतः चाहे गीता हो, चाणक्य हो, महाभारत हो या आज का इंस्टाग्राम-युग-संदेश एक ही है : बातें कितनी भी अच्छी कर लो, लोग तुम्हारे कर्म ही देखते हैं. इज्जत भी कर्म से मिलती है, अपमान भी कर्म से.

आपके पत्र

हाइब्रिड वाहन को मिले बढ़ावा

सर्दी में वायु प्रदूषण में वृद्धि राष्ट्रीय समस्या बन चुकी है. वाहनों एवं औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाला धुआं प्रदूषण को बढ़ाने का प्रमुख कारण है. प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए डीजल व पेट्रोल वाहन के स्थान पर सरकार को हाइब्रिड और इलेक्ट्रिक वाहनों के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करना चाहिए. विकसित देशों में इस तरह के वाहनों का प्रचलन अधिक है. प्रदूषण के कारण लोगों को कई जानलेवा बीमारियां हो रही हैं. सो, सड़कों पर सिर्फ हाइब्रिड और इलेक्ट्रिक वाहनों को ही अनुमति मिलनी चाहिए.

हिमांशु शेखर, गयाजी

जागरूकता अभियान चलाये सरकार

हाल ही में कानपुर में चार मजदूरों की सोते हुए मौत हो गयी, क्योंकि उन्होंने कमरे में अंगीठी जलाकर सोते समय दरवाजा-खिड़की बंद कर लिया था. कार्बन मोनोऑक्साइड गैस ने उनकी सांसें छीन लीं. यह कोई पहली घटना नहीं है, अंगीठी या कोयले की सिगड़ी से निकलने वाली यह अदृश्य गैस हर वर्ष सैकड़ों लोगों की जान ले लेती है. सरकार से अनुरोध है कि वह तंबाकू और गुटखे के दुष्प्रभाव को लेकर जिस तरह अभियान चलाती है, वैसा ही अभियान वह अंगीठी जलाकर सोने के दुष्प्रभाव पर भी चलाये.

वीरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

कानून के नियमों से ज्यादा, न्याय का असली सार उसकी भावना में है। -अर्ल वॉरेन

अमेरिका की अनुपस्थिति के बावजूद जी-20 सम्मेलन के दौरान और इससे इतर भी भारत समेत सदस्य देशों ने जैसी एकजुटता दिखाई, उससे संकेत मिलता है कि वैश्विक नेतृत्व अब एकध्रुवीय नहीं रहा। लेकिन दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था को भरोसे में लिए बगैर फैसलों को लागू करना आसान नहीं होगा।

संकेत, संदेश और जी-20

ऐसे वक्त में, जब अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के दक्षिण अफ्रीका में आयोजित जी-20 शिखर सम्मेलन में शामिल न होने के निर्णय के बाद इसके भविष्य को लेकर तमाम तरह की अटकलें लगाई जा रही थीं, तब सम्मेलन की शुरुआत में ही सदस्य देशों ने संयुक्त घोषणापत्र को सर्वसम्मति से जारी कर एक सशक्त संदेश दिया है। सम्मेलन के दौरान और इससे इतर भी भारत समेत सदस्य देशों ने जैसी एकजुटता दिखाई, उससे यह संकेत भी मिला कि वैश्विक नेतृत्व अब एकध्रुवीय नहीं रहा है। इस दौरान, इब्सा (भारत, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका) नेताओं की बैठक के दौरान प्रधानमंत्री मोदी, दक्षिण अफ्रीकी राष्ट्रपति सिरिल रामफोसा और ब्राजीली राष्ट्रपति लूला दा सिल्वा के बीच संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार और रक्षा सहयोग पर महत्वपूर्ण वार्ता हुई। शिखर सम्मेलन से इतर भारत, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा के बीच उभरती हुई तकनीकों में सहयोग को लेकर बेहद महत्वपूर्ण समझौता हुआ, जो आपूर्ति शृंखलाओं में विविधीकरण और स्वच्छ ऊर्जा व एआई को व्यापक रूप से अपनाने में मदद करेगा। यह पहली ही बार है, जब अफ्रीका महाद्वीप में यह सम्मेलन हो रहा है, तो इसका श्रेय भारत को ही जाता है, क्योंकि 2023 में भारत की अध्यक्षता वाले जी-20 सम्मेलन में ही अफ्रीकी संघ इस संगठन का सदस्य बना था, जिसे विकासशील देशों के सशक्तीकरण की दिशा में एक बड़ा कदम माना गया था। सम्मेलन की शुरुआत में प्रधानमंत्री मोदी ने वैश्विक आतंकवाद और नशीले पदार्थों के नेटवर्क की कमर तोड़ने के लिए महत्वपूर्ण सुझाव दिए, तो सम्मेलन के तीसरे सत्र में उन्होंने एआई के दुरुपयोग को रोकने के लिए वैश्विक समझौते का आह्वान किया, जो वर्तमान में डीपफेक, अपराध और आतंकी गतिविधियों में एआई के इस्तेमाल को रोकने की दृष्टि से बेहद अहम है। उन्होंने अपने संबोधन में प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन पर जो चिंता जताई, उसका जी-20 घोषणा पत्र में जगह पाना उसकी वैश्विक स्वीकारोक्ति को दर्शाता है, जो महत्वपूर्ण इसलिए है, क्योंकि अब तक जलवायु मुद्दों पर प्रतिबद्धता अक्सर अस्पष्ट और टालमटोल वाली ही रही है। अमेरिका की अनुपस्थिति ने शिखर सम्मेलन की प्रभावशीलता पर प्रश्नचिह्न लगाए हैं। जाहिर है, दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था को भरोसे में लिए बगैर फैसलों को लागू करना आसान नहीं होगा। लेकिन इसी स्थिति ने भारत सहित वैश्विक दक्षिण को यह अवसर भी दिया कि वे विकास और संतुलन पर खुलकर अपना दृष्टिकोण पेश कर सकें। प्रधानमंत्री मोदी द्वारा समग्र मानववाद के विचार को वैश्विक विमर्श के केंद्र में लाना उस वैकल्पिक विकास मॉडल की ओर भी संकेत करता है, जिसकी आज दुनिया को सबसे अधिक आवश्यकता है।

दशकों बाद मजदूरों के हित की बात

केंद्र ने नए श्रम कानूनों को लागू करने का फैसला लिया है, जिनमें वेतन, औद्योगिक संबंध, सामाजिक व व्यावसायिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी चार कानून हैं। हालांकि इन्हें लागू करने में कई चुनौतियां हैं, लेकिन अगर किए गए वादे जमीनी स्तर पर पूरे हो जाएं, तो विकसित भारत का सपना साकार हो सकता है।

विराग गुप्ता
सुप्रीम कोर्ट के वकील

अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप ने जब टैरिफ बढ़ाया, तो भारत ने जीएसटी सुधारों के माध्यम से उसका भरपूर मुकाबला किया। बिहार चुनावों में प्रवासी मजदूर, औद्योगिकीकरण और रोजगार बड़ा मुद्दा था। भारी चुनावी जीत के बाद केंद्र सरकार ने पहले से पारित श्रम कानूनों को लागू करने का फैसला लिया है। श्रम संहिता में वेतन, औद्योगिक संबंध, सामाजिक सुरक्षा और व्यावसायिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी चार कानून हैं।

दूसरे राष्ट्रीय आयोग ने वर्ष 1999 की रिपोर्ट में कहा था कि पुराने कानूनों में इतनी जटिलता और विरोधाभास है कि सभी को लागू करने पर 20 फीसदी कानूनी प्रावधानों का उल्लंघन हो सकता है। 29 मौजूदा श्रम कानूनों को मिलाकर चार नए कानून बनाने से 1,228 कानून घटकर 480, नियम 1,436 से घटकर 351 और रजिस्टरों की संख्या 84 से घटकर 8 हो जाएगी। रजिस्ट्रेशन के लिए सिर्फ एक कानून और 65 प्रावधानों में अपराध के पहलू को खत्म करना भी उद्योग जगत के हित में होगा। कहा जा रहा है कि नए कानून से 40 करोड़ श्रमिकों और कामगारों को नियुक्ति पत्र और न्यूनतम मजदूरी, महिलाओं को बराबर वेतन, ग्रेच्युटी, फ्री मेडिकल चेकअप जैसी सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा मिलेगी। इससे पिछड़े और गरीब राज्यों में औद्योगिकीकरण बढ़ेगा और वहां से मजदूरों का पलायन भी कम होगा।

वर्ष 2023-24 के लेबर सर्वे के अनुसार, कुल श्रमिकों में सिर्फ 11 फीसदी ही 20 से ज्यादा श्रमिकों वाले बड़े उद्योगों में काम करते हैं। ई-श्रम पोर्टल में 30.48 करोड़ कामगारों का रजिस्ट्रेशन है, जिनमें लगभग 53 फीसदी कृषि क्षेत्र में हैं। अंतरराष्ट्रीय श्रमिक संगठन के अनुसार, भारत में हर 10 में से 9 श्रमिकों का रोजगार अस्थायी होने से अर्थव्यवस्था के सामने बड़ी चुनौती है। एनएचआरसी सर्वे के अनुसार, शोषण और अनियमित काम के चलते असंगठित क्षेत्र के दो-तिहाई कामगार बीमारी और अपमान झेलने को मजबूर हैं। *द हिंदू* की रिपोर्ट के अनुसार, मनरेगा के 26 करोड़ जॉब कार्ड होल्डरों में से 41.1 फीसदी आधार भुगतान प्रणाली से नहीं जुड़ पाए हैं। इस वजह से 2.13 करोड़ लोगों को काम के बावजूद मजदूरी नहीं मिल पा रही। इन कानूनों की सफलता की पहली कसौटी यह होगी कि देश भर में मनरेगा कर्मियों को नियमित और न्यूनतम वेतन मिल सके।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने बिहार में नील की खेती करने वाले निलहे मजदूरों की दुर्दशा की ओर दुनिया का ध्यान आकर्षित किया था। निलहे मजदूरों की तरह डिजिटल इकनॉमी में गिग वर्कर्स या दिहाड़ी कामगारों का शोषण हो रहा है। अमेजन, ओला, उबर, जोमैटो, डंजो, स्विगी और बिग बास्केट जैसी कंपनियों से जुड़े ड्राइवर, डिलीवरी बॉय और कामगारों को गिग वर्कर कहा जाता है। नीति आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2021 में भारत में 77 लाख गिग वर्कर्स थे, जिनकी संख्या 2029 तक बढ़कर 2.35 करोड़ होने की संभावना है।

अमेजन के वेयरहाउस कामगारों ने ब्लैक फ्राइडे हड़ताल करके 'मेक अमेजन पे' के बैनर तले सही भुगतान और काम के अच्छे वातावरण की मांग की थी। काम के अनियमित घंटों और शोषण की वजह से गिग वर्कर्स में महिलाओं की भागीदारी बहुत कम है। ड्राइवर और डिलीवरी बॉय का जमकर शोषण करने के बावजूद कंपनियां उन्हें न्यूनतम वेतन भी नहीं देना चाहती हैं। इंग्लैंड के रोजगार ट्रिब्यूनल ने 2016 में उबर के ड्राइवरों को पूर्णकालिक कामगार का दर्जा दिया था। यूरोपीय संघ की कोर्ट ऑफ जस्टिस ने 2017 में कहा था कि उबर को एग्रीगेटर के बजाय ट्रांसपोर्ट सेवा के तौर पर कानून का पालन करना चाहिए। सिंगापुर में गिग वर्कर्स को रिटायरमेंट बेनेफिट और इंडोनेशिया में दुर्घटना, स्वास्थ्य और जीवन बीमा की सुविधा मिलती है।

भारत में टेक कंपनियां आईडी कार्ड ब्लॉक करके गिग कामगारों को मिनटों में बर्खास्त कर देती हैं। गिग वर्कर्स की सुरक्षा के लिए सुप्रीम कोर्ट में 2020 में दायर याचिका पर चार साल तक जवाब नहीं मिलने पर जजों ने केंद्र सरकार को फटकार लगाई थी। जजों के अनुसार, भारत अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन का संस्थापक देश है, इसलिए गिग वर्कर्स को एग्रीगेटर कंपनी से न्यूनतम वेतन, दुर्घटना बीमा, ईएसआई, स्वास्थ्य और पीएफ जैसी कानूनी सुरक्षा मिलनी चाहिए। जी-20 के सम्मेलन में गिग वर्कर्स की सुरक्षा के लिए बयान जारी हुआ था। इन कानूनों में गिग कामगारों को परिभाषित करने के साथ ही उन्हें सामाजिक सुरक्षा के दायरे में लाया गया है। टेक कंपनियों को भारत में सालाना कमाई का पांच फीसदी तक गिग वर्कर्स के कल्याण के लिए सुरक्षित करना पड़ेगा। आधार लिंक्ड यूएएन से लाभ मिलने से फर्जीवाड़ा भी कम होगा।

बजट भाषण में वित्त मंत्री ने कहा था कि ई-श्रम पोर्टल को मनरेगा, नेशनल कॅरिअर सर्विस, स्किल इंडिया, प्रधानमंत्री आवास योजना, श्रमयोगी मानधन जैसे दूसरे पोर्टल्स से जोड़कर वन स्टॉप सेंटर बनाया जाएगा। नए कानूनों के साथ इसे लागू किया जाए, तो गिग वर्कर्स को राहत मिलेगी। राजस्थान, कर्नाटक और तेलंगाना में कांग्रेस की सरकारों ने गिग वर्कर्स को राहत देने के लिए कानून बनाने की प्रक्रिया शुरू की थी। गिग वर्कर्स के कल्याण से जुड़े इन प्रगतिशील और समावेशी कानूनी सुधारों का सियासी विरोध ठीक नहीं होगा।

देश के 18 राज्यों ने पांच साल पहले पारित श्रम कानूनों के अनुसार नियम बना दिए हैं। अन्य राज्यों में नियम बनाने के साथ पूरे देश में इन्हें लागू करने के लिए विशेष फंड भी चाहिए। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि इन कानून को लागू करने के नाम पर राज्यों में इंस्पेक्टर राज न बढ़ जाए। कृषि कानून की तरह श्रम कानून पटरी से न उतरे, उसके लिए केंद्र सरकार को ट्रेड यूनियंस के साथ सभी पार्टियों से भरोसेमंद संवाद करना होगा। प्रथम विश्वयुद्ध और आर्थिक मंदी के बाद भारत में श्रम कानून को बड़े पैमाने पर लागू किया गया था। एआई के नए दौर में रोजगार के कम होते अवसरों के बीच नई श्रम संहिता को लागू करने में अनेक चुनौतियां हैं। नई श्रम संहिता लागू करने के लिए किए गए वादे जमीनी स्तर पर पूरे हो जाएं, तो विकसित भारत का सपना साकार हो सकता है।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

ओशो

जानवर का बच्चा जब पैदा होता है, तो उसको वहीं से जिंदगी शुरू करनी पड़ती है, जहां से उसके बाप ने शुरू की थी। लेकिन आदमी अपने बच्चे को वहां से जिंदगी शुरू करा सकता है, जहां खुद समाप्त करता है।

पीढ़ियों से मिला ज्ञान ही हमारी ताकत है

यह तृतीय नेत्र की अनूठी संपदा है। उसके लिए सिर्फ सिंबालिक तिलक है। जब यहां दक्षिण में पहली दफा ईसाई फकीर आए, तो उनमें से कुछ ने आकर तिलक लगाना शुरू कर दिया। आज से एक हजार साल पहले वेटिकन की अदालत में मुकदमे की नौबत आ गई, क्योंकि यहां जिन ईसाई फकीरों को भेजा गया था, उन्होंने यहां आकर जनेऊ पहन लिया, और तिलक भी लगाया, तथा खड़ाऊं भी डाल ली, और वे हिंदू संन्यासी की तरह रहने लगे।

जिन फकीरों ने यह किया था, उन्होंने कहा कि यह गलत नहीं है। तिलक लगाने से या इस खड़ाऊं को पहन कर हम हिंदू नहीं हो रहे हैं। यह तो हमें पहली दफा हिंदुओं की समझ का पता चला है कि ध्यान करते वक्त अगर लकड़ी पैर के नीचे हो, तो बिना लकड़ी के जो काम महीनों में होगा, वह लकड़ी के साथ दिनों में हो सकता है। अगर हिंदू कुछ जानते हैं, तो हम नासमझ होंगे कि हम उसका उपयोग न करें। उन्होंने कहा कि बीस हजार साल से जिसके सारे मनीषी पूरा जीवन लगा कर एक ही दिशा में काम करते रहे हों, जिसके सारे बुद्धिमानों की हजारों वर्षों से एक ही आकांक्षा रही हो कि किस भांति संसार में जो छिपा हुआ सत्य है, उसका पता चल जाए, वह जो अदृश्य है, वह दिखाई पड़ जाए, उसकी उपेक्षा करना बुद्धिमानी नहीं है। लेकिन पिछले दो सौ साल में एक घटना घटी, जिससे हमें परेशानी हुई है। इस देश के ऊपर सैकड़ों बार हमले हुए हैं, लेकिन कोई हमलावर ठीक जगह पर हमला नहीं कर पाया। किसी ने धन लूट लिया, किसी ने जमीन पर कब्जा कर लिया, किसी ने मकान और महल ले लिए। लेकिन ठीक जो हमारा अंतस्तल था, उस पर कोई हमला नहीं कर पाया। पहली बार पश्चिमी सभ्यता ने इस मुल्क के अंतस्तल पर चोट करनी शुरू की। और वह चोट करने का जो सुगमतम उपाय था, वह यह था कि आपके इतिहास में और आपके बीच में एक खाई पैदा कर दी जाए। फिर आपकी कोई ताकत न रह जाएगी। अगर आज पश्चिम की सभ्यता को नष्ट करना हो, तो पश्चिम के पांच विश्वविद्यालयों को नष्ट कर दिया जाए, पश्चिम की संस्कृति नष्ट हो जाएगी। क्योंकि दुनिया में असली जो आधार होता है संस्कृति का, वह उसके ज्ञान के सूत्र होते हैं। उसकी जड़ें होती हैं शृंखला में। ज्यादा देर की जरूरत नहीं है, सिर्फ दो पीढ़ी को इतिहास से वंचित कर दिया जाए, आगे का मामला टूट जाएगा। आदमी और जानवर में एक फर्क है। जानवर के पास कोई उपाय नहीं है कि अपनी नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी का ज्ञान दे सके, बस और कोई बात नहीं है। जानवर का बच्चा जब पैदा होता है, तो उसको वहीं से जिंदगी शुरू करनी पड़ती है, जहां से उसके बाप ने शुरू की थी। जब उसका भी बच्चा पैदा होगा, वह भी वहीं शुरू करेगा, जहां उसने शुरू की है। उसे अपनी पुरानी पीढ़ी का ज्ञान नहीं मिलेगा। लेकिन आदमी शिक्षा के माध्यम से अपने बच्चे को वहां से जिंदगी शुरू करवा सकता है, जहां खुद समाप्त करता है। इसलिए विकास होता है।

-गहरे पानी पैठ (मैं कहता आंखन देखी)

भीतर का बर्तन खाली रखें

सूत्र

ज्ञान कहीं से भी मिले, उसका सम्मान करें, उससे सीखें और अपने जीवन में उतारें। जानवर यह नहीं कर सकते, लेकिन आप इन्सान हैं, तो इस जीवन से जुड़े मूल्यों को समझें। जीवन के अनुभवों से सीखने के अलावा भी कई माध्यमों से आप सीख सकते हैं। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि आप अपने भीतर का बर्तन खाली रखें।

दूसरा पहलू

आईएसएस सबसे विशाल, जटिल, महंगा और सबसे लंबे समय तक संचालित रहने वाला अंतरिक्ष यान है।

पच्चीस साल से अंतरिक्ष में घूमती प्रयोगशाला

जस्टिन सेंट पी. वॉल्श

अब तक 26 देशों के 290 लोग वहां जा चुके हैं। कुल अंतरिक्ष यात्रियों में से 40 फीसदी से ज्यादा ने इसकी दहलीज पार की है।

यहां खगोल विज्ञान, भौतिकी, पौधों की वृद्धि, चालक दल के स्वास्थ्य और अन्य विषयों पर लगभग 200 उन्नत सुविधाओं के जरिये हजारों वैज्ञानिक अध्ययन हुए हैं।

अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (आईएसएस) आधुनिक विज्ञान की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक है। यह अब तक बनाया गया सबसे विशाल, जटिल, महंगा और सबसे लंबे समय तक संचालित रहने वाला अंतरिक्ष यान है। इसके शुरुआती मॉड्यूल 1998 में भेजे गए और पहला दल साल 2000 में पहुंचा। हाल ही में, इसने मानव उपस्थिति के लगातार 25 वर्ष पूरे किए। अब तक 26 देशों के 290 लोग वहां जा चुके हैं। अंतरिक्ष में गए कुल मनुष्यों में 40 फीसदी से अधिक ने आईएसएस की दहलीज पार की है। यहां खगोल विज्ञान, भौतिकी, पौधों की वृद्धि, चालक दल के स्वास्थ्य और अन्य विषयों पर लगभग 200 उन्नत सुविधाओं के जरिये हजारों वैज्ञानिक अध्ययन हुए हैं। अंतरिक्ष पर्यटन की शुरुआत भी यहीं से हुई। अंतरिक्ष यात्रियों ने यहां लगभग 127 व्यक्ति-वर्ष का गहन अनुभव हासिल किया है।

अगर आपने कभी आईएसएस के अंदर की तस्वीरें देखी होंगी, तो उसकी अव्यवस्थित-सी दिखने वाली दुनिया जरूर आपकी नजर में आई होगी-जैसे हर ओर फैले केबल, भरे हुए गलियारे, न कोई शॉवर, न खाना पकाने की जगह, न ही खाली समय में बैठने का कोई ठिकाना। नवंबर 2025 मेरे और मेरे शोध दल की इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन आर्कियोलॉजिकल प्रोजेक्ट की दसवीं वर्षगांठ भी है। अंतरिक्ष स्टेशन ने हमारे जैसे पुरातत्वविदों को अध्ययन का एक अनोखा अवसर दिया। हमें महसूस हुआ कि अंतरिक्ष जीवन के सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर बहुत कम शोध हुआ है। हमारा लक्ष्य था कि मंगल जैसे तीन-वर्षीय मिशन की तैयारी कर रही अंतरिक्ष एजेंसियों को दिखाया जाए कि वे किन बातों को नजरअंदाज कर रही हैं। हम केवल अंतरिक्ष यात्रियों की बातचीत पर निर्भर नहीं रहना चाहते थे, क्योंकि कई अनुभव वे खुलकर व्यक्त नहीं करते। इसलिए हमने वस्तुओं और स्थानों के प्रयोग के अवशेषों को आधार बनाया। चूंकि, हम स्टेशन पर जा नहीं सकते थे, इसलिए नासा द्वारा जारी की गई हजारों तस्वीरें हमारा प्रमुख साधन बनीं। इससे हमें पता चला कि चालक दल पृथ्वी पर रहने वाले लोगों की तरह ही स्टेशन की दीवारों को सजाता है, जन्मदिन केक बनाता है और विशेष खाद्य पदार्थों का आनंद लेता है।

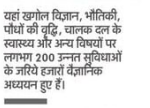

आईएसएस के अंतरराष्ट्रीय स्वरूप के बावजूद, इसके अधिकांश हिस्से राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा नियंत्रित हैं, क्योंकि वे अपने करदाताओं के प्रति जवाबदेह हैं। हमारा अध्ययन बताता है कि उपकरणों का उपयोग समय के साथ कैसे बदलता है। यह भविष्य के व्यावसायिक अंतरिक्ष स्टेशनों के डिजाइन के लिए बेहद जरूरी है। ऐसे अध्ययन पृथ्वी की समकालीन चुनौतियों को समझने में भी सहायक हो सकते हैं। - द कन्वर्सेशन

आंकड़े

जलवायु रिपोर्ट कार्ड

पिछले साल जलवायु परिवर्तन से निपटने के मामले में शीर्ष तीन स्थान रिक्त रहे, जबकि भारत 13वें से 23वें स्थान पर पहुंच गया।

डेनमार्क	04
यूनाइटेड किंगडम	05
मोरक्को	06
चिली	07
लक्जमबर्ग	08

आंकड़े जलवायु परिवर्तन से निपटने वाले शीर्ष देशों के | स्रोत : सीसीपीआई रैंकिंग-2026 (जर्मनवॉच)

भक्त कन्नप्पा शिवलिंग के नेत्र से बहते रक्त को रोकने के लिए अपनी दूसरी आंख निकालने ही जा रहे थे, तभी भोलेनाथ प्रकट हुए और उन्हें गले से लगा लिया।

भक्त की अनुपम भक्ति

अंतर्यात्रा
संकलित

कन्नप्पा शैव संप्रदाय के 63 नयनार संतों में से एक थे। उनका जन्म एक शिकारी परिवार में हुआ था। उनका मूल नाम था थिन्नन। भक्ति के कारण उन्हें कन्नप्पा नाम मिला। वह एक कुशल शिकारी थे, पर रीति-रिवाजों से अनभिज्ञ थे। फिर भी भगवान शिव उनके हृदय में बसते थे। हर रोज शिकार के बाद वह शिवलिंग पर मांस चढ़ाते, मुंह में नदी का जल भरकर उससे अभिषेक करते।

एक दिन भोलेनाथ ने अपने भक्त की परीक्षा लेना चाहा। मंदिर में भयंकर भूकंप आया, छत गिरने लगी। हर कोई भागने लगा, किंतु कन्नप्पा ने शिवलिंग को अपनी पीठ से ढक लिया। तभी उन्होंने देखा कि शिवलिंग की दाहिनी आंख से रक्त बह रहा है। व्याकुल होकर कन्नप्पा ने अपना तीर निकाला और बिना संकोच के अपनी दाहिनी आंख निकालकर शिवलिंग पर लगा दी। रक्त बहना रुक गया। फिर बाईं आंख से भी खून बहने लगा। उन्हें लगा कि दोनों आंखें गंवाने पर अंधे हो जाने के बाद दूसरी आंख सही जगह कैसे लगेगी? इसलिए उन्होंने अपना दाहिना पैर शिवलिंग की बाईं आंख पर रखा और अपनी आंख निकालने लगे।

यह अनुपम भक्ति देखकर भगवान शिव प्रकट हुए और बोले, 'कन्नप्पा! ठहर जा।' उन्होंने कन्नप्पा को गले लगाया, आंखें लौटाईं और आशीर्वाद दिया। उसी क्षण कन्नप्पा शिव में लीन हो मोक्ष को प्राप्त हुए। इसी कारण हिंदू परंपरा में कन्नप्पा को प्रथम 'नेत्रदाता' माना जाता है।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 24 नवंबर, 1951

सभी कार्यों को शांतिपूर्ण तरीकों से करने में ही शान

हमारी शान सभी कार्य शांतिपूर्ण तरीकों से करने में

लोकसभा में मुंबई के दंगों पर बयान देते हुए गृह मंत्री गोविंद वल्लभ पंत बोले, 'हमारी शान सभी कार्य शांतिपूर्ण तरीकों से करने में है। जनता का यह कर्तव्य है कि वह ऐसा कार्य न करे, जिससे देश का नाम बदनाम हो।'

साधन तो सही ही अपनाने पड़ेंगे

अहिंसक समाज के निर्माण के लिए दुनिया भर में हिंसक हो रही जनता को अपने साध्य की पूर्ति के लिए सही साधन अपनाने होंगे।

संदीप जोशी
मुद्दा

कहा जाता है कि एक चित्र हजार से ज्यादा शब्द को समेटने का माद्दा रखता है। लेख के साथ दिया गया चित्र मेक्सिको का है। मेक्सिको सिटी में सरकार की नीति के विरोध में चल रहे प्रदर्शन का चित्र। आधुनिक सभ्यता विकास को सभी के लिए समाज के सामने भी लाता है। गंभीर स्थितियों में ऐसे चित्र ही समाज में चल रहे आंतरिक संघर्ष को दर्शाते हैं। अनेक देशों में सत्ता व जनता के बीच चल रहे द्वंद्व या विरोध के कई स्थानीय कारण हो सकते हैं।

ऐसे चित्र आजकल हर देश में खींचे जा रहे हैं, जो रातोंरात सोशल मीडिया के जरिये दुनिया भर में फैल जाते हैं। ये आक्रोश व हिंसा के प्रसार में लगे नजर आते हैं। जबकि सभी जानते-मानते हैं कि इन चित्रों में इन देशों की सारी जनता शामिल नहीं है। इसलिए चित्र के जरिये साधन-साध्य के सिद्धांत पर भी सोच-समझ बननी चाहिए। क्या आधुनिक सभ्यता व्यावहारिक विकास को अपनाना जानती है? या यह सिर्फ पूंजीवाद और सत्ता कुछ ही हाथों में संचित होती पूंजी के कारण हैं?

महात्मा गांधी ने साधन-साध्य के सिद्धांत को अपने के प्रयोग से समाज के लिए परोसा था। उन्होंने माना था कि जीवन के हर पहलू में साधन-साध्य के सिद्धांत से मानवता का वैचारिक व व्यावहारिक विकास हो सकता है। इस सिद्धांत को गांधी जी ने विचार के लिए विस्तार से *हिंद स्वराज* में दर्शाया है। समाज जो साधन सत्ता के प्रति अपने विरोध को दर्शाने के लिए अपनाता है, वही साधन समाज का विरोध रोकने के लिए सत्ता को भी मिलता है। अगर सत्ता पर समाज की सुरक्षा का उत्तरदायित्व रहता है, तो समाज को साध्य पाने के सही साधन भी समझने, अपनाने होंगे। क्योंकि जनता ही सेवा के लिए अपनी सरकार चुनती है या चुने गए व्यक्ति को सत्ता सौंपती है। इसलिए समाज को अपना साध्य पाने के लिए सही साधन भी चुनना सीखना होगा। इसके अलावा, उसे निःस्वार्थ साधन भी अपनाने होंगे।

अपनी प्रगति या विकास के लिए जनता जो साधन अपनाती है, वैसे ही साधन, ज्यादा तंत्र-संपन्न सत्ता को भी अपनाने का अधिकार मिलता है। यानी अगर जनता ऊपर के चित्र के अनुसार हथौड़ा, डंडा व पत्थर उठाकर उपयोग में लेती है, तो सत्ता को भी लाठी, आंसू-गैस गोले व बंदूक के उपयोग से रोका नहीं जा सकता। और ऐसे ही अगर हम अपनी सामाजिक संस्थाओं का दुरुपयोग करते हैं, तो सरकारी संस्थाओं के दुरुपयोग को रोक नहीं सकते।

आज सभी सरकारी संस्थाएं सत्ता के ही काम के लिए जुटी हैं, तो ऐसा इसलिए कि समाज ने ही लंबे समय से यह होने दिया होगा। हमने ही अपने लोकतंत्र के चार स्तंभ- विधायिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका के साथ-साथ मीडिया को भी सत्ता का साधन बनने दिया है। इसलिए लोकतंत्र के बुनियादी आधार, चुनावों में अपने साध्य के लिए जो साधन हम अपनाते हैं, वही साधन सत्ता को उसका साध्य हासिल करने की स्वतंत्रता देता है।

आचार्य विनोबा जी ने 'गीता प्रवचन' में एक जगह जीवन की व्याख्या को 'संस्कार-संचय' भर माना है। यानी हम बचपन से बुढ़ापे तक सिर्फ अपने संस्कार गढ़ते रहते हैं, जो अंत तक साधन-साध्य के सिद्धांत के रूप में हमारे उपयोग आते हैं। इसलिए समाज को ही कोशिश करनी होगी कि हमारे संस्कार साधन-साध्य सिद्धांत की समझ से ही गढ़े जाएं। जनता के पैसे से ही जनता को सत्ता द्वारा भरमाने के भ्रम को समाज समझे। और सर्वोदय साध्य को ही पाने में समाज लगे। जनता द्वारा साध्य को हिंसा से पाने की कोशिशें कैसे सत्ता की प्रतिहिंसा का शिकार होती हैं, यह हम सभी ने श्रीलंका, नेपाल, बांग्लादेश के अलावा मेक्सिको तक के देशों में हो रहे विरोध प्रदर्शनों से देख-समझ लिया है। विरोध में की गई समाज की हिंसा, सत्ता के लिए प्रतिहिंसा का कारण बनती है। जनता अगर अपने साधन अहिंसक रखे, तभी समाज में सौहार्द बना रह सकता है।

'मेरे गांधी' में नारायण देसाई ने समझाया है कि गांधी जी खुद को व्यावहारिक आदर्शवादी मानते थे। साधन की शुचिता पर उनके जोर देने के पीछे सबसे बड़ा तकाजा व्यावहारिक था। वह समझते थे कि साध्य बहुत-सी बातों पर निर्भर करता है, जो हमारे नियंत्रण से बाहर होती हैं। असल में साधन ही वह चीज है, जिसे कोई खुद चुन सकता है। गांधी जी ने लिखा भी कि हमेशा साधनों पर ही हमारा नियंत्रण हो सकता है, साध्य पर नहीं। इसलिए हिंसक हो रही जनता को अहिंसक समाज के निर्माण के लिए सही साधन से अच्छे साध्य पाने में ही लगना होगा।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

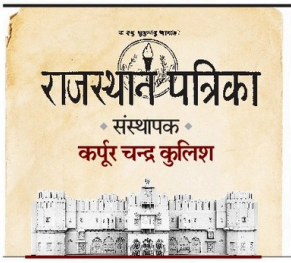

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। –वाल्तेयर

डिजिटल प्रदूषण से निपटने के लिए सख्त कदम जरूरी

डिजिटल प्रदूषण हमारे सामाजिक ताने-बाने पर चोट करने वाली बड़ी समस्या साबित होता जा रहा है। ओवर-द-टॉप (ओटीटी) प्लेटफॉर्म व अन्य डिजिटल माध्यमों के जरिए हिंसक, अश्लील, भड़काऊ व मानहानिकारक सामग्री जिस तरह से परोसी जा रही है वह सभी के लिए चिंता का सबब बनी है। देश के सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश के बाद केंद्र सरकार ने अब ऐसी डिजिटल सामग्री के प्रसारण पर पाबंदी लगाने की जो तैयारी की है वह स्वागत योग्य है। ओटीटी प्लेटफॉर्म और सोशल मीडिया पर आपत्तिजनक सामग्री जिस तरह से प्रसारित होने लगी है उसे देखते हुए सख्त नियम-कायदे बनाने की लंबे समय से जरूरत महसूस की जा रही है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि विभिन्न डिजिटल माध्यमों के जरिए लोगों की सोच-समझ, संवाद और संपर्क का दायरा बढ़ा है। सोशल मीडिया अभिव्यक्ति का बड़ा माध्यम भी बना है। लेकिन इसके जरिए परोसे जा रहे आपत्तिजनक कंटेंट के खतरे भी हजार हैं। सिनेमा व टीवी चैनलों पर पहले ही हिंसा, अपराध और अनैतिकता फैलाने के आरोप लगते रहे हैं। अब सोशल मीडिया मंचों पर ऐसे कंटेंट की भरमार है जो समुचित नियंत्रण के अभाव में बढ़ते ही जा रहे हैं। डिजिटल प्रदूषण का सबसे बड़ा दुष्प्रभाव यह है कि यह सामाजिक मानस को भीतर ही भीतर दूषित कर रहा है। हिंसक और अश्लील सामग्री बच्चों और किशोरों की सोच को विकृत कर रही है, जबकि भड़काऊ और झूठी सूचनाएं समाज में अविश्वास, तनाव और ध्रुवीकरण को बढ़ा देती हैं। लगातार ऐसे कंटेंट के संपर्क में रहने से संवेदनशीलता कम होती है, आक्रामकता बढ़ती है और सामाजिक संवाद हिंसा तथा उग्रता में बदलने लगता है। डिजिटल माध्यमों की अनियंत्रित सामग्री मानसिक स्वास्थ्य पर भी गंभीर असर छोड़ती है- अनिद्रा, चिंता, अकेलापन और अवसाद की शिकायतें तेजी से बढ़ी हैं। जाहिर है समाज को सूचनाओं से जोड़े रखने के साथ ज्यादा जरूरी यह है कि अहितकारी सूचनाओं को उस तक पहुंचने से रोका जाए। चिंता इस बात की भी है कि ओटीटी प्लेटफॉर्म व सोशल मीडिया कंपनियां हिंसा और अपराध को बढ़ावा देने वाली सामग्री से किनारा करती नजर आती हैं। सरकार को नियम-कायदे तो सख्त करने ही होंगे, साथ ही उसे अपने निगरानी तंत्र को इस तरह विकसित करना चाहिए कि अवांछित सामग्री अपलोड ही नहीं की जा सके। जरूरी यह भी है कि जो सामग्री पहले से अपलोड हैं, उनकी पड़ताल कर फौरन हटा दी जाएं।

स्कूलों व अभिभावकों को डिजिटल साक्षरता बढ़ाने पर जोर देना होगा ताकि बच्चे हानिकारक सामग्री से खुद को बचा सकें। सरकार को एक ऐसी मजबूत शिकायत प्रणाली विकसित करनी चाहिए जिसमें आपत्तिजनक सामग्री की रिपोर्टिंग और कार्रवाई सुनिश्चित हो सके। समाज, सरकार और डिजिटल कंपनियां- सभी मिलकर इस प्रदूषण को कम करने में सफल हो सकते हैं।

नन्हे मन का मौन: मासूमों के भीतर पनपते असहनीय दर्द को समझने में आखिर हम नाकाम क्यों हो रहे हैं?

बच्चों में आत्महत्या के विचारों का अनकहा सच

डॉ. ऋतु सारस्वत
समाजशास्त्री एवं स्तंभकार
@patrika.com

छोटे बच्चे अपने दर्द को भाषा नहीं दे पाते; वे चुप्पी ओढ़ लेते हैं। यह चुप्पी ही उनकी सबसे कड़ी पुकार होती है। परंतु परिवार और समाज प्रायः इस चुप्पी को 'जिद', 'आदत', 'बहाना' या 'शरारत' समझकर टाल देता है। यही वह क्षण है जहां से बच्चे का मन धीरे-धीरे टूटने लगता है।

बीते दिनों जयपुर के निजी स्कूल की चौथी कक्षा की छात्रा की आत्महत्या की घटना से विचलित हृदय अभी संभले भी नहीं थे कि कुछ अन्य बच्चों की भी अपनी जीवनलीला समाप्त करने की खबरें सामने आईं। यह देश का दुर्भाग्य है कि तमाम आर्थिक प्रगतियों के बीच हम नन्हे बच्चों के भीतर पनपते असहनीय दर्द को समझने में नाकाम रहे हैं। इतनी कम उम्र में बच्चे आत्महत्या जैसा कठोर निर्णय कैसे ले लेते हैं- इस प्रश्न पर विचार करना सहज नहीं परंतु आवश्यक जरूर है। यकीनन उन तमाम पहलुओं पर चर्चा करना आवश्यक हो जाता है, जिससे पता चले कि बच्चे जिनकी उम्र खेल, जिज्ञासा और सपनों की होती है, वे इस दुनिया से स्वयं को अलग करने के बारे में सोचते भी कैसे हैं?

हमें स्वीकारना ही होगा कि हम अपने बच्चों के मन को समझ नहीं पा रहे हैं उनकी भावनाओं को अपने जीवन की जद्दोजहद में अनदेखा करते चले जा रहे हैं और यही कारण है कि उनकी चुप्पी हमारी संवेदनशीलता के शब्दकोश में कहीं जगह नहीं रखती। दुनियाभर के शोध बताते हैं कि बच्चे मृत्यु को वयस्कों की तरह स्थायी घटना नहीं मानते। सात से दस वर्ष की उम्र में 'मृत्यु' उनके लिए किसी गहरी पीड़ा से बचने का रास्ता, किसी बड़ी डांट या असफलता से निकलने का उपाय या किसी असहनीय दबाव से छुटकारा पाने जैसा प्रतीत हो सकती है, वे यह नहीं समझते कि यह निर्णय जीवन के सभी रास्ते बंद कर देता है। यही अधूरी समझ खतरे का सबसे बड़ा कारण बनती है। अमरीकन एकेडमी ऑफ पीडियाट्रिक्स ने पिछले वर्षों में यह गंभीर चेतावनी दी है कि बच्चों में आत्मघाती विचारों की दर बढ़ रही है और विद्यालयों तथा चिकित्सकीय संस्थानों में प्रारम्भिक जांच, भावनात्मक मूल्यांकन और मानसिक स्वास्थ्य सहायता को अनिवार्य किया जाना चाहिए। यह चेतावनी इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह दिखाती है कि प्राथमिक कक्षाओं तक में आत्महत्या का जोखिम अब असामान्य नहीं रहा। समाज इसे स्वीकारना चाहे या नहीं, यह खतरा आज हमारे ही घरों में, हमारे विद्यालयों में और हमारे बच्चों के मन में मौजूद है।

जापान में किए गए अनेक अध्ययनों में यह पाया गया है कि 10 से 12 वर्ष की आयु में विद्यालयी दबाव, परीक्षा-आधारित तनाव, साथियों द्वारा अस्वीकृति, समूह से अलगाव और लगातार तुलना बच्चों की भावनात्मक संरचना को भीतर से कमजोर कर देते हैं। कुछ अध्ययनों ने यह तक दिखाया है कि विद्यालय वर्ष के आरंभ और परीक्षाओं के समय बच्चों में आत्महत्या की घटनाओं की संख्या बढ़ जाती है, जिसका अर्थ है कि तनाव का समय-बद्ध दबाव बच्चों के भीतर एक अदृश्य भय पैदा करता है। जब एक बच्चा महसूस करता है कि वह अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतर पा रहा या उसके सहपाठी उसे स्वीकार नहीं कर रहे, तो वह भावनात्मक रूप से टूटने लगता है। ब्रिटेन के किंग्स कॉलेज लंदन के शोधों ने यह स्थापित किया है कि विद्यालयी उत्पीड़न- चाहे वह मौखिक अपमान हो, तिरस्कार हो, धक्का-मुक्की हो या उपहास- बच्चों के आत्म-सम्मान पर गहरी चोट करता है और जिन बच्चों को 'बार-बार' इस प्रकार की हिंसा झेलनी पड़ती है, उनमें आत्म-हानि के विचार कई गुना अधिक पाए जाते हैं।

यह तथ्य इस धारणा को तोड़ देता है कि 'बच्चों की दुनिया सरल होती हैं'; वास्तविकता यह है कि एक उपहास, एक तिरस्कार या एक बार की उपेक्षा भी उस नन्हे मन में इतनी गहरी चोट छोड़ सकती है कि वह उसे अपने अस्तित्व पर प्रश्न उठाने के लिए मजबूर कर दे। किंतु स्कूलों का दबाव ही इस कहानी का पूरा सच नहीं है। बच्चा जब जन्म लेता है, तो उसकी पहली भावनात्मक दुनिया परिवार ही होता है। माता-पिता का व्यवहार, उनका तनाव, उनका संवाद और उनकी संवेदनशीलता ही बच्चे के आत्म-मूल्य का आधार बनते हैं। इसी संदर्भ में फैमिली स्ट्रेस मॉडल जिसे रैण्ड डी. कॉन्गार, केथरीन जे. कॉन्गार और ग्लेन एच. एल्डर जूनियर ने विकसित किया और जो वर्ष 1992 में 'चाइल्ड डेवलपमेंट' में प्रकाशित हुआ- यह बताता है कि जब परिवार आर्थिक कठिनाइयों, भावनात्मक संघर्ष, वैवाहिक तनाव या मानसिक दबाव से गुजरता है, तो माता-पिता के भीतर चिड़चिड़ापन, क्षोभ, उद्वेग और उपेक्षा जैसे व्यवहार विकसित होते हैं। बच्चे इन व्यवहारों को शब्दों में नहीं समझते; वे केवल यह महसूस करते हैं कि शायद वे ही समस्या का कारण हैं। यही 'मैं पर्याप्त नहीं हूं' और 'मेरे कारण तनाव है' जैसी भावनाएं बच्चे के भीतर अपराध-बोध को जन्म देती हैं, जो समय के साथ एक गहरे आंतरिक अंधकार में बदल जाता है।

छोटे बच्चे अपने दर्द को भाषा नहीं दे पाते; वे चुप्पी ओढ़ लेते हैं। यह चुप्पी ही उनकी सबसे कड़ी पुकार होती है। परंतु परिवार और समाज प्रायः इस चुप्पी को 'जिद', 'आदत', 'बहाना' या 'शरारत' समझकर टाल देता है। यही वह क्षण है जहां से बच्चे का मन धीरे-धीरे टूटने लगता है। यदि हम उनकी चुप्पी को सुनना न सीखें, तो यह चुप्पी भीतर ही भीतर उस दिशा में बहने लगती है जहां आत्म-त्याग एक विकल्प जैसा प्रतीत होने लगता है। बच्चे मरना नहीं चाहते; वे केवल यह चाहते हैं कि कोई उनकी पीड़ा को समझे, कोई उन्हें पकड़े, कोई उन्हें कहे-'तुम महत्वपूर्ण हो'। दुनिया तब बेहतर होगी, जब हम उनके लिए यह करने लगेंगे।

नेतृत्व

जवाबदेही ही नेतृत्व का सबसे बड़ा उत्तरदायित्व

यह मनोबल को तोड़ती नहीं, बल्कि उसे ऊंचा उठाती है

नेतृत्व नियंत्रण नहीं, अपितु उत्तरदायित्व पर निर्भर करता हैं और सबसे बड़ा उत्तरदायित्व है जवाबदेही, अपने कार्यों, निर्णयों व उनके परिणामों को अपनाने की क्षमता। जवाबदेही का अर्थ केवल दोष लेना नहीं है, इसका अर्थ है पहल करना।

जवाबदेही की शुरुआत स्वयं से करें: आवश्यक है कि एक लीडर दूसरों से जवाब मांगने से पहले, स्वयं के प्रति जवाबदेह होना सीखे। जब लीडर अपने जीवन का नेतृत्व अनुशासन, पारदर्शिता और आत्म-विश्लेषण के साथ करता है, तो उसके कार्य किसी भी आदेश से अधिक प्रभावी होते हैं।

प्रो. हिमांशु राय
निदेशक
आइआइएम इंदौर
@patrika.com

स्वामित्व की संस्कृति का निर्माण: जवाबदेह लीडर केवल उत्तरदायित्व नहीं लेते, बल्कि वे ऐसे सिस्टम बनाते हैं, जहां अन्य लोग भी अपना उत्तरदायित्व निभाते हैं। वे ऐसा वातावरण बनाते हैं, जहां लोग गलती अपनाने में सुरक्षित महसूस करें, पहल करने के लिए भरोसा महसूस करें और सुधार के लिए सहयोग प्राप्त करें।

जवाबदेही का अर्थ पूर्णता नहीं है: यह मिथक है कि जिम्मेदार होने का अर्थ है कभी गलती न करना। इसका वास्तविक अर्थ है गलतियों को अपनाना और उनसे सीखना, वह भी शीघ्रता से, खुलेतौर पर और रचनात्मक तरीके से। जो लीडर अपनी गलतियों के प्रति ईमानदार होता है, वह ऐसे वातावरण का निर्माण करता है जहां सीखना केवल छवि प्रबंधन से ऊपर होता है।

जवाबदेही विश्वास को बढ़ाती है: जब लोग जानते हैं कि लीडर अपने कार्यों का जिम्मा लेंगे, टीम के लिए खड़े होंगे और नैतिक उत्तरदायित्व निभाएंगे, तो समय के साथ उनके अधीनस्थों का भी उन पर विश्वास मजबूत होता है। विश्वास स्वामित्व को जन्म देता है, स्वामित्व पहल को और पहल नवाचार को। नेतृत्व एक प्रकाशस्तंभ वाला दर्पण है और जवाबदेही वही है, जो उस प्रतिबिंब को सच्चा बनाए रखती है।

प्रेरक कदम

सार्वजनिक परिवहन में मिसाल है वियना

ऑस्ट्रिया की राजधानी वियना अपनी सुव्यवस्थित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली के कारण दुनिया के अग्रणी शहरों में शुमार है। वियना का सार्वजनिक परिवहन न केवल यूरोप, बल्कि विश्व के अन्य किसी भी शहर की तुलना में अधिक उत्कृष्ट और प्रभावी माना जाता है। यह अब वियना की संस्कृति,जीवनशैली और सामाजिक ढांचे का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। वियना को टिकाऊ शहरी गतिशीलता की दिशा में एक वैश्विक आदर्श मॉडल बनाने और 2040 तक ऑस्ट्रिया को जलवायु-तटस्थ बनाने की प्रतिबद्धता के तहत वहां सार्वजनिक परिवहन प्रणाली के सुदृढ़ीकरण पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

सुधीर कुमार
शोधार्थी, बीएचयू
@patrika.com

इसका परिणाम है कि लोग निजी परिवहन से दूरी बनाकर सार्वजनिक परिवहन का भरपूर इस्तेमाल कर रहे हैं, जिससे प्रदूषण और कार्बन उत्सर्जन पर नियंत्रण का लक्ष्य भी हासिल हो रहा है। सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देने के लिए वहां पास (कार्ड) व्यवस्था को इतना सस्ता कर दिया गया है कि यह आम आदमी के लिए भी सुलभ और सहज हो गया।

वियना में 365 यूरो का वार्षिक सार्वजनिक परिवहन पास उपलब्ध है, यानी औसतन प्रतिदिन केवल एक यूरो में शहर भर में यात्रा की जा सकती है। खास बात यह है कि 2012 से इस पास की दर बढ़ाई नहीं गई है। किफायती दर पर पास उपलब्ध होने के कारण 20 लाख की आबादी वाले इस शहर की आधी जनसंख्या सार्वजनिक परिवहन पास का उपयोग करती है। सार्वजनिक परिवहन संतुष्टि के मामले में यह शहर यूरोप के अन्य शहरों से आगे हैं। यहां के तकरीबन 91 प्रतिशत लोग सार्वजनिक परिवहन से संतुष्ट हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार इस शहर के केवल एक चौथाई लोग ही यात्रा के लिए निजी वाहनों का उपयोग करते हैं, शेष आबादी पैदल, साइकिल और सार्वजनिक परिवहन को तवज्जो देती है। यहां लोग छोटी यात्रा के लिए पैदल को प्राथमिकता देते हैं। उनकी सुविधा और सुरक्षा के लिए पैदल पथ भी बनाए गए हैं। वियना का ट्राम नेटवर्क दुनिया के सबसे बड़े नेटवर्क में से एक है, जो एक सदी से भी अधिक समय से संचालित है। वियना में परिवहन संबंधी अलर्ट सिस्टम भी है। वियना ने साबित कर दिखाया है कि सार्वजनिक परिवहन की स्थिति को सुधारकर बढ़ते वायु और ध्वनि प्रदूषण पर नियंत्रण, सड़क दुर्घटनाओं पर लगाम, ईंधन व धन की बचत करने के साथ-साथ कार्बन तटस्थता के लक्ष्य को भी हासिल किया जा सकता है।

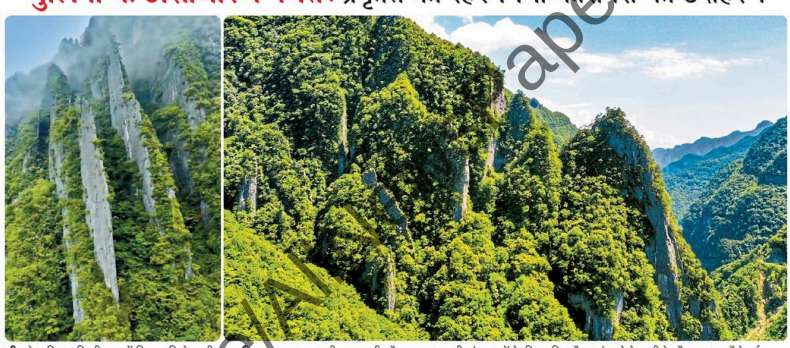

वुलिपो के असाधारण पर्वत: प्रकृति की रहस्यमयी कारीगरी का उदाहरण

चीन के दक्षिण-पश्चिमी भाग में स्थित वुलिपो राष्ट्रीय प्राकृतिक अभयारण्य अपनी रहस्यमयी और अद्भुत पहाड़ी संरचनाओं के लिए प्रसिद्ध है। यहां अनोखे, नुकीले और शलाका जैसे पर्वत प्रकृति की असाधारण कारीगरी का अनूठा उदाहरण हैं। चोंगछिंग नगरपालिका के वुशान काउंटी में फैला यह अभयारण्य 35,000 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र को कवर करता है और जैव विविधता से भरपूर इस क्षेत्र में अनेक दुर्लभ वनस्पतियां, जीव-जंतु और प्राचीन भू-आकृतिक संरचनाएं पाई जाती हैं। वुलिपो की सीमाएं पड़ोसी हुबेई प्रांत के बाडोंग काउंटी व शेननोंगजिया वन क्षेत्र से भी जुड़ती हैं, जिससे यह पूरा इलाका विशाल प्राकृतिक गलियारा बनाता है। इन पर्वतों की ऊंची, धारदार आकृतियां दूर से किसी टूटे हुए क्रिस्टल या विशाल पत्थर की शलाका जैसी प्रतीत होती हैं।

दृष्टिकोण डॉक्टरों की पर्ची में प्रकृति आधारित इलाज की बढ़ रही भूमिका

नेचर प्रिस्क्रिप्शन: इलाज की नई वैश्विक दिशा

नेचर प्रिस्क्रिप्शन अब मरीजों के इलाज के लिए लिखे जाने वाले प्रिस्क्रिप्शन का हिस्सा बनने लगा है। अमरीका के पेनसिल्वेनिया विश्वविद्यालय व उत्तरी कैरोलिना यूनिवर्सिटी के अध्ययन में यह साफ हो चुका है। नेचर प्रिस्क्रिप्शन अमरीका में तो आम होता ही जा रहा है ऑस्ट्रेलिया, ब्राजील, कैमरुन, स्पेन, जापान आदि में यह आम हो चुका है। प्रकृति से जुड़ने का यह सुझाव अब डॉक्टरों की सलाह ही नहीं, अपितु उनके द्वारा मरीजों के लिए लिखे जाने वाले परचे का हिस्सा बनना लगा है। नेचर प्रिस्क्रिप्शन या ग्रीन प्रिस्क्रिप्शन के महत्व को समझते हुए ही एनजीओ भी सक्रिय रूप से आगे आए हैं और इस तरह के संगठन सक्रियता के साथ अवेयरनेस बढ़ा रहे हैं।

दरअसल मानसिक, शारीरिक, जीवन शैली में बदलाव और नींद की समस्या से निजात के लिए नेचर प्रिस्क्रिप्शन को बेहतर इलाज माना जाने लगा है। हमारे यहां सूर्योदय से पहले नियमित भ्रमण और प्रकृति से साक्षात्कार को अच्छे स्वास्थ्य का परिचायक माना जाता रहा है। ऋषि-मुनियों के तो ध्यान और मंथन की दिनचर्या में नेचर से जुड़ाव को खास महत्व दिया जाता रहा है। यही कारण है कि स्वास्थ्य पेशेवरों के परचे में आज नेचर प्रिस्क्रिप्शन प्रमुखता से स्थान पाने लगा है। देश ही नहीं विदेशों में सेंट्रल पार्क विकसित करने जैसी अवधारणाएं उसी दिशा में बढ़ता कदम है। नेचर प्रिस्क्रिप्शन के सकारात्मक परिणामों के कारण इसे आम रूप से चिकित्सा जगत द्वारा तेजी से इलाज का हिस्सा बनाया जाने लगा है।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा
स्वतंत्र लेखक एवं स्तंभकार
@patrika.com

जापान में 1980 में शिनरिन योकू सामने आया जिसका सीधा अर्थ है वन या जंगल स्नान। यहां स्नान से मतलब स्नान से न होकर अच्छे स्वास्थ्य और शारीरिक मानसिक व्याधियों से मुक्ति के लिए प्रकृति से जुड़ाव का संदेश रहा है। शिनरिन से मतलब जंगल और योकू से अर्थ है स्नान। 1980 से यह खासतौर से तेजी से चलन में आया है। जापानी प्रथा के अनुसार इससे अनेक व्याधियों का इलाज संभव होने के साथ ही अच्छे स्वास्थ्य के लिए इस पर जोर दिया गया है। नेचर प्रिस्क्रिप्शन में चिकित्सकों द्वारा सामान्यतः पार्क में टहलने, बागवानी या खेती जैसी गतिविधियों से जुड़ने, साइकिल चलाने, पेड़ के नीचे बैठकर मन को एकाग्र करने, चिंतन-मनन करने, पत्तियां गिरते हुए या नई कोपल को विकसित होते देखने यानी कि प्रकृति की रचना से जुड़ने की सलाह दी जाती है। तनाव, चिंता या डिप्रेशन के साथ ही हृदय की रिद्म को बनाए रखने के लिए यह सब आज की आवश्यकता हो गई है।

दवाएं खाने से अधिक लाभदायक प्रकृति से जुड़ाव है और यह आज की नहीं, अपितु हमारी सनातन दिनचर्या का हिस्सा रहा है। यह भी सर्वमान्य है कि एकाग्रता और शांत मन से तनाव या डिप्रेशन में कमी आती है। ब्लड प्रेशर में सुधार होता है तो नींद आदि में भी सुधार होता है। बदलते हालातों में डॉक्टरों की ओर से नेचर प्रिस्क्रिपशन या ग्रीन प्रिस्क्रिप्शन या जापानी पद्धति शिनरीन योकू जैसी पद्धतियों को मरीज के इलाज में स्थान दिया जाने लगा है तो इसे शुभ संकेत माना जा सकता है। अन्यथा दवाओं के साइड इफेक्ट को चिकित्सक ही नहीं, सब समझने लगे हैं। यही कारण है कि अब नगर नियोजन के साथ पार्कों के महत्व को समझा जाने लगा है।

फैक्ट फ्रंट

कॉकटू पैरट

ऑस्ट्रेलिया के घने जंगलों और इंडोनेशिया के द्वीपों में एक ऐसा पक्षी पाया जाता है, जो न सिर्फ बोलता है, बल्कि संगीत की धुन पर थिरकता भी है। यह पक्षी है कॉकटू पैरट, जो कॉकटू परिवार से संबंधित है। कॉकटू को दुनिया के सबसे बुद्धिमान और मनोरंजक पक्षियों में गिना जाता है। यह तोता बीट पर नाचने वाला एकमात्र पक्षी है, जो खुद डांस मूव्स भी तैयार करता है।

कॉकटू की 21 प्रजातियां हैं, जिनमें सल्फर-क्रेस्टेड (पीली कलगी वाला), रोजेला और ब्लैक कॉकटू शामिल हैं। ये बड़े आकार के तोते होते हैं, जिनकी लंबाई 30 से 70 सेमी और वजन एक किलो तक हो सकता है। इनकी पहचान उनकी ऊंची कलगी से होती है, जो खुशी में खड़ी हो जाती है और गुस्से में फैल जाती है। इनके पंख सफेद, गुलाबी या काले होते हैं और आंखों के चारों ओर नीली रिंग भी होती है।

आपकी बात

दिनचर्या में अनुशासन हो

क्रॉनिक रोगों से बचाव किसी एक उपाय से नहीं, बल्कि रोजमर्रा की जिम्मेदार आदतों से संभव है- संतुलित आहार, नियमित व्यायाम, अच्छी नींद, तनाव नियंत्रण और नशामुक्त जीवन। यही संयमित दिनचर्या लंबे समय तक स्वास्थ्य की ढाल बनती है। थाली में सादगी, दिनचर्या में अनुशासन, मन में शांति और जीवन में नशामुक्ति ये स्तंभ बेहतर स्वास्थ्य की नींव रखते हैं। **- लक्षित सुमन,** झालावाड़

अच्छी नींद लेना फायदेमंद

क्रॉनिक रोगों से बचाव के लिए हमें अपने खानपान और निद्रा को दुरुस्त रखना होगा, क्योंकि इससे पाचन तंत्र भी मजबूत होता है। आजकल पाचन क्रिया से संबंधित समस्या बेहद आम है और इससे आगे चलकर शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ता है। कहीं न कहीं यह हमारे रोग प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित करता है। लंबे समय तक अगर यह चलता रहे तो यह सही नहीं है। **- डॉ. चांदनी श्रीवास्तव,** रायपुर

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की अन्य प्रतिक्रियाएं

पत्रिकायन का सवाल था, 'क्रॉनिक रोगों से बचाव के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं?' अन्य प्रतिक्रियाएं ऑनलाइन भी देखें।
इसे स्कैन करें
https://shorturl.at/w9nBQ

आज का सवाल

दिल्ली-एनसीआर में प्रदूषण पर अंकुश के क्या स्थायी समाधान हो सकते हैं?
ईमेल करें: edit@epatrika.com

जल-जीवन गहन चिंतन की आवश्यकता, क्योंकि पानी में आत्मनिर्भर होना ही हमें सही मायनों में सच्ची सुरक्षा दे सकता है

हमारे स्थानीय जल स्रोतों के संरक्षण से ही 'जल स्वराज'

जयेश जोशी
जलवायु विशेषज्ञ एवं सचिव, वाग्धारा
@patrika.com

जल जीवन है या संसाधन अथवा व्यापार...ये प्रश्न पहले कभी मेरे दिमाग में नहीं कौंधा, मुझे पहले कभी बार-बार अनुत्तरित नहीं किया, जितना विगत 4 से 5 वर्षों में होने लगा है। विशेष रूप से चूंकि मैं आदिवासी अंचल से आता हूं, जहां ईश्वरीय स्वरूप मानकर हम जल की पूजा करते हैं। ऐसे में यह सोच लाजिमी है और साथ में सवाल भी कि क्या इंसान ने ईश्वर को भी व्यापार का अंग बना दिया है?

खैर, मैं इस पूरी चर्चा को आध्यात्मिक और भावनात्मक रूप से आगे बढ़ाने की बात करने की बजाय, इसे हमारे अपने चिंतन के लिए जरूर रखना चाहूंगा। असल में, जल को लेकर मन की उथल-पुथल और सवालों का सिलसिला 'हर घर नल' की चर्चा से शुरू हुआ। तब प्रश्न कौंधा कि प्रकृति ने इसके लिए जो तरीका बनाया था हर घर में जल पहुंचाने का, वह क्या था और कैसा था?

हमारी एक आदत बन गई है कि जो उत्तर हमें सहज और स्वयं ही मिल जाता है, वह हमें स्वाभाविक रूप से अच्छा नहीं लगता। हमें कठिन उत्तर या पेचीदा प्रश्न बनाने में ही दिलचस्पी होने लगती है। जल के विषय में भी यही होता रहा है। मेरा तो हमेशा से यह विश्वास रहा है या यूं कहें कि लगातार यह विश्वास बना रहा है कि सभी समस्याओं और उनके समाधान के केंद्र में स्वराज ही एकमात्र साधन है। ऐसे में, जल स्वराज हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। सुदूर ग्रामीण अंचल में घरों के बाहर प्लास्टिक के पाइप पानी के कनेक्शन के लिए डाले हुए दिखाई दिए। उन्हें देखकर मन में एक चिंता उठी कि जो गांव कभी प्लास्टिक या रबर से मुक्त हुआ करते थे, वहां अब प्लास्टिक की जरूरत क्यों पड़ने लगी?

जो दुनिया को जल संरक्षण का उदाहरण देकर सीख देते थे, उन्हें आज जल उपलब्ध कराने की आवश्यकता क्यों पड़ गई? जो आदिवासी समुदाय पहले आत्मनिर्भर थे, उन्हें अब इस नई निर्भरता की ओर क्यों बढ़ाया जा रहा है? क्यों हमें उस नल के पानी पर निर्भर होना पड़ रहा है, जबकि प्रकृति का जल तो सदैव, सतत और अविरल रूप में हमारे आसपास उपलब्ध रहता था, जो हमारे लिए श्रद्धा और शाश्वत विश्वास का विषय रहा है? उसे अब एक साधारण पदार्थ या वस्तु के रूप में क्यों प्रस्तुत किया जा रहा है? यह बड़ा प्रश्न है, बड़ी चिंता है और गहरे चिंतन की आवश्यकता है। क्या हम हर घर के लिए शुद्ध जल के पारंपरिक साधनों के बारे में नहीं सोच सकते थे? क्या परिवार-आधारित या गांव-आधारित जल व्यवस्थाएं फिर से स्थापित नहीं की जा सकती थीं? आज जब हम इन विशाल परियोजनाओं (चाहे कृषि सिंचाई की हों या पेयजल की) को देखते हैं, तो कई सवाल मन में उठते हैं। खासकर पेयजल परियोजनाओं में लागत, उसका रखरखाव, उसकी निरंतरता का खर्च और उसकी टिकाऊ क्षमता जैसे विषय हमारे सामने आते हैं। इसके साथ एक नई चिंता यह भी जुड़ती है कि यह सब हमें फिर से निर्भरता की ओर धकेल देगा।

सुविधा, विज्ञान और थोड़ी-बहुत स्वास्थ्य की दलीलों के नाम पर क्या हम किसी बड़ी निर्भरता की ओर तो नहीं बढ़ रहे? क्या हम अपने टैक्स के पैसों की और अपने संसाधनों को किसी गैर-जरूरी दिशा में तो नहीं मोड़ रहे? यह भी एक बड़ा प्रश्न है। चूंकि यह लेख अलग-अलग दिशाओं या विषयों को एक साथ समाहित करने का नहीं, बल्कि अलग-अलग चिंताओं को रेखांकित करने का है। इसमें हमारी पारिस्थितिकी निर्भरता, जलवायु सुरक्षा, आर्थिक निर्भरता और हमारे स्वयं और स्वराज की सुरक्षा जैसे मुद्दे शामिल हैं। इसके साथ ही, पुनः इन विषयों को लेकर हमारी परतंत्रता में न जाने की चिंता जैसे कई विषय एक साथ जुड़े हुए हैं। हम इसे किस प्रकार संकलित कर सकते हैं? इसके बारे में हमें गहराई से सोचने की आवश्यकता है। चूंकि जल स्वराज की बात करना या पानी में आत्मनिर्भर होना, हमें सच्ची सुरक्षा दे सकता है।

क्यों न हम पुनः हमारे स्थानीय जल स्रोतों का, परिवार-आधारित, गांव-आधारित और स्थानीय भूभाग के जल स्रोतों का संरक्षण करें? क्यों न हम पारंपरिक तरीकों के साथ विज्ञान और तकनीक का भी उपयोग करें, ताकि हमारी सुविधाएं बनी रहें और जल का संरक्षण भी हो? अभी हमें निर्भरता-आधारित व्यवस्था में समाधान पाने के लिए वितरण, संरक्षण, भंडारण और प्रसंस्करण जैसे कई बाहरी तंत्रों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसके बजाय, क्यों न हम संरक्षण, प्रसंस्करण, सुरक्षा और गरिमा को जोड़ते हुए परिवार-आधारित, गांव-आधारित और समुदाय-आधारित हमारा सम्मान पा सकते हैं, उस सम्मान को सुरक्षा के साथ बना सकते हैं और हम अपने जल देवता को पुनः उसी श्रद्धा के साथ स्थान दे सकते हैं। पानीयं परमं लोके जीवानां जीवनं समृतम्...अर्थात जल से ही संसार के समस्त प्राणियों को जीवन प्राप्त होता है।

दैनिक भास्कर, नई दिल्ली
सोमवार, 24 नवंबर, 2025 | 08

अपने बारे में जो भी सोचा और जाना है, उसे भूलें और एक नई दृष्टि से स्वयं को देखें।

-जे. कृष्णमूर्ति

खुशी की गाइड

चुनौतियों में भी सकारात्मकता है

डॉ. रितु पाण्डेय शर्मा, reetupost@yahoo.com

आपने कभी गौर किया है कि जीवन में जितनी बड़ी उपलब्धियां होती हैं, उनके पीछे उतनी ही गहरी चुनौतियां भी होती हैं? उन्हें पूरा करने की चाह दबाव झेलने की ताकत देती है। हम अकसर सोचते हैं कि दबाव हमें थका देता है, तोड़ देता है- पर क्या सचमुच हर दबाव बुरा होता है? विज्ञान इसके उलट एक महत्वपूर्ण सत्य बताता है कि विकास के लिए दबाव अनिवार्य है।

- प्रकृति का संतुलन देखिए, हमारी पृथ्वी पर जीवन संभव इसलिए है क्योंकि वायुदाब हमें संतुलित रखता है। हवा की सघन परतें ऊपर से जितना दबाव डालती हैं, धरती का गुरुत्वाकर्षण उतना ही नीचे की ओर खींचता है। यह दो-तरफा दबाव अगर जरा भी बदल जाए, तो न मनुष्य जीवित रह सकेंगे, न पक्षी उड़ सकेंगे, न पेड़-पौधे उग सकेंगे।
- यानी दबाव ही जीवन को टिकाए हुए है। मानव मन और जीवन भी बिल्कुल ऐसा ही है। दबाव हमें तोड़ने नहीं, बल्कि तराशने के लिए आता है। शोध बताते हैं कि जिन लोगों में भावनात्मक लचीलापन अधिक होता है, वे विपरीत परिस्थितियों को बेहतर ढंग से संभालते हैं और संकट जैसी स्थितियों से पहले से अधिक मजबूत होकर वापस आते हैं।
- जीवन में संकट या बड़ी परेशानी देख चुके लोगों पर हुए शोध भी बताते हैं कि कठिन अनुभव इंसान में नई समझ, आत्म-विश्वास और गहरी जीवन-दृष्टि ला सकते हैं।

▪ 1 मिनट रीड

सकारात्मक संकल्प

4 नियमों का पालन करें

स्वस्थ रहने में मेलाटोनिन तत्व अहम भूमिका निभाता है। इकिगाई में भी इसके बारे में चर्चा की गई है। मेलाटोनिन बीमारियों से लड़ने में मदद करने के अलावा हमारी उम्र भी बढ़ाता है। इसे बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक चार चीजें अपनाने की सलाह देते हैं- संतुलित भोजन, सूर्य की रोशनी लेना, सही मात्रा में नींद और सबसे अंत में शराब, तम्बाकू, कैफीन आदि के सेवन से परहेज। वास्तव में मेलाटोनिन तत्व हमारे नींद के चक्र को नियंत्रित करता है और अगर हमने नींद को नियंत्रित कर लिया, तो सेहत की कुंजी हमें मिल जाएगी। मैथ्यू वॉकर ने कहा है कि पोषण, व्यायाम, अच्छी नींद- ये अच्छे स्वास्थ्य की तीन सबसे अहम बुनियाद हैं।

संकल्प लें कि मेलाटोनिन तत्व को बढ़ाने वाले चार नियमों का भरसक पालन करेंगे। ▪ 1 मिनट रीड

लक्ष्य स्पष्ट हो तो जीवन होगा सफल

जीवन-सूत्र

स्वामी ज्ञानवत्सल
प्रेरक वक्ता और विचारक

वर्ष 2008 में छपी एक किताब बहुत मशहूर हुई थी, जिसका नाम था- 'आउटलायर्स'। इसमें लेखक मैल्कम ग्लैडवेल ने बड़ी सफलता पाने वाले लोगों की गहराई से स्टडी करके नतीजे निकाले हैं। दुनिया के अलग-अलग क्षेत्रों के सफल व्यक्तियों का सर्वे करने के बाद वे एक नतीजे पर पहुंचे, जिसके लिए शब्द बना- टेन थाउजेंड आॅवर्स रूल। यानी अगर आप सच में ही किसी भी क्षेत्र में सफलता के शिखर पर पहुंचना चाहते हैं, तो 10 हजार घंटे प्रैक्टिस करें। किताब कहती है कि कम्पोजर, बास्केटबॉल प्लेयर, आइस स्केटर, कॉन्सर्ट पियानिस्ट, चेस प्लेयर या मास्टर क्रिमिनल- जो भी अपनी फील्ड में एक्सपर्ट बने हैं, उन्होंने उसमें 10 हजार घंटे से ज्यादा काम किया होता है।

निष्कर्ष क्या है? यह कि किसी इंसान के पास चाहे जितनी स्किल्स हों, उसके पास भगवान की दी हुई कोई भी काबिलियत हो, कोई भी रातों-रात सफलता के सबसे ऊंचे शिखर पर नहीं पहुंचता। उसके लिए, एक खास दिशा में लंबे समय तक प्रैक्टिस की जरूरत होती है। मशहूर संगीतकार बीथोवेन से जब पूछा गया कि आपकी कामयाबी का राज क्या है तो बीथोवेन ने कहा 40 साल तक रोज 8 घंटे! कामयाबी रातों-रात नहीं मिलती।

अब जरा सोचिए, क्या हमने अपने मन में कोई तस्वीर बना ली है कि आज से 10 साल बाद या 20 साल बाद या 40 साल बाद हम कहां पहुंचना चाहते हैं? अगर हम आज करेंगे, तो इतने सालों बाद नतीजा दिखेगा। जितनी जल्दी आखिरी तस्वीर साफ होगी, उतनी ही जल्दी हम सफर शुरू कर पाएंगे। और हमारे फैसले भी उतने ही सही दिशा में होंगे। हमारी स्पीड उतनी ही बढ़ेगी। और अगर हमारा लक्ष्य साफ नहीं है, तो हमारी पूरी जिंदगी दूसरों के लक्ष्य पूरे करने में ही निकल जाएगी। इसलिए 'अंत' और 'शुरुआत' स्पष्ट होना जरूरी है। यह नजरिया भी ध्यान में रखना चाहिए कि हम पूरी जिंदगी का निचोड़ क्या पाना चाहते हैं?

जितनी जल्दी आखिरी तस्वीर साफ होगी, उतनी ही जल्दी हम सफर शुरू कर पाएंगे। और हमारे फैसले भी उतने ही सही दिशा में होंगे।

विदुर नीति में एक बहुत समझदारी वाली बात कही गई है- दिन में ऐसा काम करना कि रात को सोने से पहले हम संतुष्ट हों, साल के आठ महीने ऐसा काम करना कि आखिरी चार महीने हम संतुष्ट रहें, जिंदगी के अगले पड़ाव में ऐसा काम करना कि बूढ़े होने पर हम संतुष्ट हों और जीते जी ऐसा काम करना कि मरने के बाद भी हम संतुष्ट रहें। नेपोलियन ने यूरोप के बड़े हिस्से को अपने शासन में ले लिया था। उसके बाद भी उन्होंने कहा था- मैं इस दुनिया में कोई भी आराम खरीद सकता हूं, लेकिन मैंने अपनी जिंदगी में खुशी के छह दिन नहीं देखे हैं। जीवन में सफलता और सफल जीवन- दो बिल्कुल अलग-अलग चीजें हैं। जिंदगी में कोई किसी क्षेत्र में शानदार सफलता हासिल कर सकता है लेकिन हो सकता है कि जिंदगी सफल न हो। अंत में व्यक्ति को पूर्णता का अनुभव नहीं होता है। इसलिए हमें शुरू से ही जिंदगी में ऐसा बड़प्पन दिखाना होगा।

हमें पैसे के पीछे आंख बंद करके भागने के बजाय परिवार और दोस्तों को समय देना होगा। हमें सत्ता मिलने के बाद भी छोटे से छोटे लोगों से भी प्यार और अच्छे रिश्ते रखने होंगे। हमें दूसरों के लिए बिना किसी स्वार्थ के काम करना होगा। हमें सहनशीलता और माफी जैसे मूल्यों को अपनाना होगा। तभी हम जिंदगी में सफल होने के साथ-साथ सफलता का अनुभव कर पाएंगे। जीवन में हम जो भी कदम उठाएं, वे हमें नैतिकता और सच्चाई के रास्ते पर बनाए रखें। ▪ 2 मिनट रीड

इस जीवन सूत्र को मोबाइल पर सुनने के लिए **QR कोड** को स्कैन करें।

प्रेरक प्रसंग

महानता को पाने का मानचित्र रचा

महान अमेरिकी लेखक-वैज्ञानिक बेंजामिन फ्रैंकलिन ने अपने जीवन में कैसे दिशा पाई, कैसे उन्होंने स्वयं पर कार्य किया और सुधार लाए, इसकी कहानी हम सभी के लिए प्रेरणास्पद है।

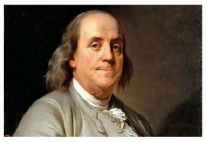

एक युवा के रूप में बेंजामिन फ्रैंकलिन तेज-तर्रार, कल्पनाशील और महत्वाकांक्षी तो थे, लेकिन उनमें अनुशासन की कमी थी। वे भली प्रकार से जानते थे कि उन्हें एक बेहतर मनुष्य बनना है, पर उनकी जिंदगी में दिशा नहीं थी- प्रतिभा थी, पर कोई मानचित्र नहीं था।

1726 की एक शाम समुद्री यात्रा से लौटते समय फ्रैंकलिन अकेले बैठे सोच रहे थे। उनके मन में एक प्रश्न उठ रहा था कि कोई मनुष्य वास्तव में सद्गुणी कैसे बनता है? दुनिया को दोष देने की बजाय उन्होंने स्वयं की परीक्षा लेनी शुरू की। उन्होंने ऐसे 11 गुणों की सूची बनाई, जो उन्हें बेहतर इंसान बना सकते थे : संयम, मौन, व्यवस्था, निश्चय, मितव्ययिता, परिश्रम, सत्यनिष्ठा, न्याय, स्वच्छता, शांति और विनम्रता। लेकिन उन्होंने इन सबको एक साथ साधने की कोशिश नहीं की। वे हर सप्ताह एक ही गुण चुनते और पूरे ध्यान से उसका अभ्यास करते। एक छोटी-सी तालिका में वे अपनी हर चूक को एक बिंदु से चिह्नित करते। उनका लक्ष्य पूर्णता नहीं, बल्कि निरंतर सजग प्रगति थी।

यह तालिका फ्रैंकलिन के लिए एक प्रेरणा थी। तालिका का हर बिंदु उनके लिए अपराध-बोध नहीं प्रगति का प्रमाण था। धीरे-धीरे उनमें अद्भुत परिवर्तन दिखाई देने लगे।

एक समय में एक सुधार...

मौन के अभ्यास से उनकी वाणी तीक्ष्ण हुई, परिश्रम ने उन्हें अधिक उत्पादक बनाया, सत्यनिष्ठा और न्याय ने उनके संबंध सुधारे, व्यवस्था और शांति ने उनका जीवन संतुलित किया। फ्रैंकलिन की यह कहानी हमें याद दिलाती है कि महानता आकस्मिक प्रतिभा से नहीं आती। वह आती है छोटी-छोटी आदतों को निरंतर सुधारने से। उनके जीवन में यह शुरू हुआ था केवल एक छोटी-सी नोटबुक, एक समय में एक सुधार के निश्चय से। ▪ 1 मिनट रीड

संघर्ष की कहानी **रणवीर सिंह,** बॉलीवुड अभिनेता

वेटर रहे, कॉपीराइटर की नौकरी की, अब हैं बॉलीवुड स्टार

बॉलीवुड में रणवीर सिंह (40) मशहूर नाम हैं। उनकी एक्टिंग का हर कोई दीवाना है। फिलहाल रणवीर सिंह अपनी अपकमिंग फिल्म धुरंधर को लेकर चर्चा में है। हाल ही फिल्म का ट्रेलर रिलीज हुआ है, जिसने सोशल मीडिया पर धूम मचा रखी है। फिल्म में रणवीर के साथ और भी बड़े कलाकार शामिल हैं। रणवीर ने यहां तक पहुंचने के लिए काफी संघर्ष किया है। जानते हैं उनकी संघर्ष से सफलता की कहानी.....

रणवीर सिंह का जन्म 6 जुलाई 1985 को मुंबई में एक सिंधी परिवार में हुआ। पिता बिजनेसमैन हैं और मां अंजू गृहिणी। रणवीर का सपना बचपन से ही एक्टर बनने का था। लेकिन घर वाले चाहते थे कि रणवीर किसी बेहतर फील्ड में करियर बनाएं। रणवीर की महत्वाकांक्षा को देखते हुए उन्होंने रणवीर को अमेरिका की इंडियाना यूनिवर्सिटी ब्लूमिंगटन में बैचलर ऑफ आर्ट्स की पढ़ाई के लिए भेजा, जहां उन्होंने एक्टिंग क्लासेस लीं। थिएटर को भी सब्जेक्ट बनाया। इस दौरान खर्चा उठाने के लिए वेटर की नौकरी तक भी की।

संघर्ष : लगातार रिजेक्शन झेले, लुक्स को लेकर भी सवाल उठे

पढ़ाई पूरी करने के बाद रणवीर 2007 में मुंबई लौटे। यहां उन्होंने एडवरटाइजिंग एजेंसियों में कॉपीराइटर की नौकरी की। एक्टिंग के लिए लगातार ऑडिशन देने के बावजूद उन्हें रिजेक्शन मिल रहे थे। कई डायरेक्टर्स ने उन्हें 'गुड लुकिंग न होने' की वजह से रिजेक्ट भी किया। करीब 3 साल तक रणवीर काम की तलाश में भटकते रहे, यहां तक कि उन्होंने सोचा कि क्या वो सही कर रहे हैं। उनके पिता ने 50 हजार रुपए देकर उनका पहला पोर्टफोलियो बनवाया, लेकिन फिर भी ऑडिशंस में सिर्फ माइनर रोल्स के ऑफर आते थे। कोई फिल्मी बैकग्राउंड न होने की वजह से रणवीर ने कई बार एक्टिंग छोड़ने के बारे में भी सोचा। हालांकि उन्होंने हार नहीं मानी और पोर्टफोलियो भेजते रहे, ऑडिशंस देते रहे।

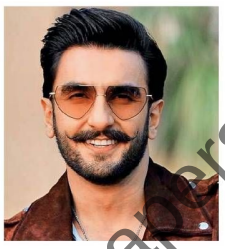

शुरुआत : ऑडिशन में सिलेक्ट हुए, पहली मूवी भी हिट हुई

2010 में रणवीर ने यश राज फिल्म्स की 'बैंड बाजा बारात' के लिए ऑडिशन दिया। कई राउंड्स के बाद उन्हें लीड रोल मिला। शुरुआत में फिल्म की कमर्शियल अपील पर शक था, लेकिन यह सुपर हिट रही। 'लुटेरा', 'राम-लीला', 'बाजीराव मस्तानी' जैसी फिल्मों में लगातार इनोवेटिव रोल्स से वे तेजी से आगे बढ़े। आज रणवीर बॉलीवुड के साथ-साथ ब्रांड एंडोर्समेंट्स और इंटरनेशनल प्रोजेक्ट्स में भी शामिल हैं।

सफलता : 245 करोड़ रुपए नेटवर्थ, 5 फिल्मफेयर अवॉर्ड्स भी मिले

रणवीर ने 5 फिल्मफेयर अवॉर्ड्स जीते हैं। उनकी 10 से ज्यादा फिल्में 100 करोड़ से ज्यादा कमा चुकी हैं। रणवीर का 'मां कसम फिल्म्स' नाम से प्रोडक्शन हाउस भी है। वे सबसे ज्यादा ब्रांड एंडोर्स करने वाले सितारों में शामिल हैं। रणवीर की नेटवर्थ 245 करोड़ रु. है। वे एक फिल्म के लिए 30-50 करोड़ रु. चार्ज करते हैं। ▪ 2 मिनट रीड

सीनियर सिटीजन

ऊर्जा **शोध बताते हैं बढ़ती उम्र में सक्रिय रहने से** मस्तिष्क युवा रहता है, बीमारियां दूर रहती हैं

उम्र को मात देने वाली 4 कहानियां : 66 की उम्र में रील बना रहे; 70 में टीवी पर दिखा रहे टैलेंट

कई बुजुर्ग जीने का तरीका बदल रहे हैं। वे रील बना रहे हैं। फिटनेस के वीडियो सोशल मीडिया पर शेयर कर रहे हैं। 70-80 की उम्र में युवाओं जैसे काम कर बता रहे हैं कि उम्र सिर्फ एक आंकड़ा है। आप किसी भी उम्र में नया काम कर सकते हैं। मिलिए ऐसे ही कुछ बुजुर्गों से।

70 साल की दादी... गॉट टैलेंट में दिखाए करतब

राजस्थान के जोधपुर जिले की 70 वर्षीय रूपादेवी विश्नोई ने पिछले दिनों टीवी शो इंडिया गॉट टैलेंट में अपनी 10 साल की पोती परिणीति के साथ हैरतअंगेज करतब दिखाकर सभी को आश्चर्यचकित कर दिया। वे नियमित रूप से दौड़ लगाती हैं। योग करती हैं।

सीख : *कुछ करने के लिए उम्र मायने नहीं रखती है। दृढ़ संकल्प होना चाहिए। बच्चों का साथ इसमें मददगार होता है।*

81 साल की दादी... सोशल मीडिया पर क्रोशिया क्वीन

दिल्ली की 81 वर्षीय शीला बजाज ऊन और क्रोशिया से आकर्षक कपड़े और बच्चों के लिए कई तरह के खिलौनें बनाती हैं। इनकी रील सोशल मीडिया पर खूब वायरल होती है। उनकी पोती युक्ति उनके बनाए कपड़ों का प्रचार करती दिखती है।

सीख : *बुजुर्ग यदि बच्चों के साथ मिलकर कुछ नया सीखते हैं तो उनका तनाव संबंधी हार्मोन घटता है। मूड बेहतर होता है।*

आपको 'युवा' बनाए रखती हैं एक्टिविटीज

अमेरिका कॉलेज ऑफ स्पोर्ट मेडिसिन की शोध बताती है कि दिमाग या शरीर से सक्रिय रहने वाले बुजुर्गों में सोच-विचार की क्षमता बढ़ती है। याददाश्त बेहतर रहती है। मूड स्थिर रहता है। विभिन्न रोगों का जोखिम कम होता है।

आप भी बना सकते रील ब्लॉग भी लिख सकते हैं

आप अपने शौक जैसे- खाना पकाना, बागवानी करना या दूसरों को हंसाना, इसकी रील बना सकते हैं या किसी विषय पर ब्लॉग लिख सकते हैं। इन्हें अपने पोता-पोती की मदद से यूट्यूब, इंस्टा, एफबी पर अकाउंट बनाकर शेयर सकते हैं।

66 साल के विजय... सोशल मीडिया पर मस्तकलंदर

नासिक के 66 वर्षीय विजय खरोटे सोशल मीडिया पर मनमौजी मस्तकलंदर नाम से मशहूर हैं। वे कभी पत्नी तो कभी बुजुर्गों के ग्रुप के साथ रील बनाकर हंसाते हैं। इंस्टाग्राम पर इनके करीब 14 लाख फॉलोअर्स हैं। ये रील से कई मुद्दे भी उठाते हैं।

सीख : *जब आप जीवन को आनंद के साथ जीते हैं तो उम्र लंबी होती है। शरीर स्वस्थ और निरोगी रहता है।*

62 की उम्र में सीखा स्कूटर... 87 में भी चला रही हैं

अहमदाबाद की 87 साल की मंदा बेन ने 62 की उम्र में स्कूटर चलाना सीखा। वे कहती हैं कि तब से बाहर के सारे काम खुद करती हूं। वे 84 साल की उषा बेन के साथ कभी भी स्कूटर पर निकल जाती हैं। वे कहती हैं इसे चलाते समय उम्र का अहसास नहीं होता।

सीख : *इच्छाशक्ति से कठिन से कठिन काम सीखे और किए जा सकते हैं। नया सीखने से मस्तिष्क युवा बना रहता है।*

आप अपने अनुभव srcitizen@dbcorp.in पर भेज सकते हैं, चुनिंदा पत्र प्रकाशित किए जाएंगे।

आपकी सेहत **ठंड में दिल के रोगों का** 30% ज्यादा रिस्क

चुकंदर, अनार खाएं, हाथों के मूवमेंट करें, सर्दियों में दिल रहेगा सुरक्षित

डॉ. मनीष पोरवाल
कार्डियक सर्जन, केयर सीएचएल हॉस्पिटल

सर्दियों में शरीर के बाहरी हिस्से की रक्त वाहिकाएं संकुचित होने लगती हैं। इससे बीपी बढ़ता है और दिल पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है। पसीना कम निकलने से भी सोडियम और अन्य तरल बाहर नहीं निकल पाते, जिससे खून अपेक्षाकृत गाढ़ा होने पर ब्लड क्लॉट बनने का खतरा बढ़ जाता है। इसलिए सर्दियों में बुजुर्गों में हार्ट अटैक और स्ट्रोक का खतरा लगभग 30% अधिक होता है। इसके लिए मोटे या भारी कपड़ों की जगह दो से तीन गर्म पकड़े पहनें। कपड़ों के बीच में हवा की परत बनती है जो गर्मी बाहर निकलने से रोकती है। ये 3 तरीके भी दिल को होने वाले नुकसान से बचाते हैं।

'बीसीडी' को रखें नियंत्रित

यहां बी यानी हाई बीपी, सी- कोलेस्ट्रॉल और डी- डायबिटीज को दर्शाते हैं। ये तीनों हार्ट अटैक के खतरे को बढ़ाते हैं। खासकर ठंड के मौसम में बुजुर्ग इन तीनों को नियंत्रित रखें। इसके लिए समय-समय पर ब्लड प्रेशर, ब्लड शुगर लेवल और कोलेस्ट्रॉल की जांच कराते रहें। यदि कोई दवाई ले रहे हैं तो उसे समय पर और नियमित रूप से लें।

फल सब्जियां खाएं, मीठे से बचें

सर्दियों में मौसमी फल और सब्जियां दिल के लिए अच्छी मानी जाती हैं। खासकर पालक अधिक फायदेमंद है। वहीं चुकंदर में प्राकृतिक नाइट्रेट होते हैं, जो रक्त वाहिकाओं को खोलते हैं। ऐसे ही अनार में पोटैशियम और पॉलीफेनाल्स होते हैं जो नसों की सूजन घटाते हैं। नट्स, डायफ्रूट्स भी लाभदायक हैं। वहीं बाजार का फास्टफूड और मीठे पेय से बचें। ये कोलस्ट्रॉल की समस्या बढ़ाते हैं।

सुरक्षित व्यायाम से सक्रिय रहें

ठंड में बुजुर्गों के लिए सबसे जरूरी है खुद को सक्रिय रखना। योग, ट्रेडमिल पर चलना या हल्की एरोबिक्स जैसे व्यायाम फायदेमंद हो सकते हैं। यदि आप हार्ट अटैक के जोखिम के दायरे में आते हैं, तो अधिक मेहनत वाले व्यायाम न करें। 15 से 20 मिनट की मध्यम तेज वॉक, हाथों को नियंत्रित गति से घुमाना, कुर्सी की मदद से उठने-बैठने वाली एक्सरसाइज और योग-प्राणायम करें। तनाव से बचें।

सप्ताह का स्वास्थ्य मंत्र

आपको याद है...? याददाश्त तेज करने का ये खास तरीका

याददाश्त तेज रखने की दिमागी कसरत 'क्या आपको याद है... बुजुर्गों के लिए बेहतर हो सकती है। इसके लिए एक सूची बनाएं। जैसे किराने की चीजें या 10 किताबें जो पढ़ना चाहते हैं। इस सूची याद कर लें, फिर एक घंटे बाद देखें कि कितनी चीजें याद आती हैं।

आपकी योजना **इंडिया पोस्ट पेमेंट बैंक की एईपीएस** स्कीम में बुजुर्गों को मिल रही नि:शुल्क सुविधा

इस योजना से बुजुर्ग घर पर ही मंगा सकते हैं 10 हजार तक कैश

प्रीती अग्रवाल
पोस्टमास्टर जनरल, भारतीय डाक विभाग

बुजुर्ग केवल आधार कार्ड की मदद से घर बैठे 10 हजार रुपए तक कैश पा सकते हैं। इसे इंडिया पोस्ट पेमेंट बैंक की एईपीएस यानी डोर स्टेप आधार एटीएम स्कीम कहते हैं। यह राशि डाकिया के मदद से पाई जा सकती है।

यह सुविधा पूरी तरह से नि:शुल्क है

यह सेवा आधार सिस्टम पर आधारित है। इसके लिए आपके अकाउंट का आधार कार्ड से लिंक होना जरूरी है। साथ ही बायोमेट्रिक वैरिफाइड भी होना चाहिए। इसमें कैश के अलावा बैलेंस इन्क्वायरी और मिनी स्टेटमेंट भी निकाल सकते हैं।

आप इस तरह ले सकते हैं लाभ

वेबसाइट https://ippbonline.bank.in पर जाकर डोर स्टेप बैंकिंग विकल्प चुनें। इसमें नाम, मोबाइल नंबर, पता, पिन कोड, नजदीकी डाकघर व जिस भी बैंक से पैसा निकालना है उसकी डिटेल भरें। सुबह 11 से शाम 4 बजे के बीच का स्लॉट चुनें। इसके बाद 'I Agree' पर क्लिक करें। सबमिट करने के बाद डाकिया कैश लेकर घर आएगा। बायोमेट्रिक प्रक्रिया के बाद कैश दे देगा। इसके अलावा आप सीधे बैंक के कॉल सेंटर 155299 या 033-22029000 पर कॉल करके कैश के लिए रिक्वेस्ट कर सकते हैं।

हेल्पलाइन

नि:शुल्क कानूनी मदद के लिए यहां कॉल करें

नालसा यानी राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण से बुजुर्ग त्वरित नि:शुल्क कानूनी मदद और सलाह पा सकते हैं। इसके लिए उन्हें टोल फ्री हेल्पलाइन नंबर 15100 पर कॉल करके अपनी समस्या दर्ज करानी होगी। यदि आपको घरेलू हिंसा, संपत्ति विवाद और वृद्धावस्था पेंशन जैसी समस्याओं में मदद नहीं मिल रही है तो यह प्राधिकरण इस तरह के मामलों में आपकी बेहतर सहायता कर सकता है।

https://t.me/AllNewsPapersPaid

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 238

श्रम संहिताओं का क्रियान्वयन

केंद्र सरकार ने पिछले सप्ताह उन चार श्रम संहिताओं को लागू कर दिया जो देश के श्रम बाजार नियमन को आधुनिक बनाने के उद्देश्य से तैयार की गई हैं। इसी समाचार पत्र में प्रकाशित खबर के अनुसार संहिताएं उन विशिष्ट प्रावधानों के लिए लागू हो गई हैं जहां आगे नियम निर्माण की आवश्यकता नहीं है। चूंकि मसौदा नियम कुछ वर्ष पहले तैयार किए गए थे, इसलिए सरकार नई वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए इनमें कुछ परिवर्तन करेगी। मशविरे के लिए संशोधित मसौदा नियम प्रस्तुत किए जाने की उम्मीद है। संशोधित नियम अधिसूचित होने के बाद संहिता पूरी तरह लागू हो जाएंगी। वेतन संहिता (2019), औद्योगिक संबंध संहिता (2020), सामाजिक सुरक्षा संहिता (2020) और व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्य परिस्थितियां संहिता (2020) के रूप में इन चार संहिताओं का क्रियान्वयन हाल के वर्षों के सबसे बड़े सुधारों में से एक होगा। पुराने श्रम कानून और विनियमों को विशेषकर विनिर्माण क्षेत्र में टिकाऊ उच्च वृद्धि के सबसे बड़े अवरोधों में से एक माना जाता है।

कंपनियों के नजरिये से श्रम संहिताओं का क्रियान्वयन अनुपालन लागत को कम करने और नियुक्तियों को पहले से अधिक लचीला बनाने वाला साबित हो सकता है। ऐसा इसलिए क्योंकि कर्मचारियों की छंटनी, पुनर्गठन आदि की सीमा को पहले के 100 से बढ़ाकर 300 श्रमिक कर दिया गया है। इसके साथ ही राज्यों को इस सीमा को और बढ़ाने के प्रावधान भी किए गए हैं। श्रम बाजार भी अधिक औपचारिक बन जाएगा। उदाहरण के लिए सभी कामगारों को नियुक्ति पत्र देना अनिवार्य होगा। लिखित अनुबंध से पारदर्शिता बढ़ेगी। वेतन संहिता 2019 के तहत सभी कामगारों को न्यूनतम वेतन का अधिकार होगा और उद्यमों से समय पर वेतन भुगतान की अपेक्षा की जाएगी। इस संदर्भ में यह महत्त्वपूर्ण होगा कि न्यूनतम वेतन का निर्धारण कामगारों और व्यवसायों दोनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाए। सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक गिग और प्लेटफॉर्म श्रमिकों के लिए है, क्योंकि पहली बार उन्हें सामाजिक सुरक्षा संहिता के तहत कानूनी मान्यता मिली है। इसके अतिरिक्त, कामगारों को आधार से जुड़ी सार्वभौमिक खाता संख्या मिलेगी, जिससे राज्यों के बीच आवागमन पर भी समान लाभ मिल सकेगा। यह हमारे देश में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आंतरिक प्रवासन बढ़ रहा है।

केंद्र सरकार से उम्मीद होगी कि वह मसौदा नियम प्रकाशित करे और उन्हें समय पर अधिसूचित करे, वहीं राज्यों ने अहम पहल कर दी हैं। एक हालिया विश्लेषण बताता है कि 16 राज्य सरकारों ने वर्ष2025 में 38 सुधारों को अंजाम दिया और इनमें से 37 फीसदी श्रम सुधार हैं। उदाहरण के लिए महिलाओं को रात की पाली में काम करने की इजाजत देना, रोजाना के काम की अवधि को 10 से 12 घंटे तक बढ़ाना, ओवरटाइम की सीमा बढ़ाना या छोटे प्रतिष्ठानों के लिए दस्तावेजीकरण की आवश्यकता कम करना। श्रम संहिताओं के लागू होने के साथ, राज्य निवेश आकर्षित करने के लिए अधिक अनुकूल नियम बना सकेंगे। हालांकि, इस सुधार की अपनी एक लागत है, खासतौर पर सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) के लिए। सामाजिक सुरक्षा कवरेज के विस्तार और अन्य अनिवार्य आवश्यकताओं से एमएसएमई का व्यय बढ़ेगा और यह उन उद्यमों के लिए विशेष रूप से कठिन हो सकता है जो कम लाभांश पर काम कर रहे हैं। हालांकि विशेषज्ञों का कहना है कि अनुपालन लागत में तेज कमी के साथ संहिताएं एमएसएमई क्षेत्र को लाभ पहुंचाएंगी। डिलिवरी प्लेटफॉर्म्स के लिए भी लागत बढ़ सकती है, जबकि उनमें से अधिकांश पहले से ही घाटे में चल रहे हैं।

व्यापक नीतिगत स्तर पर हालिया प्रस्तावित राष्ट्रीय श्रम एवं रोजगार नीति, श्रम शक्ति नीति ने सामाजिक सुरक्षा, औपचारिकीकरण और समावेशी वृद्धि के उन्हीं लक्ष्यों को रेखांकित किया है। बहरहाल, व्यवस्था में निरंतर सुधार की आवश्यकता होगी। खासतौर पर काम की तेजी से बदलती प्रकृति को देखते हुए। इसके लिए राज्य सरकारों सहित सरकार को निरंतर कारोबारी जगत और श्रम बाजारों के साथ काम करना होगा। भारतीय श्रम बाजार मोटे तौर पर असंगठित इसलिए भी रहा है क्योंकि कठोर श्रम कानून कंपनियों को लोगों को काम पर रखने, बड़े पैमाने पर काम करने तथा वैश्विक बाजारों में प्रतिस्पर्धा करने से रोकते हैं। नई श्रम संहिताएं आर्थिक वृद्धि पर असर कम करेंगी और रोजगार तैयार करने में मददगार होंगी।

तेजस हादसा देश के लिए आत्मावलोकन का अवसर

तेजस एक ऐसा विमान है जो बेहतरीन है, किफायती है और शानदार सुरक्षा रिकॉर्ड वाला है, परंतु हालिया हादसा हमारी सीमाओं और कमियों पर विचार करने का महत्त्वपूर्ण क्षण है

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

दुबई एयर शो में तेजस विमान का दुर्घटनाग्रस्त होना और विमान चालक की मौत स्तब्ध कर देने वाला क्षण था। भारतीय वायु सेना बहुत मजबूत, गौरवशाली और पेशवर है। वह इस झटके को सहन कर जाएगी। भारत के नीति निर्माताओं के लिए जरूर यह उपयुक्त समय है, जब उन्हें यह तय करना होगा कि क्या वे वायु सेना के साथ न्याय कर रहे हैं, खासकर उसकी जरूरतों को देखते हुए। या फिर वे वायु सेना से जो कुछ मांग करते हैं, उसे जो समझौते या समायोजन करने को कहते हैं वे कितने उचित हैं।

बहरहाल यह भी महत्वपूर्ण है कि हम खुद को यह याद दिलाएं कि विमानचालक बहुत सख्त जान होते हैं। उनमें भी जो सबसे मजबूत होते हैं वे भारतीय वायु सेना में होते हैं क्योंकि वे दुनिया के उन चुनिंदा लोगों में से हैं जो हमेशा परिचालन के लिए तैयार रहते हैं। वायु सेना तीन वजहों से खास है और उसका विशेष तौर पर उल्लेख करना जरूरी है। पहला, यह अधिकांश कठिन या दंडात्मक परिस्थितियों में सबसे पहले जवाब देता है, क्योंकि मोदी सरकार का सिद्धांत है कि हर आतंकी कृत्य युद्ध का कृत्य है और तत्काल जवाब का पात्र है। दूसरा, क्योंकि वायु सेना तीनों सेवाओं में एकमात्र ऐसी है जहां युद्ध लगभग पूरी तरह उसके अधिकारियों द्वारा लड़ा जाता है, जो एक छोटा और संगठित समूह बनाते हैं। और तीसरा, तीनों सेनाओं में से वायु सेना सबसे अधिक तकनीक निर्भर है। हम जानते हैं कि सेनाओं के बीच प्रतिस्पर्द्धा रहती है, इसलिए हमें मानना होगा कि बाकी दोनों सेनाओं के लिए भी तकनीक महत्त्व रखती है। वायु सेना के मामले में फर्क सिर्फ इतना है कि लड़ाई के सारे साधन, जमीन पर उसे निर्देश देने, नियंत्रण में रखने और सुरक्षा देने वाले उपकरण निरंतर बदलते इलेक्ट्रॉनिक्स पर निर्भर होते हैं।

वायु सेना की चुनौतियों में हम एक चौथी चुनौती जोड़ सकते हैं। थल सेना और नौ सेना में संख्या कभी-कभी तकनीकी कमी को पूरा कर सकती है, लेकिन वायु सेना के पास ऐसा करने की गुंजाइश कम है। इसके अतिरिक्त, चूंकि युद्धक विमानन परिसंपत्तियों की पूंजी लागत नौ सेना की तुलना में उतनी अधिक नहीं है, पाकिस्तान के लिए बराबरी बनाए रखना, यहां तक कि कुछ क्षेत्रों में आगे निकल जाना भी अधिक संभव है। खासतौर पर क्योंकि उसका ढांचा बहुत छोटी झड़पों में हवा से हवा में जंग के लिए अनुकूलित है और चीन भी हमेशा मदद के लिए मौजूद रहता है।

1950 के दशक के मध्य से ही यानी जब अमेरिका ने पाकिस्तानी वायु सेना को अपने नवीनतम लड़ाकू विमान सौंपे, भारतीय वायु सेना उसकी बराबरी करने पर विवश हो गई। 1965 की जंग में जब हमारी वायु सेना का मुकाबला पाकिस्तान की वायु सेना से हुआ तब उसके पास सुपरसोनिक और मिसाइल से लैस एफ-104 स्टारफाइटर थे। 1971 तक सोवियत संघ के साथ हमारे रिश्ते बहुत गहरे हो चले और हम कुछ हद तक बराबरी करने में कामयाब रहे। सत्तर के दशक में पाकिस्तान उबरने की कोशिश में था। 1984 तक हालात तेजी से बदल गए जब एफ-16 विमान आ गए। सोवियत संघ द्वारा अफगानिस्तान पर आक्रमण के पांच साल बाद अमेरिका ने पाकिस्तान को ये विमान तोहफे में दिए।

बहरहाल, यह उपमहाद्वीप में हवाई श्रेष्ठता की सात दशकों की लंबी होड़ के इतिहास को दोहराने की बात नहीं है। यह कहीं अधिक गंभीर दुविधाओं के बारे में है जिनसे भारत ने इस मोर्चे पर संघर्ष किया है। तेजस इसी का परिणाम है और अपेक्षाकृत बेहतर परिणाम है। यह एक शानदार, उचित मूल्य वाला, अधिकांशतः स्वदेशी विमान है जिसका सुरक्षा रिकॉर्ड बेहतरीन रहा है। पहली उड़ान के बाद 24 साल में यह केवल दो बार दुर्घटनाग्रस्त हुआ है। परंतु क्या यह 2025 में भी हमारी सबसे बड़ी सफलता है? क्या यह अब भी प्रतिस्पर्धा के साथ कदमताल की कोशिश कर रहा है? क्या हम इसे बहुत पहले नहीं बना सकते थे? याद कीजिए कैसे मनोहर पर्रिकर ने रक्षा मंत्री रहते हुए 2015 में अनिच्छुक वायु सेना को तेजस मार्क 1ए को स्वीकार करने पर मजबूर किया था, तब 2022 में इसकी आपूर्ति करने का वादा किया गया था। अब अगर 2027 तक इसका पहला बेड़ा भी परिचालन में आ जाए तो हम खुशकिस्मत होंगे। पांच साल की देरी की कीमत भी हमें चुकानी होगी।

इस बीच पाकिस्तान ने जेएफ-17 के कई संस्करण तैयार किए हैं, हालांकि इनके 57 फीसदी से अधिक स्वदेशी होने का दावा नहीं किया गया है। यह पाकिस्तान एयरक्राफ्ट कॉम्प्लेक्स और चेंगदू एयरक्राफ्ट कॉरपोरेशन का संयुक्त उपक्रम है। आने वाले कुछ महीनों में तेजस एमके 1ए की तैनाती इन कमियों को कुछ हद तक भर सकती है, लेकिन हिंदुस्तान एरोनॉटिक्स को नए स्वदेशी इलेक्ट्रॉनिक वारफेयर (ईडब्ल्यू) सूट को इसके एल्बिट (इजरायली) रडार, मिसाइल एकीकरण और अन्य तकनीकों के साथ समन्वित करने में संघर्ष करना पड़ा है, जिससे देरी बढ़ी है और इस बीच प्रतिद्वंद्वी भी रुके नहीं रहेंगे। चूंकि ये अधिकांशतः सॉफ्टवेयर संबंधी समस्याएं हैं, इसने हिंदुस्तान एरोनॉटिक्स को जीई इंजनों की देर से आपूर्ति का सामान्य बहाना भी नहीं दिया। अपना लड़ाकू विमान होना एक शानदार विचार है, लेकिन लगातार पिछड़ने की स्थिति में फंसे रहना हमारे लिए नुकसानदेह है। यही उन अनेक दुविधाओं का केंद्रीय मुद्दा है जिनकी हम चर्चा कर रहे हैं।

1950 के दशक के उत्तरार्ध में, जब पाकिस्तान को उसके शुरुआती सेबर विमान मिल रहे थे, तब तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की सरकार विकल्प खोज रही थी। सोवियत संघ से जुड़ाव तब तक नहीं हुआ था, सच्ची गुटनिरपेक्षता को लेकर प्रतिबद्धता प्रबल थी, लेकिन इसने सेना, विशेषकर वायु सेना के लिए भी मुश्किल पैदा की। भारतीय वायु सेना के पहले जेट विमान ब्रिटेन से आए वैम्पायर और फ्रांस के दसॉ ओरागन (तूफानी) आगमन पर ही अप्रचलित हो चुके थे, जिन्हें 1953 में शामिल किया गया। ब्रिटिश हंटर्स और जीनैट का अधिग्रहण, जिन्हें रॉयल एयर फोर्स ने त्याग दिया था, एक तात्कालिक समाधान था, लेकिन मिसाइल-सुसज्जित सेबर और रात में सक्षम स्टारफाइटर्स के साथ अंतर बना रहा।

इन बातों को देखते हुए 1950 के दशक के मध्य में नेहरू ने एक घरेलू सुपरसोनिक जेट फाइटर बनाने का निर्णय लिया। उनकी नजर जर्मन इंजीनियर कर्त टैंक पर पड़ी। कर्त ने ही सबसे सफल लुफ्तवेफ फाइटर एफडब्ल्यू-190 तैयार किया था। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान ऐसे 20,000 विमानों ने उड़ान भरी। चूंकि कर्त टैंक नाजी नहीं थे इसलिए उनकी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मांग थी। नेहरू उन्हें मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलजी का निदेशक बनाकर भारत लाए। उन्होंने जल्दी ही अपनी टीम बनाई। एपीजे अब्दुल कलाम उनकी टीम के सदस्य थे। एचएफ-24 मारुत नाम के विमान का डिजाइन शानदार था, लेकिन इसके लिए कोई इंजन उपलब्ध नहीं था। कुछ समय बाद टैंक लौट गए और भारत की कोशिश जारी रही।

ध्वनि से तेज जाने की आकांक्षा कभी पूरी नहीं हो सकी। इसका अधिकतम प्रदर्शन मैक 0.93 तक ही रहा और वह भी दो ऑर्फियस इंजनों के साथ, जिन्हें भारत छोटे, एक इंजन वाले विमान जीनैट के लिए बना रहा था। मिस्र के साथ मिलकर इंजन बनाने की परियोजना विफल रही। लेकिन लड़ाकू विमानों के प्रति इतना प्रबल राष्ट्रवाद था कि भारत ने फिर भी 147 ऐसे विमान बनाए जिनमें से 28 दुर्घटनाग्रस्त हो गए। इसे 1985 में इसे पूरी तरह सेवा से बाहर किया गया।

तेजस के साथ भी ऐसा ही कुछ हुआ। पहले सरकार ने 1983 में हल्के लड़ाकू विमान (एलसीए) को मंजूरी दी। उस समय रक्षा शोध एवं विकास संस्थान के प्रमुख रहे वीएस अरुणाचलम कई बार मजाक में इसे एलसीए यानी लास्ट चांस फॉर अरुणाचलम भी कहते। अपनी पहली उड़ान भरने में इसे 18 वर्ष और लगे, जिसे अटल बिहारी वाजपेयी ने 'तेजस' नाम दिया। प्रारंभिक परिचालन मंजूरी में 15 वर्ष और लगे, तथा पूर्ण परिचालन स्वीकृति में अतिरिक्त चार वर्ष। कहानी अब भी जारी है। यह भारतीय वायु शक्ति की संक्षिप्त और खेदजनक कहानी है, जो सात दशकों से पहले से चल रही एक हताश तकनीकी दौड़ में फंसी रही। अगर कोई तेजी से कमियों को दूर करने की बात करता है, तो उसे 'इम्पोर्ट बहादुर' कहकर खारिज कर दिया जाता है। मौन रहने के लिए प्रशिक्षित सेनाएं दुर्भाग्यवश अपने लिए कमजोर लॉबी बनाती हैं। वरना वे आपको बतातीं कि युद्ध में कोई आपको रियायत नहीं देता।

दुबई में हुई यह दुखद हानि और एक अत्यंत कुशल युवा जीवन का बलिदान हमारे आत्म-निर्मित सीमाओं और वायु शक्ति की कमियों पर विचार करने का महत्त्वपूर्ण क्षण है। यहां स्पष्ट कर दें कि ऐसा कुछ नहीं है जो यह दर्शाए कि इस विमान या इसके प्रकार, तेजस मार्क 1 में कोई खामी थी। लेकिन यदि यह हमें हमारी ढीली-ढाले रवैये की याद दिलाता है और बदलाव लाता है, तो इस बलिदान से भारत के लिए कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण हासिल हो सकता है।

भारत के आय सर्वेक्षण से जुड़ी चुनौतियां

एस चंद्रशेखर और अभिरूप मुखोपाध्याय

एक आदर्श दुनिया में राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) द्वारा अगले वर्ष आयोजित पारिवारिक आय सर्वेक्षण (एचआईएस) में भाग लेने वाले लोग (उत्तरदाता) फिल्म 'दीवार' के 'विजय' जैसे होंगे। उस अमर संवाद को याद कीजिए जब अमिताभ बच्चन (विजय), शशि कपूर (रवि) से कहते हैं: 'आज मेरे पास बंगला है, गाड़ी है, बैंक बैलेंस है।' माना कि यह बातचीत दो भाइयों के बीच हो रही है न कि एक सर्वेक्षक और एक उत्तरदाता के बीच। अगर परिवार अपनी प्रतिक्रियाएं देने में इतने ही तत्पर हों तो एचआईएस का संचालन बहुत आसान होगा।

पिछले 75 वर्षों में सांख्यिकीय प्रणाली ने दो कारणों से उपभोग व्यय के सर्वेक्षण किए हैं। पहला, परिवार आय के बजाय उपभोग व्यय का खुलासा करने में अधिक सहज होते हैं। दूसरा, भारत में खाद्य-सुरक्षा और भूख की समस्या थी और उपभोग पर ध्यान केंद्रित करना समझ में आता था। इसका मतलब यह नहीं है कि भारत परिवारों की आय के बारे में जानकारी एकत्र नहीं करता है। वार्षिक आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण में परिवारों के सभी कामकाजी सदस्यों की श्रम-बाजार आय के बारे में जानकारी होती है। कृषि परिवारों का स्थिति आकलन सर्वेक्षण (एसएएस) कृषक परिवारों से उनकी आय के विभिन्न स्रोतों के बारे में जानकारी एकत्र करता है। परिवारों की आय के बारे में जानकारियां अन्य स्रोतों से भी उपलब्ध हैं, जिनमें भारत मानव विकास सर्वेक्षण, उपभोक्ता पिरामिड पारिवारिक सर्वेक्षण, नाबार्ड (राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक) वित्तीय समावेशन सर्वेक्षण आदि शामिल हैं। एचआईएस की योजना के हिस्से के रूप में सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय ने सर्वेक्षण आयोजित करने में आने वाली चुनौतियों को समझने के लिए एक प्रायोगिक सर्वेक्षण आयोजित कर सावधानी बरतने का निर्णय लिया है। इसमें क्षेत्रों से मिली प्रतिक्रिया प्राथमिक चिंता की पुष्टि करती है। वह चिंता यह है कि 95 फीसदी उत्तरदाताओं ने साक्षात्कारकर्ता को आय के विभिन्न स्रोतों के बारे में जानकारी देने में सहज महसूस नहीं किया। चूंकि, परिवार अपनी आय कम कर बताते हैं, इसलिए कुछ को 'आमदनी अठन्नी खर्चा रुपैया' के रूप में वर्गीकृत किया जाएगा। अधिकांश उत्तरदाताओं ने भुगतान किए गए आयकर पर सवालों के जवाब देने से इनकार कर दिया। इन कारणों से विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों से लाभ प्राप्त करने वाले परिवारों और व्यक्तियों की संख्या के सर्वेक्षण-आधारित अनुमान हमेशा प्रशासनिक आंकड़ों में बताए गए आंकड़ों से कम होंगे। सर्वे के समय के संबंध में भी एक और चुनौती है। अगर उत्तरदाता कामकाजी सदस्य है तो वह व्यक्ति सुबह काम के लिए तैयार होने में व्यस्त रहता है, दिन के दौरान काम पर होता है और शाम को थका-हारा घर पहुंचता है। तो क्या हम परिवार के गैर-कामकाजी सदस्य को उत्तरदाता बना सकते हैं?

एचआईएस से प्राप्त जानकारियां महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि अधिकांश भारतीय अनौपचारिक क्षेत्र में काम करते हैं और आयकर रिटर्न नहीं भरते हैं। यह सर्वेक्षण न केवल श्रम आय पर जानकारी एकत्र करने के बारे में है बल्कि निवेश से होने वाली आय के बारे में भी है। यह पूरी तरह संभव है कि परिवार यह कहकर जवाब दे सकते हैं कि वे निवेश नहीं करते हैं। 'संतोषजनक' के रूप में जानी जाने वाली यह घटना तब होती है जब उत्तरदाता सटीक उत्तर देने के बजाय वह कहते हैं कि जो वह ठीक समझते हैं। यह मुद्दा अखिल भारतीय ऋण एवं निवेश सर्वेक्षण, 2026 में सामने आएगा। परिवार अपनी वित्तीय संपत्तियों के बारे में जानकारी देने में अनिच्छुक हो सकते हैं।

हितधारकों को महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है। क्या होगा अगर वर्तमान सर्वेक्षणों की तरह प्रतिक्रिया दर 100 फीसदी से काफी कम होती है? गैर-श्रम आय पर प्रश्नों के लिए प्रतिक्रिया न मिलने की दर अधिक होने की संभावना है। पिछली तिमाही में प्राप्त ब्याज के सवाल पर क्या यह ठीक है यदि उत्तरदाता कहते हैं कि उन्हें उत्तर नहीं पता है। या अनुमानित उत्तर पर्याप्त हैं? क्या आप, पाठक, अपनी ब्याज आय बिना पता किए बता सकते हैं? कृषि परिवारों के स्थिति आकलन सर्वेक्षण का समय एचआईएस के साथ टकराएगा। स्थिति आकलन सर्वेक्षण के आधार पर कृषि परिवारों की आय का अनुमान लगाया जाता है।

एक केंद्रित सर्वेक्षण होने के नाते इस सर्वेक्षण में प्रत्येक प्रश्न को जिस तरह अलग-अलग स्तर पर पूछा जाता है वह आय सर्वेक्षण की तुलना में अधिक है। सर्वेक्षण-पद्धति सामग्री से एक अंतर्दृष्टि यह मिलती है कि जब प्रश्नों को उच्च स्तर के पृथक्करण यानी अलग-अलग स्तर पर पूछा जाता है तो एक प्रश्न की तुलना में जानकारी अधिक सटीक रूप से प्राप्त होती है। जब तक विश्लेषक इस तरह के अंतरों को ध्यान में नहीं रखते हैं तब तक दो सर्वेक्षणों में अनुमानों की तुलना करने से गलत निष्कर्ष निकलेंगे।

अगर इतनी सारी समस्याएं हैं तो एचआईएस आयोजित करने जहमत क्यों? ऐसा इसलिए है क्योंकि हमें उपभोग व्यय के सर्वेक्षण के आधार पर गरीबी के अनुमानों से आगे बढ़ने और आय की पर्याप्तता पर बातचीत शुरू करने की आवश्यकता है। यह याद रखना उचित है कि 'जीवन यापन के लिए वेतन-पारिश्रमिक' और 'एक स्तरीय जीवन स्तर' शब्द भारत के संविधान के अनुच्छेद 43 में उल्लिखित हैं।

आइए हम स्वीकार करें कि एचआईएस 2026 को क्रियान्वित करना एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। चुनौतियों को देखते हुए सर्वेक्षण टीम का आदर्श वाक्य फिल्म 'मुन्ना भाई एमबीबीएस' में 'सर्किट' (अरशद वारसी) के संवाद को प्रतिध्वनित करना चाहिए 'फुल कॉन्फिडेंस में जाने का और एकदम विनम्र के साथ बात करने का'।

(लेखक क्रमशः इंदिरा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ डेवलपमेंट रिसर्च, मुंबई और भारतीय सांख्यिकी संस्थान, नई दिल्ली में प्रोफेसर हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

आपका पक्ष

स्वदेशी कच्चे तेल भंडारों का उपयोग बढ़े

काफी समय से डॉलर के सापेक्ष रुपये की गिरती कीमतों पर चिंता और समीक्षा के समाचार वास्तव में गहन विचार और दीर्घकालिक निर्णय के विषय हैं। यह रिजर्व बैंक की सीमा से बाहर का विषय है क्योंकि यदि रिजर्व बैंक कुछ हल निकाल सकता तो यह स्थिति नहीं आती। केंद्र सरकार को ओएनजीसी के साथ मिलकर तेल कुओं की क्षमता एवं विस्तार पर प्रगति की ओर बढ़ना चाहिए। एक बार फिर से पूरे देश के संभावित क्षेत्रों में ओएनजीसी द्वारा नए सिरे से कच्चे तेल एवं प्राकृतिक गैस के भंडारों के लिए सर्वे प्रारंभ किया जाना चाहिए। अपतटीय व तटवर्ती तेल व गैस भंडार आज भी भूगर्भीय सर्वे के अभाव में इस्तेमाल नहीं हो रहे। आज अमेरिका, रूस, मेक्सिको, वेनेजुएला, मध्य पूर्व एशिया के देशों ने तेल और गैस को हथियार बना दिया है और इसकी प्रतिस्पर्धा ने प्रतिबंधों को विदेश नीति और डिफेंस स्ट्रेटजी बना ली है। तो

पूरे देश के संभावित क्षेत्रों में ओएनजीसी को नए सिरे से कच्चे तेल एवं प्राकृतिक गैस के भंडार के लिए सर्वे शुरू करना चाहिए

भारत को भी अपनी परंपरागत नीति से ऊपर उठकर अपने तेल भंडारों का अधिक से अधिक शोधन करने की आवश्यकता है। जैव ईंधन और सौर ऊर्जा पर चर्चा बहुत है परंतु धरातल पर इसका व्यवसायिक उपयोग कम है। इसके अतिरिक्त घरेलू मांग पर नियंत्रण करके भी तेल आयात कम करने की आवश्यकता है और इसके लिए कठोर कदम जैसे ऑड-ईवन ट्रैफिक नियमित करना एक जनप्रिय कदम होगा क्योंकि ट्रैफिक समस्या विकराल हो चुकी है। केंद्र सरकार को युद्ध स्तर पर निर्णय लेने की आवश्यकता है।

विनोद जौहरी, दिल्ली

बीएलओ की मौत चिंताजनक

इन दिनों देश के 12 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में मतदाता सूची का विशेष गहन पुनरीक्षण (एस-आईआर) का महाअभियान चल रहा है। निश्चित ही इस अभियान से मतदाता सूची का शुद्धिकरण होगा तथा सूची में मृतकों, एक से एक अधिक स्थानों पर दर्ज मतदाता,दोहरी प्रविष्टि वाले मतदाता की छंटनी होने के साथ जो देश के नागरिक नहीं घुसपैठिए है,वे चिह्नित होंगे और उन्हें बाहर का रास्ता दिखाया जाएगा। लेकिन इस अभियान का सबसे दुखद पहलू यह है कि कुछ बूथ स्तरीय अधिकारियों (बीएलओ) के आत्महत्या करने की खबर पढ़ने- सुनने को मिली है, जो चिंतित करने वाली बात है। दरअसल काम का दबाव मुख्य कारण बताया जा रहा है। वास्तविकता तभी सामने आएगी, जब गहन जांच कर अंतिम निष्कर्ष पर पहुंचा जाएं। यह कड़वी सच्चाई है कि ऐसे गहन अभियान के लिए एक महीने का समय बहुत कम है। कम से कम तीन महीने का समय जरूरी है। गणना प्रपत्र (ईएफ) भरने में पढ़े-लिखे लोग चकरा रहे हैं तो ग्रामीणों व अनपढ़ों, कम पढ़े-लिखे से कैसे उम्मीद कर सकते हैं कि वे उक्त फार्म को सही-सही जानकारी से भर सकें। बीएलओ को पर्याप्त समय दिया जाए तो निश्चित ही सही व शुद्ध काम होगा व कम समय का दबाव भी नहीं होगा। चुनाव आयोग को मानवीय दृष्टिकोण को मद्देनजर रखते हुए समय के प्रबंधन पर ध्यान देना बेहद जरूरी था। उम्मीद है कि चुनाव आयोग इसपर विचार करेगा।

हेमा हरि उपाध्याय, उज्जैन

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

केंद्रीय वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री पीयूष गोयल ने रविवार को इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू से मुलाकात की। इस दौरान वहां के अर्थव्यवस्था और उद्योग मंत्री नीर बरकत भी मौजूद रहे। भारत और इजरायल अपने प्रस्तावित मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) को दो चरणों में लागू करने पर विचार कर रहे हैं ताकि दोनों देशों के व्यापारिक समुदाय को जल्द लाभ मिल सके।

नवभारत टाइम्स • विचार

नवभारत टाइम्स । मुंबई । सोमवार, 24 नवंबर 2025

> न्याय सामाजिक संस्थाओं का प्रथम गुण है।
> – जॉन रॉल्स, अमेरिकी विचारक

क्रीमीलेयर पर सुझाव

अपने कार्यकाल के आखिरी दिन भी चीफ जस्टिस बीआर गवई ने आरक्षण से जुड़े उस महत्वपूर्ण मामले को उठाया, जिस पर वह बोलते रहे हैं। उन्होंने अनुसूचित जाति-अनुसूचित जनजाति (SC/ST) में भी क्रीमीलेयर लागू करने की वकालत की। चीफ जस्टिस ने इस मुद्दे से जुड़े जिन पहलुओं को उठाया, वे अपनी जगह बिल्कुल सही हैं और उन पर गौर किया जाना चाहिए।

आरक्षण का उद्देश्य । चीफ जस्टिस ने कहा कि रिजर्वेशन उसी को मिलना चाहिए, जो जरूरतमंद है। आरक्षण का उद्देश्य भी सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना और ऐतिहासिक रूप से पिछड़े वर्गों को आगे बढ़ने के लिए समान अवसर प्रदान करना है। लेकिन पिछड़े वर्गों के भीतर भी जो आगे बढ़ चुके हैं, उन्हें हमेशा के लिए यह लाभ नहीं मिलना चाहिए।

CJI की दो टूक

पुराना मुद्दा । क्रीमीलेयर का सवाल नया नहीं है। तमिलनाडु सरकार ने 1969 में पिछड़े वर्गों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए सत्तनाथन कमिशन का गठन किया था और क्रीमीलेयर का कॉन्सेप्ट पेश किया। 1986 में कर्नाटक सरकार से जुड़े एक मुकदमे में शीर्ष अदालत ने कहा था कि राज्य सरकार को आर्थिक आधार पर जांच लागू करनी चाहिए ताकि सही लोगों को आरक्षण का लाभ मिल सके।

OBC में पहले से लागू । इस मामले में इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ का मुकदमा नजीर है। इसी में सुप्रीम कोर्ट ने आरक्षण की सीमा 50% और OBC में क्रीमीलेयर लागू करने का फैसला दिया था। इसके बाद केंद्र ने एक आयोग गठित किया, ताकि क्रीमीलेयर परिभाषित हो सके। एक वर्ग में क्राइटेरिया तय है, तो इसे दूसरे वर्गों में भी आजमाने में दिक्कत नहीं आनी चाहिए।

सभी तक फायदा पहुंचे । सुप्रीम कोर्ट ने पिछले साल अगस्त में SC/ST कैटिगरी के भीतर सब-कैटिगरी को मंजूरी दी थी। इसका मकसद यही था कि वर्ग के भीतर मौजूद हर जाति तक आरक्षण का फायदा पहुंचे और कोई खास तबका ही लाभान्वित न होता रहे। क्रीमीलेयर भी इसी मकसद के लिए जरूरी है। 50 साल पहले जस्टिस कृष्ण अय्यर ने आरक्षण की इसी खामी की ओर ध्यान दिलाया था कि ऊपरी तबका सारे लाभ ले जाता है।

सभी के लिए मौका । पूरे देश में इस समय आरक्षण की सीमा को लेकर चर्चा है। एक बड़ी मांग है कि 50% लिमिट नहीं होनी चाहिए। लेकिन, अगर जरूरतमंदों को फायदा नहीं मिल रहा, तो कोई भी लिमिट आरक्षण के उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकती। जो आगे बढ़ चुके हैं, उन्हें दूसरों का रास्ता रोकने के बजाय, आगे से हटकर पीछे वालों को रास्ता देना चाहिए।

नश्तर

कॉरपोरेटिया और पौधे

कॉरपोरेटिया पति ऑफिस से घर लौटा। पत्नी ने लिस्ट थमाते हुए कहा, 'ये सब्जियां और कुछ मसाले ले आओ।' 'अभी तो मार्केट से ही लौटा हूं, फिर जाऊं?' उसने झल्लाकर कहा। पत्नी की त्योरियां तनी ही थीं कि पति सॉल्यूशन निकालने पर आ गया, 'एक काम क्यों नहीं करतीं, दिन भर की जरूरतों की एक एक्सएल शीट बनाकर क्लाउड पर अपलोड कर दिया करो। मैं ऑफिस से निकलते वक्त देख लिया करूंगा।' चाय का कप थमाते हुए पत्नी ने आंखों से कहा, 'अप्रूव्ड।'

सौरभ श्रीवास्तव

अगले दिन पति सामान लेकर खुशी-खुशी घर पहुंचा। पत्नी ने सामान मिलाया और कहा, 'सब गलत - टमाटर एक किलो लाने थे, आधा किलो लाए हो। आलू लाने नहीं थे, दो किलो ले आए। धनिया पाउडर 100 ग्राम लाना था, 200 ग्राम ले आए हो।' पति ने क्लाउड पर लिस्ट की हिस्ट्री देखी। लिस्ट अपडेट की गई थी। उसे अपने बॉस की याद आई और आंखों में आंसू। बेचारे को वापस जाना पड़ा। लौटने पर कहा, 'चाय बना दो।' 'रिक्वेस्ट पहले रेज करनी थी, अब तो खाना बनाने का टास्क शुरू हो गया है।' रात में उसने दिनभर का दुखड़ा रोना शुरू किया, तो पत्नी ने जंभाई लेते हुए कहा, 'पीपीटी बना दो, सुबह देख लूंगी।' पति को फिर बॉस की याद आई। उन्हें याद करते-करते वह भी सो गया। पति को सपने में बॉस दिखे। मंडी में कागज पर बनी लिस्ट लिए सब्जी खरीद रहे थे। उसने बॉस से कहा, 'आप कागज का इस्तेमाल कर रहे हैं! हर साल कितने पेड़ काटे जाते हैं, कागज बनाने के लिए।'

बॉस मुस्कुराए और बोले, 'कागज पर बनी लिस्ट लगातार अपडेट नहीं होती, तय होने के बाद टास्क बदलता नहीं। अब तय करो पेड़ बचाओगे या खुद को?' सपने के हैंगओवर के साथ कॉरपोरेटिया जागा और तैयार होकर ऑफिस पहुंचा। चपरासी डेस्क पर रखे पौधों को पानी दे रहा था। उसने लैपटॉप ऑन किया और सोचने लगा, 'रोज पानी दिए जाने बाद

एकदा

संकलन : रेनू सैनी

विज्ञान का मंदिर

बात उन दिनों की है, जब विक्रम साराभाई और होमी जहांगीर भाभा को अंतरिक्ष अनुसंधान केंद्र के लिए भूमध्य रेखा के आसपास एक ऐसी जगह की तलाश थी, जहां शांति से रिसर्च वर्क किया जा सके। दोनों वैज्ञानिक थुंबा नामक स्थान पर पहुंचे। यह स्थान उन्हें उपयुक्त लगा। बाकी सब तो व्यवस्थित करना मुश्किल नहीं था, लेकिन अड़चन यह थी कि उस स्थान पर चर्च और बिशप हाउस था। साराभाई ने इस बारे में बात करने के लिए बिशप से संपर्क किया।

बिशप को जब यह ज्ञात हुआ कि यह स्थान विज्ञान अनुसंधान केंद्र के लिए सर्वथा उपयुक्त है तो वह साराभाई से बोले, 'विज्ञान और आध्यात्मिकता का अंतिम लक्ष्य मानव जीवन को सुखी और समृद्ध बनाना है। ईश्वर के स्वरूप अलग-अलग हैं, उनका उद्देश्य एक है। जब सभी धर्मों के लोग परस्पर मिलकर रहेंगे, हर धर्म का सम्मान करेंगे, विज्ञान को नई ऊंचाइयों की ओर लेकर जाएंगे तो एक नवीन भारत का उदय होगा। उस भारत में प्रेम, भाईचारा, विश्वास और करुणा के साथ विकास होगा। इसलिए मुझे बेहद खुशी होगी कि इस स्थान पर अब चर्च के बजाय विज्ञान का मंदिर रहेगा।' इस तरह थुंबा में रॉकेट प्रक्षेपण केंद्र की स्थापना हुई।

पश्चिमी देशों में स्वास्थ्य से लेकर कृषि क्षेत्र तक में भारी सब्सिडी दी जाती है

भारत में वेलफ़ेयर से परेशानी क्यों

आलोक मेहता

भारतीय राजनीति-आर्थिक नीतियों के बारे में जिन विशेषज्ञों को गंभीरता से सुना जाता है, उनमें भारतीय अमेरिकी रुचिर शर्मा का नाम प्रमुख है। मॉर्गन स्टैनली, रॉकफेलर कैपिटल मैनेजमेंट, ब्रेकआउट नेशन्स जैसी संस्थाओं में उनकी लंबे समय की भूमिका, वैश्विक बाजारों की समझ और भारत पर शोध-आधारित लेखन से उन्हें प्रभावशाली विश्लेषक माना जाता है। पर बिहार चुनाव पर उनकी प्रतिक्रिया मुझे अनुचित और दुखद लगी।

AI Image

ब्रिटेन-अमेरिका में सब्सिडी कल्चर । रुचिर शर्मा ने लिखा है कि 'मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के पास आर्थिक प्रगति को लेकर कोई नई सोच नज़र नहीं आती, फिर भी उनकी जीत अच्छा संकेत नहीं है। कई बड़े लोकतांत्रिक देशों में जनता आक्रोश में आकर सरकारें बदल रही हैं, लेकिन भारत में ऐसा नहीं हो रहा।' यही नहीं उनका कहना है कि 'धीमी गति और विकास से ज्यादा कल्याणकारी योजनाओं को प्राथमिकता देने के जाल में फंसना भारत के लिए अच्छा नहीं है।' वे इस स्थिति को 'वेलफ़ेयर ट्रैप' (कल्याण-जाल) कहते हैं- जहां विकास की बुनियादी प्रक्रियाएं धीमी हो जाती हैं और सरकार की प्राथमिकता केवल अनुदान, सब्सिडी और कैश-ट्रांसफर में सिमट जाती है।

रुचिर शर्मा अकेले नहीं हैं, अमेरिकी या यूरोपीय आर्थिक चश्मे से देखने वाले कई भारतीय विश्लेषक भी गरीबों को मुफ्त राशन, मकान, गैस, अपने रोजगार के लिए महिलाओं को दस हजार रुपये आदि दिए जाने को गलत बताते हैं। रुचिर शर्मा चुनावों के दौरान एक टूरिस्ट की तरह भारत में घूमते, इंटरव्यू देते और लिखते हैं। वे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी या नीतीश कुमार सहित मुख्यमंत्रियों की लोकप्रियता पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं।

रुचिर शर्मा सहित अन्य विदेशी विशेषज्ञों को इस तथ्य पर ध्यान देना चाहिए कि ब्रिटेन में इस साल भी सरकार कम आय वर्ग को लाखों घर बनाकर देने की घोषणा कर रही है। अर्धशिक्षित निठल्ले लोगों को 400 से 2000 पाउंड्स तक मासिक भत्ते, कमजोर स्वास्थ्य सुविधाओं, डॉक्टरों, नर्सों की कमियों के बावजूद सभी ब्रिटिश नागरिकों को मुफ्त इलाज, सिंगल मदर को बच्चों के पालन-पोषण के खर्च का 85% अनुदान दे रही है। किसानों को जमीन के आधार पर जरूरी सब्सिडी और मुफ्त बीमा दे रही है।

> **बेकार का विरोध**
> - भारत में गरीबों की वित्तीय मदद बिल्कुल सही है
> - ब्रिटेन-अमेरिका में भी ऐसी सब्सिडी दी जा रही हैं
> - रोजगार में राजनीतिक चुनौती होने की बात सही

इसी तरह अमेरिका में मक्का, गेहूं, सोयाबीन, कपास, चावल आदि पर किसानों को पर्याप्त सब्सिडी सरकार दे रही है। हर पांच साल में किसानों के नाम पर अरबों डॉलर के बजट प्रावधान का विधेयक संसद से पारित होता है। भारत में मोदी सरकार या राज्यों में विभिन्न दलों की सरकारें जनता की जरूरत के अनुसार सब्सिडी और सहायता तय करती हैं।

रुचिर शर्मा के अनुसार, 'बिहार ने 2005 से 2015 के बीच प्रभावशाली विकास-दशक देखा। सड़कें, कानून-व्यवस्था, स्कूलिंग और प्रशासनिक सुधारों ने राज्य को पहली बार लंबे समय की स्थिर वृद्धि दी। लेकिन 2015 के बाद राज्य एक नई चुनौती के दौर में प्रवेश कर गया, जहां विकास का ग्राफ स्थिर होने लगा और राजनीतिक विमर्श कल्याणकारी राजनीति की ओर मुड़ गया।'

आश्चर्य है कि उन्हें पटना से लेकर कर्पूरी ग्राम समस्तीपुर, दरभंगा, गया, राजगीर, नालंदा, भागलपुर में हुई प्रगति - सड़कें, दुकानें, स्कूल, मेडिकल कॉलेज, स्पोर्ट्स यूनिवर्सिटी, मधुबनी हाट और देश दुनिया में मधुबनी या भागलपुरी कपड़े की लोकप्रियता का लाभ नहीं दिखाई दिया। बिहार के लोग घर-गांव या देस-परदेस जाकर जो कमाई करते हैं, उससे भी गांवों-शहरों की तस्वीर बदल रही है। उनके जैसे विशेषज्ञ बदलाव को महत्व देने से पहले भ्रष्ट राजनीतिक सत्ता का अधिक उल्लेख नहीं करते। नीतीश ही क्यों ज्योति बसु, नवीन पटनायक जैसे मुख्यमंत्रियों ने तो 25 साल से अधिक राज किया। ईमानदार नेतृत्व का लाभ भी राजनीतिक दलों को मिलता है।

मुझे पता नहीं रुचिर शर्मा कब अमेरिका में बसे, लेकिन मैंने 1987 में अमेरिका के हिस्पैनिक बहुल आबादी वाले इलाके का बुरा हाल देखा है। अमेरिका के सैन फ्रांसिस्को शहर में आज भी भारत या अन्य देशों से आने वाले बिजनेस प्रोफेशनल्स को रात के समय बाहर कम निकलने और अपराध से बचने की एडवाइजरी दी जाती है। लंदन में तो ऑक्सफ़र्ड स्ट्रीट पर भी पैदल चलते पर्स, मोबाइल छीने जाने का खतरा, घरों में बढ़ती चोरी, सुपरमार्केट में घुसकर जरूरी सामान लूटे जाने पर अंकुश नहीं लग सका है। यहां बिहार ही नहीं दूरदराज आदिवासी इलाके में दिन दहाड़े मोबाइल या पर्स छीने जाने की घटना शायद ही कभी दिखाई देगी।

रुचिर शर्मा की यह बात जरूर सही है कि 'अभी भारत में सामाजिक पहचान और जाति-राजनीति पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है, वह केवल रूप बदल रही है।' शायद इसीलिए नरेंद्र मोदी विकासवादी व्यवस्था के लिए अभियान चला रहे हैं। दूसरी तरफ, डॉनल्ड ट्रंप अपने 'श्वेत' बंधुओं के हितों के नाम पर G20 शिखर सम्मेलन में दक्षिण अफ्रीका नहीं गए हैं।

रोजगार है बड़ी चुनौती । रुचिर शर्मा की यह बात एक हद तक सही है कि भारत की सबसे बड़ी राजनीतिक चुनौती रोजगार है और यह समस्या चुनावों के परिणामों को लगातार प्रभावित करेगी। लेकिन बिहार में राहुल गांधी, तेजस्वी यादव और प्रशांत किशोर ने बेरोजगारी का मुद्दा और रोजगार के अविश्वनीय लुभावने वायदे किए, पर युवक भ्रमजाल में नहीं फंसे। असल में पिछले वर्षों के दौरान जागरूक शिक्षित युवा लाखों की संख्या में अपना काम धंधा या अन्य छोटे बड़े उद्यमों से जुड़ रहे हैं। हां, अभी कौशल विकास के लिए चीन की तरह व्यापक कार्यक्रमों को विभिन्न राज्यों में क्रियान्वित करने की चुनौती बनी हुई है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

ज़िंदगी के बारे में बहुत कुछ सिखाता है गेंदा फूल

AI Image

जीवन आनंद
शैलेंद्र पांडेय

कुंभ में इतना सब कुछ हो कैसे जाता है? कहां से सब कुछ आता है और आखिर में कहां चला जाता है? हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के 30 स्टूडेंट्स के ग्रुप ने 2013 में यही सब जानने के लिए कुंभ मेले की मैपिंग की। वहां सबसे ज्यादा खुशबू फैली थी गेंदे के फूलों की। प्रयागराज के बाजार से मेले के अखाड़ों तक, गेंदा कैसे-कैसे पहुंचता है, स्टूडेंट्स ने यह सब नोट किया। इसी दौरान उन्होंने देखा कि काम खत्म होने के बाद मेले की जमीन में ही उन फूलों को गाड़ दिया गया। हार्वर्ड के ग्रुप ने इस यात्रा में जीवन का एक गहरा संदेश देखा - धरती की चीज आखिर में धरती को समर्पित।

गेंदे की यह यात्रा ही नहीं, खुद गेंदा भी अपने में इतना ही गहरा संदेश लिए हुए है। यह फूल बाहर से जितना सरल लगता है, असल में है उतना ही जटिल। इसकी जटिलता इसकी संरचना, इसके विकास और इसके स्वरूप से जुड़ी है। और जब इसका मौसम फिर पीक पकड़ रहा है, तब इसकी जटिलता को समझना उस संदेश को समझने के साथ-साथ आनंद को भी महसूस करना है।

गेंदे का फूल दिखता एक है पर होता नहीं। जिन्हें हम पंखुड़ियां समझते हैं, वे हकीकत में पंखुड़ी नहीं एक पूरा फूल हैं - यानी एक फूल दरअसल सैकड़ों फूलों का गुलदस्ता, जिसे खुद तैयार किया है प्रकृति ने। इतना मुश्किल पैटर्न बनाना किसी और के बस की बात थी भी नहीं। यह फूल अपने आप में उदाहरण है बहुलवाद का, जहां सब अलग होते हुए भी एक-दूसरे से बंधे हैं। इनकी ताकत इसी एकता में है। खुद सोचिए, अगर गेंदा वैसा न होता, जैसा है, तो छोटे-छोटे फूल क्या किसी को इतना लुभा पाते? यह कह रहा है कि खुशी बढ़ती है साथ रहने से, बांटने से और मिलकर कुछ बनाने से। परिवार, दोस्त, सहकर्मी - हर रिश्ता हमारी जिंदगी में ऐसा ही रंग भरता है। सामंजस्य और साथ चलने की इसकी आदत से सीखने की ही बात तो छत्तीसगढ़ी लोकगीत में गूंजती है - ससुराल गेंदा फूल।

लेकिन, इसकी संरचना जितनी कठिन है, इसे उगाना उतना ही आसान। सूखे फूलों को बस मिट्टी चाहिए और थोड़ी-सी नमी। इस सरलता को अपनाना आसान नहीं - इसका मतलब है कि कोई चाहे सफलता के किसी भी सोपान पर हो, लेकिन दूसरों के लिए हमेशा उतना ही सहज रहना।

गेंदे के फूल की सबसे खूबसूरत बात है कि इसका विकास कभी रुकता नहीं। बाहर से यह एक पूरा खिला हुआ गोल फूल दिखता है, लेकिन इसके केंद्र में नए-नए छोटे फूल जन्म लेते रहते हैं। यही राज है इसकी ताजगी का। जीवन भी बाहर से भले स्थिर दिखे, पर भीतर सीखने, बढ़ने और खुद को नया बनाने

THE SPEAKING TREE
और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

पहचान से जुड़ा है धर्म, इसलिए यह पुराना नहीं पड़ता

संतोष देसाई

हमारे जीवन के असंख्य आयाम बदल गए हैं, पर एक चीज आज भी लगभग वैसी ही है - धर्म पर मनुष्य का विश्वास। विज्ञान की प्रगति, तर्क की तीक्ष्णता और आधुनिक जीवन की गति के बावजूद दुनिया का बड़ा हिस्सा अब भी किसी न किसी ईश्वर में आस्था रखता है, प्रार्थना करता है, और दिखाई न देने वाली किसी शक्ति से मार्गदर्शन चाहता है।

आश्चर्य यह है कि एक ऐसी चीज, जो अदृश्य और अमूर्त है, मनुष्य के जीवन पर इतनी गहरी पकड़ कैसे बना लेती है? स्पष्ट है कि हमें मानने की आवश्यकता होती है। धर्म हमारे भीतर छिपी उस गहरी मानवीय इच्छा को पूरा करता है, जिसमें हम अपने अकेलेपन और जिम्मेदारियों के बोझ से बचकर किसी व्यापक सत्ता में शरण लेना चाहते हैं। धर्म बताता है कि हम अकेले नहीं हैं, कोई सर्वज्ञ शक्ति हमारे साथ है।

AI Image

लेकिन यह बात केवल धर्म की आवश्यकता को समझाती है, यह नहीं समझाती कि संगठित धर्म इतने लंबे समय तक कैसे टिके रहते हैं। इसका उत्तर धर्म की उस अद्भुत क्षमता में है, जिसमें वह अदृश्य को दृश्यमान बना देता है। ज्यादातर लोग किसी गूढ़ दर्शन को नहीं समझते। वे धर्म को उसके चिह्नों के माध्यम से अपनाते हैं। मंदिरों के ऊंचे शिखर, मस्जिदों से गूंजती अजान, गिरजाघरों की भव्यता - ये सभी दिव्यता को पत्थरों और संरचनाओं में बदल देते हैं। ग्रंथ धीरे-धीरे पवित्रता का रूप लेते हैं, और साधारण मनुष्य स्मृति में देवत्व पाता है।

रोजमर्रा की क्रियाएं- सवेरे की प्रार्थना, भोजन से पहले आशीष, व्रत, तिलक, धागे, त्योहार विश्वास को आदतों में बुन देती हैं। भाषा तक पवित्रता को ढोती है - 'इंशाअल्लाह', 'राम-राम', 'ब्लेस यू' - मानो दिव्यता हमारे रोजमर्रा के संवाद में घुली हो। इन सतत क्रियाओं और संकेतों के कारण धर्म केवल मान्यताओं का नहीं, बल्कि पहचान का माध्यम बन जाता है।

धर्म के स्थायित्व का रहस्य यही है कि वह बदलते समय के साथ अपने रूप तो बदलता है, पर अपनी सार्थकता को बनाए रखता है। वह केवल मन का विश्वास नहीं, बल्कि जीवन का पूरा तंत्र है। एक ऐसी जीवित व्यवस्था, जहां हर gesture, हर वचन, हर अनुष्ठान विश्वास को टिकाए रखता है ताकि जीवन और धर्म का तालमेल सदा कायम रहे।

डेटा Window

कांटे की बात

अतुल लोंधे, कांग्रेस के राष्ट्रीय प्रवक्ता

क़द छोटा, पर 'गोल' बड़ा

Poli-tickle

R PRASAD

निरंकुश सत्ता की हिमायती सिलिकॉन वैली

मृत्युंजय राय

'Gilded Rage: Elon Musk and the Radicalisation of Silicon Valley' में बताया गया है कि इलॉन मस्क जैसे टेक्नॉलजी की दुनिया के बादशाह किस तरह से धुर दक्षिणपंथी राजनीतिक कार्यकर्ता में बदल गए हैं। इस किताब के लेखक जैकब सिल्वरमैन (Jacob Silverman) ने बताया है कि टेक्नॉलजी के मस्क जैसे बादशाहों की ये हरकतें लोकतंत्र और समाज के लिए खतरा बन गई हैं।

उदारवाद की राह छोड़ी । सिल्वरमैन ने इस किताब में रिपोर्टिंग के अपने अनुभवों का सहारा लिया है। साथ ही, उन ऐतिहासिक वजहों का भी जिक्र किया है, जिसकी वजह से सिलिकॉन वैली की ताकतवर हस्तियां उदारवाद को छोड़कर तानाशाही सोच की हिमायती बन गई हैं। सिल्वरमैन ने किताब में इसकी वैचारिक वजहें भी बताई हैं।

सामूहिक जीवनी । किताब को एक तरह से सामूहिक जीवनी भी माना जा सकता है, जिसमें किरदार बदलते रहते हैं। इसके केंद्र में टेस्ला और स्पेसएक्स के संस्थापक इलॉन मस्क हैं। इनके साथ किरदारों में पीटर थील, अमेरिका के वाइस प्रेजिडेंट जेडी वांस, डेविक सैक्स और अन्य प्रभावशाली पूंजीपति भी शामिल हैं। सिल्वरमैन सैन फ्रैंसिस्को से लेकर मियामी और वॉशिंगटन में बढ़ते राजनीतिक ध्रुवीकरण प्रयोगों का जिक्र करते हैं।

ट्रंप का रोल । अभी ज्यादा वक्त नहीं गुजरा जब सिलिकॉन वैली के बिलियनेयर उदारवादी सोच की पैरवी कर रहे थे। तब हाल यह था कि उन्हें संप्रभु सरकारें संदिग्ध लगती थीं। फिर इन लोगों ने किन वजहों से पॉपुलिस्ट और निरंकुश लीडर्स का साथ देना शुरू किया? खासतौर पर डॉनल्ड ट्रंप के पहले कार्यकाल के बाद से।

विचार विंडो

AI Image

टेक बिलियनेयर्स का खेल । सिल्वरमैन बताते हैं कि जो सैन फ्रैंसिस्को कभी टेक्नॉलजी की दुनिया में प्रगतिशील सोच का नेतृत्व करता था, वह इन बिलियनेयर्स के लिए जंग का मैदान बन चुका है। सिल्वरमैन के मुताबिक, मस्क इसके लिए काफी जोर लगा रहे हैं। वह अपने सोशल मीडिया प्लैटफॉर्म X से वैचारिक प्रभाव बढ़ा रहे हैं।

लोकतंत्र पर खतरा । सिल्वरमैन लिखते हैं कि मस्क और थील जैसे लोग सरकारी नीतियों को प्रभावित करने के लिए अपना दखल बढ़ाना चाहते हैं। ये लोग कहने को तो वैचारिक आजादी की बातें करते हैं, लेकिन ऐसी नीतियों का समर्थन करते हैं, जिससे उनकी अपनी ताकत बढ़े और लोकतांत्रिक संतुलन बनाने वाली संस्थाएं कमजोर हों। सिल्वरमैन लोगों से इस राजनीतिक बदलाव के खिलाफ आवाज उठाने की अपील करते हैं। वह याद दिलाते हैं कि किस तरह से लोकतंत्र का कमजोर होना जनता के लिए ठीक नहीं है। वह लिखते हैं कि आधुनिक समाज में सत्ता का यह खेल रुकना चाहिए।

रीडर्स मेल
www.edit.nbt.in

आतंक पर लगाम

लाल किले के पास आतंकी हमले मामले में एनआईए की जांच में जिन छह आरोपियों की गिरफ्तारी हुई है, वे सिर्फ वारदात को अंजाम देने वाले मोहरे नहीं, बल्कि एक सुव्यवस्थित रूप से सक्षम मॉड्यूल का हिस्सा थे। सुरक्षा एजेंसियों ने जिन प्रयासों से कई बड़ी साजिशों को नाकाम किया, वे सराहनीय जरूर हैं, लेकिन यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि हम उनकी जवाबदेही को नजरअंदाज न करें।

-विभूति बुधवया, ईमेल से

readersmail.nbt@gmail.com
पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

Machine Translated by Google

बिहार में अब भाजपा, नीतीश कुमार और जद(यू) की सरकार नहीं है। बिहार में नवनियुक्त मंत्रिपरिषद की संरचना और विभागों का बंटवारा भाजपा और जद(यू) के बीच सत्ता के चल

टी रहे पुनर्गठन को दर्शाता है। जद(यू) सुप्रीमो नीतीश कुमार ने मुख्यमंत्री का पद बरकरार रखा है, भले ही उनकी पार्टी विधानसभा चुनाव में भाजपा के बाद दूसरे स्थान पर रही। हालांकि, मुख्यमंत्री के रूप में अपने लगभग 20 वर्षों में पहली बार वह गृह विभाग के प्रभारी नहीं हैं। भाजपा के दो उप मुख्यमंत्रियों में से एक, सम्राट चौधरी अब इस प्रशासनिक रूप से शक्तिशाली मंत्रालय को नियंत्रित करते हैं। दूसरे उप मुख्यमंत्री विजय कुमार सिन्हा को राजस्व, भूमि सुधार, खान और भूविज्ञान विभाग सौंपा गया है, जिससे महत्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर भाजपा का नियंत्रण और मजबूत हो गया है। भाजपा के पास 26 मंत्री पदों में से 14 हैं और स्वास्थ्य, कानून, सड़क निर्माण, शहरी विकास और कृषि सहित प्रमुख विभागों को नियंत्रित करता है।

BJP ने JD(U) के साथ अपने गठबंधन के हायरार्की को अपने पक्ष में फॉर्मल रूप से पलटने का एक अहम कदम उठाया है। 2020 में भी BJP बड़ी पार्टी थी, लेकिन नीतीश कुमार ने ज़रूरी मंत्रालय अपने पास रखे। सोशल जस्टिस के मुद्दे और पिछली विधानसभा की बनावट ने JD(U) को RJD के साथ गठबंधन बनाए रखने की गुंजाइश दी। लेकिन इस बार नेशनल डेमोक्रेटिक अलायंस की ज़बरदस्त जीत ने न सिर्फ़ BJP को मज़बूती से टॉप पर पहुंचा दिया है, बल्कि JD(U) के लिए किसी भी विकल्प को खोजना मुश्किल, अगर नामुमकिन नहीं तो, बना दिया है।

नीतीश कुमार खराब सेहत से जूझ रहे हैं; हालांकि वे BJP के लिए ज़रूरी बने हुए हैं, लेकिन पार्टी अपने लंबे समय के रास्ते की भी ध्यान से प्लानिंग कर रही है। इसने एक बड़ा और गहरा जाति गठबंधन बनाया है, जो उन समुदायों तक पहुंचने की कोशिश कर रहा है जो पारंपरिक रूप से JD(U) को अपना प्लेटफॉर्म मानते रहे हैं। लालू यादव के पुराने वफादार रामकृपाल यादव का BJP में शामिल होना इस बात का संकेत है कि यादवों की भी पार्टी में जगह हो सकती है। चालाक सोशल इंजीनियरिंग और एडमिनिस्ट्रेटिव चालों के ज़रिए, BJP ने अब खुद को बिहार की राजनीति में सबसे आगे खड़ा कर लिया है। लेकिन आगे असली चुनौती अच्छा शासन है। BJP दावा कर सकती है कि उसकी बार-बार जीत उसकी पिछली सरकार का पॉपुलर सपोर्ट है, लेकिन राज्य कई डेवलपमेंट इंडिकेटर्स पर पीछे है। नई काउंसिल का असली टेस्ट यह होगा कि क्या वह बिहार को आगे बढ़ा सकती है। बिहार में भारत की लगभग दसवीं आबादी रहती है, और राज्य का विकास पूरे देश पर पॉजिटिव असर डाल सकता है। काउंसिल को गवर्नेंस की बड़ी कमी का ईमानदारी से सामना करना चाहिए और केंद्र से एक्टिव सपोर्ट लेकर इसे ठीक करने के लिए काम करना चाहिए।

कठिन विकल्प

यूक्रेन और उसके साथियों को ट्रंप के प्रस्तावों पर आगे बढ़ने की कोशिश करनी चाहिए।

यूक्रेन के लिए ट्रंप एडमिनिस्ट्रेशन के शांति प्रस्ताव

टी के ड्राफ़्ट ने कीव में उम्मीद के मुताबिक बेचैनी पैदा कर दी है। प्रेसिडेंट वोलोडीमिर ज़ेलेंस्की ने चेतावनी दी है कि यूक्रेन के सामने अब एक “बहुत मुश्किल चुनाव” है, जिससे उसकी इज़्ज़त या एक अहम पार्टनर खोने का खतरा है। US प्रेसिडेंट डोनाल्ड ट्रंप ने उनसे थैंक्सगिविंग (27 नवंबर) तक प्रस्ताव स्वीकार करने की अपील की है। यूक्रेन की चिंताएँ समझ में आती हैं। मिस्टर ट्रंप के 28-पॉइंट प्लान के लीक हुए ड्राफ़्ट के मुताबिक, कीव को डोनेट्स्क में इलाका छोड़ना होगा और क्रीमिया, डोनेट्स्क और लुहान्स्क को असल में रूस के तौर पर पहचान देनी होगी। रूस द्वारा कब्ज़े में लिए गए दूसरे दो ओब्लास्ट (खेरसॉन और ज़ापोरिज्जिया) में, लाइन ऑफ़ कॉन्टैक्ट के साथ टकराव रुक जाएगा, जिससे मॉस्को को अपने कब्ज़े वाले इलाकों को बनाए रखने की इजाज़त मिल जाएगी। रूस पाँच ओब्लास्ट के बाहर अपने कब्ज़े वाले इलाकों से पीछे हट जाएगा और पड़ोसी देशों पर दोबारा हमला न करने का वादा करेगा। प्लान में यह भी कहा गया है कि यूक्रेन अपनी आर्म्ड फोर्स में 6,00,000 लोगों को ही रखे और NATO में शामिल होने की अपनी कोशिश को ऑफिशियली छोड़ दे। ग्रुप का पूरब की तरफ बढ़ना रुक जाएगा, रूस पर लगे बैन हटा दिए जाएंगे, जबकि यूक्रेन को “भरोसेमंद सिक्योरिटी गारंटी” मिलेगी। प्लान में इन गारंटी के बारे में डिटेल में नहीं बताया गया है, लेकिन US मीडिया ने कहा है कि ट्रंप एडमिनिस्ट्रेशन ने एक अलग तीन-पॉइंट प्लान सर्कुलेट किया है, जिसमें कीव को NATO-स्टाइल सिक्योरिटी एश्योरेंस देने का वादा किया गया है। रूस के प्रेसिडेंट व्लादिमीर पुतिन ने इस प्रपोज़ल पर पॉजिटिव जवाब दिया है, लेकिन यूक्रेन और उसके यूरोपियन पार्टनर “इज्जत के साथ शांति” पाने के लिए एक दूसरा प्रपोज़ल बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

ट्रंप प्लान के कई हिस्से रूस की पुरानी मांगों को दिखाते हैं, जिसमें NATO के पूरब की ओर विस्तार को रोकना भी शामिल है। दूसरी ओर, यूक्रेन को इलाका सौंपने का प्रस्ताव किसी भी यूक्रेनी नेता के लिए लागू करना आसान नहीं होगा। इससे किसी भी बिचौलिए के लिए शांति का ऐसा ब्लूप्रिंट बनाना बहुत मुश्किल हो जाता है जो लड़ाई में शामिल पार्टियों के लिए असली कॉमन ग्राउंड दे। शांति के लिए किसी भी सही कोशिश में कम से कम तीन बातों का ध्यान रखना होगा। पहला, युद्ध के मैदान की असलियत; दूसरा, यूक्रेन को भरोसेमंद और लंबे समय तक चलने वाले सुरक्षा भरोसे की ज़रूरत; और तीसरा, यूरोप में एक नया सुरक्षा ढांचा बनाना। मिलिट्री बैलेंस अभी रूस के पक्ष में है, जो अब 2014 से पहले के यूक्रेन के 20% से ज़्यादा हिस्से पर कंट्रोल रखता है। दूसरी ओर, मिस्टर ज़ेलेंस्की का शासन भ्रष्टाचार के घोटालों से जूझ रहा है। यूक्रेन की ट्रेजेडी यह है कि वह पश्चिम और रूस के बीच बड़ी ताकतों की होड़ में फंसा हुआ है। भरोसा खत्म हो गया है, और कोल्ड वॉर के बाद का यूरोपियन सुरक्षा सिस्टम बिखर गया है। एक शांति समझौते में भरोसे की इस कमी को दूर करना होगा और इलाके में एक नया सुरक्षा संतुलन बनाने की कोशिश करनी होगी, जिसमें यूरोप के डर और रूस की चिंताओं को दूर किया जा सके। इनमें से कोई भी लक्ष्य एक खुली लड़ाई से हासिल नहीं किया जा सकता। मिस्टर ट्रंप का प्लान, हालांकि अधूरा है, कम से कम बातचीत के लिए एक तय ढांचा देता है, जिसमें US, यूरोप, NATO, यूक्रेन और रूस शामिल हैं।

अक्षर जीत गए हैं, लेकिन भावना नहीं हारी है

Gopalkrishna Gandhi

के सचिव थे
राष्ट्रपति, और एक
पश्चिम के राज्यपाल
बंगाल और बिहार

टी भारत गणराज्य में 16 प्रेसिडेंसी के दौरान 15 प्रेसिडेंट हुए हैं, इसके पहले प्रेसिडेंट, डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने दो टर्म पूरे किए थे।

1947 से अब तक नियुक्त किए गए राज्यपालों की संख्या इतनी ज़्यादा है कि उसे गिना नहीं जा सकता।

इन दो ऊँचे ओहदों के मालिक बहुत अच्छा कर सकते हैं, कभी-कभी थोड़ा नुकसान भी करते हैं और बहुत या ज़्यादातर, लगभग अद्वैत वाली बेपरवाही पसंद करते हैं जो कोई निशान नहीं छोड़ती — एक सेल्फ-प्रोटेक्टिंग मैकेनिज्म। नेगेटिव तरीके से याद किए जाने से तो बेहतर है कि बिल्कुल याद न किया जाए। मैं अक्सर सोचता हूँ कि ये ऊँचे ओहदे वाले, जब वे मर्द होते हैं, जैसा कि वे हमेशा होते हैं, तो अपने कोट की जेब में पेन क्यों रखते हैं। पेन लगभग उनके ज़रूरी 'तैयार होने' का एक हिस्सा है। इससे वे कहीं भी हों, उन्हें दिए गए कागज़ पर साइन करने के लिए हमेशा तैयार दिखते हैं।

मास्टर कार्टूनिस्ट, अबू अब्राहम ने 1975 के उस पल को अमर कर दिया जब उस समय के प्रेसिडेंट ने नेशनल इमरजेंसी के प्रोक्लेमेशन पर साइन किए थे। उन्होंने एक दिल को छू लेने वाला कार्टून बनाया जिसमें उन्हें उस कागज़ पर साइन करते हुए दिखाया गया था, जब वह कागज़ उनके पास लाया गया था (इस बार स्टाइलस के साथ) और वह भी बहुत अजीब समय पर।

सिग्नेचर बहुत आसानी से काटे जा सकते हैं, जबकि ज़रूरी यह है कि आप कहें, 'नहीं, बहुत अफ़सोस है, लेकिन नहीं।' इसका कारण सिर्फ़ शुक्रिया हो सकता है कि आप वहाँ हैं जहाँ महामहिम होना चाहते हैं।

इसी तरह, जब कोई सिग्नेचर असली आपत्ति की वजह से नहीं बल्कि भेदभाव की वजह से मना कर दिया जाता है, तो उस सीन को दिखाने के लिए अबू अब्राहम या आरके लक्ष्मण की ज़रूरत होती है। जब डर से या भेदभाव की वजह से मंज़ूरी नहीं दी जाती, तो यह संवैधानिक ज़िम्मेदारी का उल्लंघन है।

अतीत की झलकें: मैं जानता हूँ कि कभी-कभी कोई प्रेसिडेंट खुद ही किसी सिग्नेचर (और उससे भी ज़्यादा) को हटा सकता है, बिना किसी 'मदद या सलाह' के और इस बात की परवाह किए बिना कि वह जो कर रहा है वह 'अच्छा लगेगा या नहीं', मुझे यहाँ प्रेसिडेंट आर.

वेंकटरमन (कार्यकाल: 1987-92) और राष्ट्रपति के.आर. नारायणन (कार्यकाल: 1997-2002)। पेन का इस्तेमाल आर.वी. ने किया था।

इसका इस्तेमाल KRN ने अकेले किया। किसी कैबिनेट ने कोई बेचैनी नहीं जताई। नैतिकता उनके साथ शर्मीली नहीं थी, न ही निष्पक्षता रुकी।

जिन प्रधानमंत्री RV का कार्यकाल राजीव गांधी, VP सिंह और चंद्रशेखर के साथ हुआ, वे सभी मज़बूत इरादों वाले आदमी थे, लेकिन वे अपने अहम पद पर पहली बार बैठे थे, जबकि RV का राजनीतिक और संवैधानिक पद का अनुभव कहीं ज़्यादा था। यह स्वाभाविक था कि जब बिल या दूसरी सिफारिशों पर कैबिनेट के उलट उनकी राय होती थी, तो वे उनकी बात मान लेते थे; वह अपनी बात आमने-सामने की गोपनीय बातचीत में उनके सामने रखते थे, यह उनका तरीका था। RV के साथ ओवरलैप करने वाले चौथे प्रधानमंत्री, PV नरसिम्हा राव, अपने कैबिनेट साथियों से ज़्यादा उनके साथ विचार-विमर्श करते थे। मनमुटाव की कोई गुंजाइश नहीं थी।

1997 में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल

मंत्री आईके गुजराल ने KRN से उत्तर प्रदेश में कल्याण सिंह की भारतीय जनता पार्टी (BJP) सरकार को हटाने की सिफारिश की थी। KRN का दुनिया को देखने का नज़रिया और BJP का नज़रिया मेल नहीं खाता था। लेकिन वे भारत के राष्ट्रपति थे, सिर्फ़ राष्ट्रपति भवन के रहने वाले नहीं, जो संविधान के मूल्यों के प्रति जवाबदेह थे। वे हटाने की सिफारिश से सहमत नहीं थे और इसे दोबारा सोचने के लिए वापस भेज दिया। सिफारिश वापस नहीं आई।

1998 तक, केंद्र में भाजपा सत्ता में थी। और बिहार के नए बने गवर्नर ने सिफारिश की कि राबड़ी देवी की सरकार को बर्खास्त कर दिया जाए और भारत के संविधान के आर्टिकल 356 के तहत प्रेसिडेंट रूल लगा दिया जाए। गवर्नर ने जो भेजा था, उसके बारे में दावा किया गया था कि यह फाइनेंशियल मिसमैनेजमेंट और खराब लॉ एंड ऑर्डर दिखाने वाला एक फुल-प्रूफ केस है। KRN ने मना कर दिया, और सिफारिश वापस भेज दी। प्रधानमंत्री AB

वाजपेयी की कैबिनेट ने सिफारिश नहीं दोहराई। इन सिफारिशों को वापस करने के KRN के एक्शन में कोई पॉलिटिक्स नहीं थी। ज़ीरो। इसमें सिर्फ़ फेयरनेस थी, कॉन्स्टिट्यूशनल फेयरनेस। इसमें सिर्फ़ मोरैलिटी थी, कॉन्स्टिट्यूशनल मोरैलिटी। फेयरनेस और मोरैलिटी में कोई फ़र्क नहीं पड़ता। जैसे कि उनके उलटे भी हैं।

जब सरकार को साफ़-साफ़ बोलने की ज़रूरत होती थी, तो RV और KRN सरकार के साथ साफ़-साफ़ बोल सकते थे और उन्हें गलत नहीं समझा जाता था, क्योंकि सरकार जानती थी कि यह साफ़-साफ़ बोलना चेतावनी देने और सही करने की इच्छा से आता है, आलोचना करने से नहीं।

'सतर्क और ज़िंदा' राष्ट्रपति और राज्यपाल ऐसे पुरुष और महिला होने चाहिए जिनका दिमाग एक बदलते देश में संविधान के शब्दों और उसकी भावना के प्रति सतर्क और ज़िंदा हो। उन्हें यह देखना चाहिए कि उन्हें जो सिफारिशें दी गई हैं, वे उसके शब्दों का पालन करें, यह जानते हुए कि कभी-कभी शब्दों का इस्तेमाल उसकी भावना को तोड़ने के लिए किया जा सकता है — यह एक अजीब बात है जिसका संविधान बनाने वालों ने अंदाज़ा नहीं लगाया होगा। क्या बाबासाहेब अंबेडकर ने सोचा होगा कि ऐसा हो सकता है? भारत का संविधान सच्चे इरादों से, ईमानदारी से लागू करने के लिए बनाया गया है।

RV और KRN ने कुछ दिनों से ज़्यादा किसी भी लेवल पर रोक नहीं लगाई। उन्हें डिटेक्टिव-प्रेसिडेंट होने की ज़रूरत नहीं थी। कोई देरी नहीं की गई जिसके दौरान बातचीत की जा सके, और झुंड में राय ली जा सके, और फुसफुसाकर राय दी जा सके। पॉकेट-वीटो का इस्तेमाल करने के लिए कोई जेब ढीली नहीं की गई।

लेकिन कॉन्स्टिट्यूशनल नैतिकता और निष्पक्षता की उनकी भावना ने उन्हें 24X7 फुल-टाइम काम के तौर पर गलतियों या कमियों या कमियों को देखने के लिए मजबूर नहीं किया।

राष्ट्रपति और गवर्नर न तो रोबोट हैं, न ही वे रिंग-मास्टर हैं। वे कोई बेकार रबर स्टैम्प नहीं हैं जिन्हें सरकार उनके सामने रखे किसी भी कागज़ पर धीरे से या धीरे से दबा दे; अगर वे ऐसा करते तो वे खुद ही मज़ाक का पात्र बन जाते।

16वें में अध्यक्षीय संदर्भ में, शीर्ष अदालत ने इस कानून के अक्षर और भावना को बरकरार रखा है।

संविधान

वे ऐसे पेन भी नहीं हैं जो संवैधानिक विचार व्यक्त करते समय अपनी पसंद की स्याही का कोई भी रंग या कोई भी शब्दावली चुन सकें।

कंज़र्वेटिव और रियलिस्टिक। चीफ जस्टिस ऑफ इंडिया (CJI) बीआर गवई की अगुवाई वाली पांच जजों की बेंच, जिसमें CJI-डेजिग्नेट सूर्यकांत भी शामिल हैं, के प्रेसिडेंट द्रौपदी मुर्मू के 16वें प्रेसिडेंशियल रेफरेंस पर दिए गए 'जवाब' इसी सच्चाई से भरे हुए हैं। बेंच ने कहा है कि गवर्नर बिलों की स्टडी के लिए सुप्रीम कोर्ट से तय कोई डेट-लाइन नहीं रख सकते — संविधान के शब्दों को कायम रखते हुए। बेंच ने यह भी साफ तौर पर कहा है कि 'टालमटोल इनएक्शन' भी 'ठीक' नहीं है — संविधान की भावना को कायम रखते हुए।

पहली बात कहकर बेंच कंज़र्वेटिव रही है। दूसरी बात कहकर वह रियलिस्टिक रही है। बेंच ने यह साफ कर दिया है कि वह जानती है कि गवर्नर का एक्शन और इनएक्शन शायद इसलिए नहीं होता कि वे पढ़ाई-लिखाई में माहिर हैं, बल्कि इसलिए होता है क्योंकि वे पॉलिटिकल रूप से पहले से तय होते हैं। जजों के जवाबों में कहा गया है कि गवर्नर की दीवार पर कोई कैलेंडर नहीं लटकाया जा सकता जिस पर लिखा हो 'यह आपकी डेडलाइन है'।

उनके जवाबों ने उनकी डेस्क पर एक ऐसी घड़ी भी रख दी है जो ज़ोर से और साफ़ टिक-टिक करती है और उसमें एक इनफ़ॉर्मल अलार्म भी है जो बज सकता है अगर 'पढ़ाई' नॉर्मल पढ़ाई के घंटों से ज़्यादा हो जाती है, जिससे कोर्ट में देरी का मामला उठाया जा सकता है।

भारत का संविधान, खासकर केंद्र-राज्य संबंधों से जुड़े मामलों में — या दूसरे शब्दों में कहें तो, भारत की फेडरल पॉलिटिक्स पर असर डालने वाले मामलों में — इसे चलाने के लिए दो लोगों की ज़रूरत होती है, लेकिन इसे बर्बाद करने के लिए दोनों तरफ से सिर्फ़ एक ही व्यक्ति की ज़रूरत होती है। आखिर में, एक संवैधानिक व्यवस्था का काम करना दोनों पर निर्भर करता है — लेजिस्लेचर और गवर्नर/प्रेसिडेंट — जो संविधान और एक-दूसरे का सम्मान करते हुए अपनी भूमिका निभाएं।

यह बात गौर करने वाली है कि पांच जजों ने साफ तौर पर किसी भी पक्ष को सिखाने या ट्यूटर की भूमिका निभाने से मना कर दिया। उन्होंने किसी भी पक्ष को जीत या हार नहीं दी। कानून का मतलब जीत गया है, लेकिन कानून की भावना नहीं हारी है। यह एक राय है, कोई ऑर्डर नहीं (क्योंकि वे कोई अपील नहीं देख रहे थे), उन्होंने वही कहा जो बिल्कुल सही है: सुप्रीम कोर्ट को यह नहीं कहना चाहिए, न ही वह यह कहेगा कि राष्ट्रपति या गवर्नर को कैसे काम करना चाहिए या नहीं करना चाहिए। यह 'एक अधिकार क्षेत्र को पकड़ना' (RV का पसंदीदा मुहावरा) होगा जो उनका नहीं है।

क्या बेंच ने बैलेंस बनाने की कोई एक्सरसाइज की है? ऐसा नहीं हुआ है। इसने सही काम करने की ताकत और उसे करने के सही तरीके के बीच बैलेंस बनाने की कोशिश की है।

भारतीय राजनीति को चालाक खिलाड़ियों के पावर गेम्स से नहीं चलाना चाहिए। इसे ऐसे पुरुषों और महिलाओं द्वारा चलाया जाना चाहिए जो ऊंचे पद पर होने पर अपनी सीमाओं से ऊपर उठें। कुछ मौजूदा लोग अपने पदों को महान बनाते हैं, कुछ पद अपने मौजूदा लोगों को महान बनाते हैं। दुख की बात यह है, जैसा कि जजों ने देखा है, कि इसका उल्टा भी उतना ही बुरा है।

सत्य।

ज़ायकेदार चीज़ों से ज़्यादा सुरक्षित प्रोसेसिंग मायने रखती है

अर्पिता मुखर्जी

प्रोफेसर, भारतीय
अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद

आर्थिक संबंध

टी भारत की स्थिति पर संदेह की छाया है खाने की चीज़ों में मिलावट के कई मामले सामने आए हैं। हाल के सालों में, खाने की चीज़ों में मिलावट के कई मामले सामने आए हैं। कंज्यूमर का भरोसा डगमगा गया है। इस वजह से, अब कई लोग अपने रोज़ाना के खाने को लेकर ज़्यादा सावधान हो गए हैं। स्ट्रीट फ़ूड, जो कभी भारत के रिच कल्चर की पसंदीदा निशानी था, अब सेफ़्टी और हाइजीन से जुड़ी बढ़ती जांच का सामना कर रहा है।

जुलाई 2024 में, चेन्नई में 58 पानी पूरी स्टॉल पर छापे मारे गए, जिसमें खतरनाक कामों का पता चला। अधिकारियों ने पाया कि वेंडर खराब पानी का इस्तेमाल कर रहे थे और चटनी में हाथ डुबो रहे थे। ये मामले अलग-अलग नहीं हैं, बल्कि भारत के इनफॉर्मल फ़ूड सेक्टर में फ़ूड सेफ़्टी में एक परेशान करने वाली कमी को दिखाते हैं। स्ट्रीट फ़ूड परंपरा और कम्युनिटी को ज़िंदा करता है, लेकिन इसके हाइजीन स्टैंडर्ड अक्सर बिना जांचे रह जाते हैं।

पैकेज्ड और अनपैकेज्ड, दोनों तरह के खाने की चीज़ों के लिए फ़ूड सेफ़्टी और स्टैंडर्ड्स, फ़ूड सेफ़्टी एंड स्टैंडर्ड्स अथॉरिटी ऑफ़ इंडिया (FSSAI) के दायरे में आते हैं। लेकिन, अनपैकेज्ड फ़ूड बेचने वालों की बड़ी संख्या की वजह से रेगुलेटर के लिए सेफ़्टी स्टैंडर्ड्स को लगातार लागू करना ज़्यादा मुश्किल हो जाता है। इसके उलट, पैकेज्ड फ़ूड में साफ़ लेबलिंग और स्टैंडर्ड प्रोसेसिंग प्रोटोकॉल की वजह से ट्रेसेबिलिटी, ट्रांसपेरेंसी और रिलायबिलिटी स्टैंडर्ड्स को ज़्यादा सख़्ती से लागू किया जा सकता है।

पैकेज्ड फ़ूड, सुरक्षा और भरोसा भारत की पैकेज्ड फ़ूड इंडस्ट्री को अक्सर सुविधा से जोड़ा जाता है। लेकिन यह साइंस, रेगुलेशन और बदलती कंज्यूमर उम्मीदों से बने फ़ूड प्रोडक्शन के एक स्ट्रक्चर्ड सिस्टम को भी दिखाता है।

इनफॉर्मल फ़ूड सेक्टर की तुलना में, ऑर्गनाइज़्ड पैकेज्ड फ़ूड इंडस्ट्री ज़्यादा साफ़ निगरानी के फ्रेमवर्क में काम करती है।

एफएसएसएआई द्वारा निर्धारित नियामक दिशानिर्देश पूरे उत्पादन चक्र को कवर करते हैं - कच्चे माल की सोर्सिंग से लेकर अंतिम उत्पाद की पैकेजिंग तक।

मॉडर्न प्रोसेसिंग तकनीकें बदलते मौसम के हालात में भी इस भरोसे और शेल्फ-लाइफ को और मज़बूत करती हैं। जैसे तरीके

पाश्चराइजेशन, वैक्यूम सीलिंग और एसेप्टिक पैकेजिंग को इंडस्ट्री में बड़े पैमाने पर अपनाया जाता है। ये तकनीकें माइक्रोबियल रिस्क को कम करने में मदद करती हैं

जब बात पूरे देश में एक जैसी फ़ूड सेफ़्टी पक्की करने की आती है, तो एक परेशान करने वाली कमी है।

भारत का अनौपचारिक खाद्य क्षेत्र

स्वाद और न्यूट्रिशनल वैल्यू बनाए रखने का लक्ष्य रखते हुए, वे बड़े पैमाने पर डिस्ट्रीब्यूशन और स्टोरेज की ज़रूरतों को भी पूरा करते हैं, खासकर शहरी और कामकाजी आबादी में।

ट्रांसपेरेंसी एक और एरिया है जहाँ पैकेज्ड फ़ूड साफ़-साफ़ बताते हैं। एलर्जन और इंग्रीडिएंट्स की लिस्ट बनाने से लेकर मैन्युफैक्चरिंग और एक्सपायरी डेट बताने तक, पैकेज्ड फ़ूड कंज्यूमर्स, खासकर माता-पिता, बुज़ुर्ग लोगों और हेल्थ का ध्यान रखने वाले लोगों को, सोच-समझकर डाइट संबंधी फ़ैसले लेने के लिए टूल देते हैं।

खास बात यह है कि इंडस्ट्री प्रोसेस्ड फ़ूड्स को लेकर कस्टमर्स की बढ़ती ज़रूरतों पर ध्यान दे रही है। मार्केट की डिमांड और हेल्थ के बारे में बढ़ती जागरूकता को देखते हुए, कंपनियां हेल्थ का ध्यान रखने वाले कस्टमर्स के लिए ज़्यादा तरह के ऑफर लाकर अपने प्रोडक्ट पोर्टफोलियो को बेहतर बना रही हैं, जिससे उनके लिए मौजूद ऑप्शन बढ़ रहे हैं। साथ ही, न्यूट्रिशन की बड़ी कमी को दूर करने के लिए ज़रूरी माइक्रोन्यूट्रिएंट्स के साथ फ़ूड्स को मज़बूत बनाने में तेज़ी आई है।

ये बदलाव एक ज़िम्मेदार और आगे की सोचने वाले नज़रिए को दिखाते हैं जो कमर्शियल हितों को कंज्यूमर की भलाई के साथ जोड़ता है।

खाने-पीने की दुनिया का हिस्सा, लेकिन खतरों के साथ स्ट्रीट फ़ूड भारत के खाने-पीने की दुनिया का एक जीवंत और ज़रूरी हिस्सा बना हुआ है। यह सांस्कृतिक विरासत को दिखाता है, लाखों लोगों की रोज़ी-रोटी को सहारा देता है, और लोकल लोगों और टूरिस्ट दोनों के लिए एक पॉपुलर पसंद बना हुआ है। हालांकि, इस शानदार और स्वादिष्ट सतह के नीचे कई सिस्टमिक खतरे छिपे हैं जिन्हें नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

ऑब्ज़र्वर रिसर्च फ़ाउंडेशन के एक हालिया एनालिसिस से एक डरावनी तस्वीर सामने आई है, जिसमें अनुमान लगाया गया है कि भारत में हर साल खाने से होने वाली बीमारियों के हैरान करने वाले 100 मिलियन मामले दर्ज होते हैं, जिससे लगभग 1,20,000 मौतें होती हैं। इन बीमारियों का एक बड़ा हिस्सा इनफ़ॉर्मल सोर्स से मिलने वाले खराब खाने से जुड़ा है, जिसमें स्ट्रीट वेंडर, छोटे खाने की जगहें और सड़क किनारे स्टॉल शामिल हैं। ये सिर्फ़ आँकड़े नहीं हैं। ये एक बड़ा पब्लिक हेल्थ बोझ दिखाते हैं जो समाज के सबसे कमज़ोर तबके पर बहुत ज़्यादा असर डालता है।

स्ट्रीट फ़ूड की क्वालिटी अक्सर खराब हो जाती है

खाना पकाने के गलत तरीकों की वजह से। उदाहरण के लिए, खाना पकाने के तेल का दोबारा इस्तेमाल एक आम बात है, जिससे न सिर्फ़ खाने की न्यूट्रिशनल वैल्यू कम होती है, बल्कि इससे खाने में मौजूद न्यूट्रिशनल वैल्यू भी कम हो सकती है।

नुकसानदायक ट्रांस फैट और दूसरे ज़हरीले कंपाउंड। इसी तरह, सस्ती और मिलावटी चीज़ें इस्तेमाल करने का बढ़ावा भी बहुत ज़्यादा है। इन तरीकों से अक्सर फ़ूड पॉइज़निंग और पेट की दूसरी बीमारियाँ लोकल लेवल पर फैलती हैं, जिनकी अक्सर रिपोर्ट नहीं होती, जिससे समस्या कितनी बड़ी है, यह और भी छिप जाता है।

FSSAI ने ट्रेनिंग देने के लिए पहल शुरू की है, सर्टिफ़ाई करें, और इन वेंडर्स को रेगुलेटरी फ्रेमवर्क में शामिल करें। बृहन्मुंबई म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन (BMC) के साथ मिलकर इसने मुंबई में स्ट्रीट फ़ूड वेंडर्स के लिए एक फ़ूड सेफ़्टी ट्रेनिंग प्रोग्राम शुरू किया। ट्रेनिंग मॉड्यूल में पर्सनल हाइजीन, खाने को सुरक्षित तरीके से संभालना, कंटैमिनेशन से बचाने के लिए स्टोरेज प्रोटोकॉल और कचरे का सही तरीके से निपटारा शामिल है। साथ ही, इस सेक्टर का अनऑर्गनाइज़्ड नेचर और बहुत बड़ा होना इसे एक धीरे-धीरे चलने वाला काम बनाता है।

सुरक्षा के लिए कमिटमेंट बढ़ाएं। हालांकि पैकेज्ड फ़ूड्स सुविधा से कहीं ज़्यादा हैं और फ़ूड सेफ्टी से जुड़ी चिंताओं को दूर करने के लिए साइंस पर आधारित, स्ट्रक्चर्ड तरीका दिखाते हैं, फिर भी यह पक्का करना ज़रूरी है कि स्ट्रीट फ़ूड्स सुरक्षित और हाइजीनिक हों। इसके लिए ईट राइट इंडिया मूवमेंट या क्लीन स्ट्रीट फ़ूड हब (CSFH) जैसे नेशनल लेवल के कैंपेन के तहत स्ट्रीट वेंडर्स को ट्रेनिंग और रेटिंग दी जानी चाहिए।

जैसे-जैसे भारत मॉडर्नाइज़ेशन और अर्बनाइज़ेशन की राह पर आगे बढ़ रहा है, सुरक्षित और साफ़-सुथरा खाना मिलना पक्का करना इसमें शामिल सभी लोगों के लिए सबसे ज़रूरी हो जाना चाहिए। हालांकि स्ट्रीट फ़ूड का रोमांस और परंपरा भारत के कल्चर का अहम हिस्सा है, लेकिन इससे जुड़े हेल्थ रिस्क को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता, खासकर तब जब पब्लिक हेल्थ देश की प्राथमिकता हो। भारत में खाने का भविष्य भावनाओं से नहीं, बल्कि सुरक्षा के लिए पक्के कमिटमेंट से तय होना चाहिए।

व्यक्त किए गए विचार व्यक्तिगत हैं

द टर्सटूदएडिटर

ढाका का मैनेजमेंट शेख हसीना की सज़ा और भारत में उनकी मौजूदगी से जुड़े संकट ने नई दिल्ली के सबसे ज़रूरी पड़ोस के समीकरणों में से एक को मुश्किल बना दिया है।

प्रत्यर्पण नामुमकिन है, फिर भी अनिश्चितकालीन शरण का खतरा है

डिप्लोमैटिक बोझ बनता जा रहा है। बांग्लादेश की अंतरिम सरकार पहले से ही विदेश नीति को फिर से तय कर रही है, भारत के सपोर्ट वाले प्रोजेक्ट्स को धीमा कर रही है और बीजिंग और इस्लामाबाद के लिए खुलेपन का संकेत दे रही है। इस बदलते माहौल में, भारत को

यह सुनिश्चित करना कि “हसीना प्रश्न” व्यापक राष्ट्रीय हितों पर हावी न हो जाए।

असली सबक यह है कि भारत एक ही लीडर पर बहुत ज़्यादा डिपेंडेंट है। बाइलेटरल रिश्तों में लंबे समय तक स्टेबिलिटी के लिए पॉलिटिकल डाइवर्सिफिकेशन, समझदारी से बातचीत की ज़रूरत होती है।

ढाका में सभी स्टेकहोल्डर्स, और पब्लिक मैसेजिंग से परहेज़। बांग्लादेश की राजनीतिक उथल-पुथल खत्म हो जाएगी, लेकिन अंदरूनी एक-दूसरे पर निर्भरता बनी रहेगी।

गोपालस्वामी जे., चेन्नई

ज़हरीली हवा, अजीब बेपरवाही दिल्ली की हवा की क्वालिटी मौसमी परेशानी से बढ़कर पूरी तरह से पब्लिक हेल्थ इमरजेंसी बन गई है।

फिर भी, हमारा जवाब अजीब तरह से कैज़ुअल रहता है। मुझे सबसे ज़्यादा चिंता इस बात की है कि

के लिए बढ़ती सहिष्णुता

हवा में ज़हर है। अब समय आ गया है कि हम साफ़ हवा को एक अधिकार समझें जिसके लिए जवाबदेही की ज़रूरत है।

हर्षिता सिंगला, जालंधर, पंजाब

letters@thehindu.co.in पर ईमेल किए गए पत्रों में डाक का पता होना चाहिए।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

राष्ट्रीय सहारा
पटना। सोमवार • 24 नवम्बर • 2025
www.rashtriyasahara.com

सरहदों पर अवैध धार्मिक स्थल बने देश की सुरक्षा को खतरा

विवेक शुक्ला

भारत की सरहदों के आसपास पिछले कुछ दशकों के दौरान अवैध रूप से उग आए धार्मिक स्थलों ने देश की सुरक्षा के सामने गंभीर समस्या का रूप धारण कर लिया है। इन पर अवैध घुसपैठ को बढ़ावा देने और देश-विरोधी तत्वों को शरण देने के पुख्ता सबूत भी मिले है। भारत-बांग्लादेश, भारत-नेपाल और भारत-पाकिस्तान सीमाओं पर ऐसे हजारों धार्मिक स्थल बिना किसी सरकारी अनुमति के खड़े किए गए। इनमें से कई तो सीधे-सीधे अवैध घुसपैठियों द्वारा बनाए गए है, जो स्थानीय आबादी में घुल मिलकर डेमोग्राफिक परिवर्तन लाने की साजिश कर रहे है। दरअसल इस समस्या की जड़ें बहुत गहरी है। देश की स्वतंत्रता के बाद से ही सीमावर्ती क्षेत्रों में अवैध निर्माण बनते रहे है। राजनीतिक संरक्षण और वोट बैंक की राजनीति ने इन्हें पनपने दिया। लेकिन मौजूदा केन्द्र सरकार ने इन पर लगाम लगाना का फैसला लिया है।केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने हाल ही में सीमावर्ती जिला कलेक्टरों को निर्देश दिया कि सीमा के 30 किलोमीटर के दायरे में सभी अवैध धार्मिक अतिक्रमणों को हटा दिया जाए। अमित शाह ने अपने निर्देश में यह भी कहा है कि अंतर्राष्ट्रीय सीमा से सटे क्षेत्रों में कोई भी अवैध धार्मिक ढांचों का निर्माण ना हो और जो पहले से अवैध धार्मिक स्थल बने हुए है, उनको तुरंत ध्वस्त किया जाए। इस निर्देश के पीछे सिर्फ एक ही उद्देश्य है कि कोई घुसपैठिया यहां आकर छुप ना पाए, और भारत विरोधी कोई षड्यंत्र ना कर सके। भारत सरकार ने पहले भी कई बार इस बात की निशानदेही की है कि पाकिस्तान, बांग्लादेश और नेपाल से सटे भारत की सीमाओं में तेजी से अवैध धार्मिक ढांचों का निर्माण पिछले दो दशक में हुए है।

जानने वाले जानते है कि जम्मू कश्मीर में कुछ बड़े आतंकवादियों ने इन अवैध धार्मिक स्थानों में पनाह ली है। कभी कश्मीर में सूफी इस्लाम का चलन था, लेकिन 1990 के दशक में बाहरी उग्रवादी-कट्टरपंथी संगठनों ने घुसपैठ किया और वहां वहाबीवाद को बढ़ावा मिल गया। देखते देखते कश्मीर में सलाफी मस्जिदों की बाढ़ आ गई और जिहाद का दौर शुरू हो गया। आतंकवादी संगठन अपना विस्तार इन मस्जिदों के जरिए करने लगे। चरमपंथी संदेश का प्रचार मस्जिदों से भी किया जाने लगा। मस्जिदों से जिहाद करने वालों को जन्नत नसीब होने का पाठ पढ़ाया गया। कुछ मस्जिदों को तो कट्टरपंथी विचारधारा फैलाने के लिए विदेश से धन भी प्राप्त होता रहा।

केंद्र में एनडीए सरकार के आने के बाद कट्टरपंथ और वैचारिक कट्टरता में संलिप्त मदरसों और स्कूलों और धार्मिक संस्थानों पर निगरानी बढ़ा दी गई । गृह मंत्रालय ने जिन राज्यों को निर्देश दिए है, उनमें गुजरात, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, मेघालय, नागालैंड, मणिपुर, मिज़ोरम, त्रिपुरा, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और लद्दाख है। इन राज्यों की सरकारों को इस आदेश पर तत्काल कार्रवाई करने के लिए कहा गया है। केंद्र सरकार का मानना है कि सीमावर्ती क्षेत्रों को अवैध निर्माणों से बचाना होगा। बेशक, घुसपैठ के कारण सीमावर्ती क्षेत्रों में जनसांख्यिकीय संतुलन तेजी से बदल रहा है और इससे देश की सीमा को खतरा उत्पन्न हो सकता है। सीमा पर बाहरी लोगों को अवैध तरीके से बसाना एक सामान्य राजनीतिक और भौगोलिक कारण नहीं है, बल्कि यह एक आतंरराष्ट्रीय षड्यंत्र का हिस्सा भी हो सकता है। नेपाल की सीमा से लगे बिहार और उत्तरप्रदेश में बड़े पैमाने पर अवैध मस्जिदों और मदरसों का निर्माण कराया गया । इन मदरसों में बांग्लादेशी बच्चे भी पाए गए है। असम में भी ऐसी ही शिकायतें मिल रही थीं, जिसके बाद असम सरकार ने मदरसों को सामान्य स्कूलों में बदलने का फैसला किया गया। सरकार का यह कदम इसलिए भी जरूरी है क्योंकि ये अवैध स्थल सीमा सुरक्षा बलों (बीएसएफ) की निगरानी में बाधा डालते है। कई मामलों में, इन जगहों को घुसपैठ के लिए कवर के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, जहां देश-विरोधी ताकतें छिपकर अपनी साजिशें रचती है। उदाहरणस्वरूप, बांग्लादेश सीमा पर ऐसे मदरसे पाए गए है जहां पाकिस्तान समर्थित आतंकी समूहों के सदस्यों को शरण मिली।

सरकार ने अपनी जांच में यह भी पाया है कि जिन सीमावर्ती क्षेत्रों में घुसपैठ लगातार होते रहे है, उन क्षेत्रों के मूल निवासी पलायन के लिए मजबूर कर दिए गए, क्योंकि बाहरी लोगों ने अपनी संख्या के बल पर स्थानीय लोगों का उत्पीड़न शुरू कर दिया था। उनकी जमीनों पर कब्जा कर लिया था और उनकी बहू बेटियों के साथ अभद्रता शुरू कर दी । गृह मंत्री ने स्वयं इन कई क्षेत्रों का दौरा किया और स्थानीय निवासियों को प्रश्रय देने और उनका संरक्षण करने के लिए जीवंत गाँव कार्यक्रम की शुरुआत की। सबसे पहले सीमावर्ती गाँवों से पलायन को रोकने के लिए उनके जान माल की सुरक्षा सुनिश्चित की गई। साथ में यह भी पहल की गई कि सीमावर्ती गाँवों के प्रत्येक निवासी को केंद्र और राज्य सरकार की योजनाओं से जोड़ दिया जाए। मूल निवासी के रूप में पहचाने जाने वाले गावों को अब जल्द ही राष्ट्रीय और सीमा सुरक्षा तंत्र से जोड़ा जाएगा। खैर, चुनौतियां कम नहीं है। इन संरचनाओं को हटाने में स्थानीय विरोध और कानूनी अड़चनें आती है। कई बार, मानवाधिकार संगठन हस्तक्षेप करते है, लेकिन राष्ट्रीय हित सर्वोपरि है। विशेषज्ञों का मानना है कि ऐसे अभियान से सीमा प्रबंधन में सुधार आएगा और अवैध घुसपैठ में कमी आ सकती है। साथ ही, वैध धार्मिक स्थलों को संरक्षण मिलेगा, जो सही अनुमति के साथ बने है। इसमें कोई शक नहीं है कि यह अभियान भारत की सीमाओं को सुरक्षित बनाने की दिशा में एक निर्णायक कदम है। अवैध धार्मिक संरचनाएं न केवल सुरक्षा के लिए खतरा है, बल्कि देश की एकता को भी चुनौती देती है। सरकार को देखना होगा कि सरहदों पर अवैध धार्मिक स्थल भविष्य में न बनें।

परिधि/ राजीव मंडल

दवा-जिंदगी दोनों फेल

देश में मीडिया से लेकर आमजन के बीच एच1 बी वीजा, भारत पर अमेरिका का लगाया गया तगड़ा टैरिफ और कुछ हद तक नेपाल में सत्ता के उखड़ने पर बहस और चर्चाओं का अंतहीन सिलसिला जारी है। स्वाभाविक रूप से ऐसे विषयों पर गंभीरता कम मिर्च-मसाला को छौंका लगाया जाता है। मगर एक खबर जिसपर मीडिया को भी सीना तानकर आगे आना चाहिए और आम जनता को भी अपना आक्रोश जगजाहिर करना चाहिए जिसकी चर्चा मैं आगे करूंगा।

खबर है कि हृदय रोग और हाई बीपी की दवाओं सहित 94 के सैंपल फेल पाए गए हैं। तीन दवा तो नकली पाए गए हैं। आश्चर्य की बात है कि इस हाहाकारी खबर पर जनता खामोश है। मतलब जिस भरोसे के साथ लोग दिल की बीमारी और बीपी की दवा सेहतमंद होने के लिए खा रहे थे, वह तो 'दिल्लगी' जैसी थी। नकली दवा का इतना बड़ा कारोबार सरकार की नाक के नीचे हो और इसका पता भी तब चला है जब दवाइयां बाजार में पसर चुकी हों तो इसे क्या कहा जाए? यह सारा धत् कर्म हिमाचल प्रदेश में स्थापित दवा फैक्टरियों में ज्यादा हो रहा है और काफी अरसे से हो रहा है। हालांकि अन्य राज्यों की फैक्टरियों में बनी 56 दवाओं के सैंपल भी फेल हुए हैं। हिमाचल प्रदेश में बद्दी, सिरमौर, पांवटा साहिब, नालागढ़ में बनी कई जीवनरक्षक दवा बेकार पाए गए हैं। उसी तरह उत्तराखंड और पंजाब में भी बनी दवाओं के सैंपल फेल हुए हैं। दरअसल, नामचीन ब्रांड की दवा कंपनियों के समानांतर नकली दवा बनाने वाला सिंडिकेट भी बाजार में मौजूद है और बेहद साफगोई और भरोसे के साथ काम करता है। हालांकि भारत में केंद्रीय औषधि मानक नियंत्रण संगठन (सीडीएससीओ) है जो दवाओं की गुणवत्ता, सुरक्षा और प्रभावकारिता के लिए मानक निर्धारित करती है और उनकी देखरेख करती है। पिछले वर्ष इसी सितम्बर माह में पैरासिटामॉल सहित 53 दवाएं क्वालिटी टेस्ट में फेल पाई गई थी। इसमें विटामिन, शुगर और ब्लड प्रेशर की दवाएं भी शामिल थी। सीडीएससीओ की लिस्ट में कैल्शियम और विटामिन डी3 सप्लीमेंटस और एंटी डायबिटीज सहित हाई ब्लड प्रेशर की दवाएं भी शामिल थी। उस मामले में किसे दंडित किया गया, किस फैक्टरी को ब्लैक लिस्ट किया गया; किसी को पता नहीं।

अनमोल वचन

इस बात को व्यक्त मत होने दीजिए कि आपने क्या करने के लिए सोचा है, बुद्धिमानी से इसे रहस्य बनाए रखिए और इस काम को करने के लिए दृढ़ रहिए।
-चाणक्य

जो भारत पर गर्व करे वह हिंदू

आत्मनिर्भर भारत

शंभू नाथ शुक्ल

धर्म एक नियामक है जो हमारे समाज और जीवन को नियमित करता है. हर धर्म के पैगम्बर, मसीहा और अवतार मनुष्य के जीवन को नियमित करने ही आते है। चाहे वह इस्लाम हो, ईसाइयत हो या हिंदू। धर्म ही धारण करने योग्य है इसीलिए वह धर्म है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (RSS) के प्रमुख मोहन भागवत का ताजा बयान सुर्खियों में है। उन्होंने कहा कि भारत पर गर्व करने वाला हर व्यक्ति हिंदू है. राजनीतिक रूप से यह बयान दूर तक मार करता है। अगर यह परिभाषा मान ली जाए तो हर भारतीय नागरिक और उसका परिवार हिंदू है तथा देश के बाहर बसे भारतीय भी। भले ही उनका धर्म कोई और हो। यह हिंदू की एक उदार व्याख्या है किंतु उतनी ही जटिल भी। क्योंकि हर धर्म के अपने कुछ सिद्धांत होते है और उन सिद्धांतों पर अमल करने वाला ही उस धर्म का अनुयायी होता है। जहां तक देश पर गर्व करने की बात है तो हर व्यक्ति अपने देश पर गर्व करता है। उसकी साझी विरासत पर, रीति-रिवाजों और परंपराओं पर। लेकिन हर व्यक्ति हिंदू कैसे हुआ? बांग्लादेश, पाकिस्तान, म्यांमार, श्रीलंका आदि देशों में लाखों हिंदू है जो अपने देश पर गर्व करते है पर वे मुस्लिम या बौद्ध तो नहीं कहे जा सकते।

या तो भागवत जी कहें कि हिंदू कोई धर्म नहीं, कोई पूजा पद्धति नहीं, यह सिर्फ एक समाज है. जिसमें हर धर्म के अनुयायी रह सकते है. अथवा हिंदू के मायने बदलें! डच्च प्रमुख के बोल देने से हिंदू धर्म की परिभाषा नहीं बदली जा सकती. क्योंकि हिंदू धर्म अब रूढ़ हो चुका है। इसे कोई भी सिर्फ परंपराओं की निरंतरता नहीं स्वीकार करता. यह अलग बात है कि हिंदू धर्म के भीतर अनेक मत-मतांतर है। उनमें परस्पर खूब भेद है किंतु उनके भीतर जो तत्त्व है, वह समान है इसीलिए वे हिंदू है। परंतु ईसाई और इस्लाम धर्म इस परिभाषा को कैसे स्वीकार करेगा. वे एक भिन्न पृष्ठभूमि से आए धर्म है। बहुत सारे भारतीय ऐसे है जो पहले हिंदू थे और उन्होंने ईसाई या इस्लाम को अपना लिया। उन्हें भारतीय तो कहा जा सकता है मगर हिंदू नहीं. न वे खुद को हिंदू कहलाना किसी भी अर्थ में पसंद करेंगे। अलबत्ता वे भारत पर उसी तरह गर्व करते है जैसे कि कोई भी धर्म पारायण हिंदू।

यह सच है कि आज तक हिंदू की कोई सार्वभौमिक परिभाषा नहीं तय की गई. मोटा-मोटी यही माना जाता है कि जो भी व्यक्ति भारत में रहता है और वह इस्लाम अथवा ईसाईयत के दायरे से बाहर है, वह हिंदू है. हालांकि भारत में सिख और जैन तथा बौद्ध धर्मो का भी जन्म हुआ पर वे स्वयं को हिंदू नहीं कहते. लेकिन हिंदू नागरिक कानून उन पर लागू होते है। यूं भी सिखों के कई मत हिंदू धर्म के बहुत करीब है. इसके अतिरिक्त इन सबके संस्कार भी लगभग समान है. जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य को कई संस्कारों में धर्म बांधता है और इस लोक से परे दूसरे लोक की कल्पना हर धार्मिक समाज करता है. ताकि मनुष्य एक नैतिक दायरे में रहे। अन्यथा मनुष्य और पशु समान हो जाएंगे। इसके पीछे एक अवधारणा यह भी है कि मनुष्य पाप कर्म से विरत रहे। अगर गलत किया तो ईश्वर उसे नर्क में भेज देगा।

हर धर्म के पीछे एक सीख होती है कि मनुष्य समाज में यदि धर्म न हो तो मानव जीवन पशु से भी गया गुजरा होगा। क्योंकि मनुष्य के पास उसका दिमाग है और वह पछताता है, वह उल्लसित होता है तथा अनमना हो जाता है। मानव की इन संवेदनाओं को भरने के लिए धर्म उसको एक नियति प्रदान करता है और मनुष्य भले पछताए या प्रसन्न हो लेकिन धर्म अपनी वर्जनाओं से उसे सामान्य गति देता है। वह बताता है कि जीवन में रंज है तो खुशी भी उतनी ही है और अगर अपार खुशी है तो ऐसा सदा नहीं चलने वाला क्योंकि हर दिन जात न एक समाना! अर्थात सारे दिन समान नहीं होते. जब किसी की चढ़दी कला हो तो वह आसमान में उड़ने लगता है और जैसे ही वह कला उतरती है दुखों का पहाड़ टूट पड़ता है. इसकी वजह यह है कि जब कला ऊपर थी तब आप किसी की परवाह नहीं कर रहे थे और आज जब वह कला उतार पर है तो आपको वही सब लोग याद आते है। बेहतर रहता कि RSS प्रमुख यह कहते कि भारतीय समाज परस्पर प्रेम और भाईचारे से रहे क्योंकि समाज के सभी लोग समान है. किसी का धर्म छोटा या बड़ा नहीं है. संघ प्रमुख बताते कि अगर धर्म नहीं होता तो कौन मनुष्य को अवलंबन (सहारा) देता, ! धर्म ने मनुष्य को एक नियति और जीवन जीने की कला प्रदान की है.

ताकि वह सबसे एक जैसा व्यवहार कर सके। आज के आधुनिक धर्मो में सबसे नवीन धर्म है सिख। उसके प्रणेता गुरु नानक ने शुरू में कह दिया था- अव्वल अल्लाह नूर उपाया कुदरत दे सब बंदे, एक नूर तो सब जग उपज्या कोन भले कोन मंदे! यह सारा चराचर जगत एक ही प्रकाश पुंज से निकला है और सारे धर्म भी. अतः यहां किसे सर्वोत्तम कहा जाए और किसे नीचा? वह प्रकाश पुंज खुद साक्षात परामात्मा ने पैदा किया. आदमी के जीवन में दुख है और अगर वह इन दुखों को विधाता का कर्म मानकर चले तो भला काहे का दुख! अयोध्या लौटने पर भरत को जब पता चलता है कि उनकी मां कैकेयी के कहने पर उनके बड़े भ्राता रामचंद्र जी सीता और लक्ष्मण के साथ जंगल चले गए तो उन्हें आघात लगता है और तत्काल वे रामचंद्र जी को वापस ले आने के लिए वन की तरफ प्रस्थान करते है. प्रयाग में ऋषि भारद्वाज के आश्रम में पहुंचकर उन्हें पता चलता है कि राम का लौटना असंभव है तो वे दुख के सागर में डूब जाते है। तब ऋषि भारद्वाज उन्हें समझाते है, सुनऊ भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ, हानि, लाभ, जीवन, मरण, जस, अपजस विधि हाथ अर्थात राज कुमार भरत जीवन में हानि, लाभ और आयु या मरण अथवा यश व अपयश मनुष्य के हाथ में नहीं उस विधाता के हाथ में है जिसने उसे रचा। इसलिए दुख प्रकट करने का कोई कारण नहीं है।

अगर मनुष्य यह मान ले कि जीवन में उसका काम केवल कर्म करना है और फल वह अपनी इच्छा के अनुरूप नहीं पा सकता है तो काफी हद तक उसे सुकून की जिंदगी मिल सकती है. खुद गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है- कि कर्मण्ये वा धिकारस्ते मा फलेषुकदाचन यानी मनुष्य का अधिकार उसके कर्म तक ही सीमित है फल की इच्छा उसे नहीं करनी चाहिए। जिस दिन उसने फल की इच्छा की उसी दिन निराशा उसे घेर लेगी क्योंकि फल कभी भी अपेक्षा के अनुकूल मिल ही नहीं सकता. इस प्रकृति का हर जीवधारी इसी संबल पर जीवित है. वन में एक पशु घात लगाता है और हिरण के पीछे भागता है. पर कई सौ या हजार मीटर तक की रेस लगाने के बाद भी जरूरी नहीं कि शिकार उसे मिल ही जाए और मिल भी गया तो पता चला कि उससे बलशाली पशु उससे उसका यह शिकार छीन ले गया। इसलिए जो सोचा, वह मिल जाए, यह जरूरी नहीं.

इस्लाम में भी मान्यता है कि मनुष्य कभी अकेला नहीं होता है. हर समय ईश्वर उसके साथ ही रहता है। हजरत मोहम्मद साहब जब मक्का जा रहे थे तब उनके साथ उनके शिष्य अबू बकर ही थे. एक तरफ असंख्य दुश्मन और दूसरी तरफ सिर्फ हजरत मोहम्मद और अबू बकर। अबू बेहद घबराए हुए थे और चारों ओर सशंकित नजरों से देख रहे थे। हजरत मोहम्मद साहेब ने पूछा कि अबू बकर तुम इतने घबराए हुए से क्यों हो? अबू बकर ने कहा कि हम सिर्फ दो है और दुश्मन हजारों की संख्या में इसीलिए डरा हुआ हूं. मोहम्मद साहब ने कहा कि हम दो नहीं तीन है। अबू बकर भौचक्के से उनकी तरफ देखने लगे. वे बोले कुछ समझा नहीं। हजरत मोहम्मद साहब ने कहा कि अबू बकर हमारे साथ खुदा है. याद करो कि खुदा को अगर तुम याद करते हो तो खुदा हर समय तुम्हारे साथ रहता है। और जब खुदा खुद हमारे साथ है तो फिर डर किस बात का? यह भरोसा हमें धर्म प्रदान करता है।

धर्म एक नियामक है जो हमारे जीवन को नियमित करता है. हर धर्म के पैगम्बर, मसीहा और अवतार मनुष्य के जीवन को नियमित करने ही आते है। चाहे वह इस्लाम हो, ईसाइयत हो या हिंदू। धर्म ही धारण करने योग्य है इसीलिए वह धर्म है। आज के इस आपाधापी वाले युग में मनुष्य कब का नष्ट हो चुका होता यदि धर्म उसे संबल नहीं देता। स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि धर्म को जानना है तो दुखी पीड़ित और वंचित व्यक्ति के पास जाइए वहां आपको ईश्वर मिलेगा जब आप उसकी सेवा करेंगे। यहां ईश्वर यानी कि तृप्ति यानी कि मंजिल। यह तृप्ति ही ईश्वर है जो मनुष्य को उसका लक्ष्य निर्धारण में मदद करती है। इसीलिए हर समाज सुधारक और एक समान समाज के स्वप्नदर्शा ने धर्म को जीवन के लिए आवश्यक बताया है।

हिंदू समाज में तो धर्म किसी विशेष पंथ का नाम नहीं वरन साफ कहा गया है कि यह पंथ है. जिस किसी भी पंथ पर चलकर, पंथानगामी होकर आपको मंजिल प्राप्ति की प्रतीति होती है वही धर्म है. धर्म की इससे अद्भुत और तर्कशील व्याख्या भला और क्या हो सकती है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते है मामेकं शरणं ब्रज! मुझ एक की शरण में आ और साथ में यह भी कहा गया है कि जिस पंथ पर चल रहे हो उसी पर अग्रसर रहो- स्वधर्मे निधनं श्रेयाः परधर्मो भयावहः जब अपने मार्ग पर चलना ही धर्म है तब भागवत जी कैसे कह सकते है कि जो देश पर गर्व करे वह हिंदू. उन्हें कहना चाहिए कि जो अपने देश पर गर्व करे वही सच्चा भारतीय. भले उसकी धार्मिक आस्था अलग-अलग हो।

(लेखक के निजी विचार हैं)

चुनावी गडबड़ियों के उजागर होने और मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण जैसे अभियान ने समूचे विपक्ष को एकजुट कर दिया है। बिहार में इस अभियान का तीव्र विरोध हो रहा है, जो अन्य गैर-भाजपा शासित राज्यों में फैलने की संभावना है। लगता है कि इसी सब से लोगों खासकर विपक्षी दलों का ध्यान हटाने की गर्ज से सरकार ने तीन नये कानून लाने की पहल की जिनका हश्र तीन कृषि कानूनों या ब्रिटिश हुकूमत के रॉलेट एक्ट जैसा होने की संभावना है

धातकी के वैज्ञानिक और आयुर्वेदिक फायदे

- प्राकृतिक औषधियों में शुमार पौधों में से एक पौधा है, 'धातकी', जिसे 'धवई' और 'बहुपुष्पिका' के नाम से भी जाना जाता है। यह पौधा भारत के लगभग हर राज्य में पाया जाता है। इस पौधे के फूल, फल, जड़ और छाल का इस्तेमाल अलग-अलग आयुर्वेदिक उपचारों में किया जाता है, जो इसके बहुमुखी फायदों को दर्शाता है
- अमेरिकन नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन (एनआईएच) के मुताबिक, धातकी का नाम 'वुडफोर्डिया फ्रुटिकोसा' है। इसकी शाखाओं और पत्तियों पर काले बिंदु होते हैं, जो इसे अन्य पौधों से अलग पहचान दिलाता है। इसके फूल चमकीले लाल होते हैं, जबकि फल पतले और अंडाकार। इनमें भूरे रंग के छोटे बीज भरे होते हैं
- हालांकि, धातकी का सेवन डॉक्टर की सलाह से ही करना चाहिए (मीडिया इनपुट्स)

कैसा ये दुष्चक्र! गिरफ्तारी में किसी दिशा-निर्देश का पालन नहीं। विपक्षी नेताओं की गिरफ्तारी पर गिरफ्तारी। नये प्रस्तावित कानून में मुख्यमंत्री वगैरह की कुर्सी पर खतरा। विपक्ष को अस्थिर करने का सबसे अच्छा तरीका है कि चुनावी मुकाबले में हराने की बजाय विपक्षी नेताओं को एजेंसियों से गिरफ्तार कराया जाए। और इस आधार पर उन्हें कुर्सी से हटाया जाए। मजे की बात यह कि सत्ताधारी पार्टी के सीएम बेधड़क!

डॉ. अभिषेक संघवी, कांग्रेस नेता
@DrAMSinghvi

पितृसत्ता के साये में महिला सुरक्षा

सामयिक | सोनम लववंशी

भारत की आधी आबादी के लिए सुरक्षा आज भी अधूरा सपना बनी हुई है। पुलिस रिकॉर्ड में दर्ज आंकड़े कहते हैं कि हर दिन औसतन 86 महिलाएं रेप की शिकार होती हैं। यह आंकड़ा कोई नया नहीं है, लेकिन यह तो केवल दर्ज मामलों की गिनती भर है। हकीकत इससे अधिक डरावनी है, क्योंकि असंख्य घटनाएं शिकायत की दहलीज तक पहुंचती ही नहीं। सामाजिक कलंक, बदनामी का भय और न्याय की लंबी-थकाऊ प्रक्रिया महिलाओं को चुप करा देती है। यह चुप्पी अपराधियों को ताकत देती है और पीड़िताओं को और असुरक्षित बना देती है। हाल में जारी राष्ट्रीय वार्षिक महिला सुरक्षा रिपोर्ट और सूचकांक-2025 इस असुरक्षा को एक झलक में सामने लाता है। इस सूचकांक के अनुसार दिल्ली, पटना, जयपुर, कोलकाता, श्रीनगर, रांची और फरीदाबाद सबसे असुरक्षित शहरों की सूची में हैं। दूसरी ओर, मुंबई, कोहिमा, भुवनेश्वर, विशाखापत्तनम और गंगटोक अपेक्षाकृत सुरक्षित माने गए हैं। यह अंतर केवल अपराध की घटनाओं का नहीं, बल्कि मानसिकता, नागरिक भागीदारी, पुलिस की जवाबदेही और बुनियादी ढांचे की गुणवत्ता का है। गंगटोक और कोहिमा जैसे छोटे शहर दिखाते हैं कि जब समाज बराबरी को स्वीकार करता है, प्रशासन संवेदनशील रहता है, तब महिलाएं सुरक्षित महसूस कर सकती हैं।

सर्वेक्षण में शामिल 12,770 महिलाओं में से 60 प्रतिशत ने अपने शहर को सुरक्षित माना, लेकिन 40 प्रतिशत ने कहा कि वे सुरक्षित नहीं हैं। कार्यस्थलों पर स्थिति थोड़ी बेहतर है, और 91 प्रतिशत महिलाओं ने खुद को सुरक्षित बताया। मगर सार्वजनिक जगहों पर तस्वीर बदल जाती है। सात प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि उन्हें उत्पीड़न झेलना पड़ा और तीन में से दो महिलाओं ने शिकायत तक नहीं की। सार्वजनिक परिवहन में 29 प्रतिशत और अपने आस-पड़ोस में 38 प्रतिशत महिलाएं उत्पीड़न का शिकार हुईं यानी वे जगहें जो जीवन का अनिवार्य हिस्सा हैं-बस, ट्रेनें, गलियां और मोहल्ले। वहीं महिलाओं के लिए सबसे असुरक्षित साबित हो रही हैं। हालांकि यह भी ध्यान देना चाहिए कि सवा अरब से अधिक की आबादी वाले देश में बारह-तेरह हजार महिलाओं पर आधारित यह सर्वेक्षण केवल एक झलक भर है। असली तस्वीर जानने के लिए लाखों नागरिकों की राय पर आधारित अध्ययन चाहिए। और सबसे जरूरी यह कि ऐसे अध्ययनों के निष्कर्ष केवल रिपोर्टों और प्रेस विज्ञप्तियों तक सीमित न रहें, राज्य सरकारें और संस्थाएं उन पर ठोस कार्रवाई करें। वरना यह सब महज रस्मअदायगी बनकर रह जाएगा।

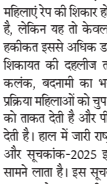

दरअसल, यह मुद्दा सिर्फ अपराधियों का नहीं है, समाज की उस मानसिकता का है जो महिलाओं को बराबरी का दर्जा देने को तैयार नहीं। पितृसत्ता, स्त्री उपेक्षा और लैंगिक भेदभाव हमारी सोच में गहरे धंसे हुए हैं। जब तक लड़की और लड़के के लिए अलग-अलग मानक बने रहेंगे, तब तक असमानता से उपजे अपराध मिटेंगे नहीं। परिवार और स्कूल से ही बराबरी और संवेदनशीलता की शिक्षा शुरू करनी होगी। कानूनों को और सख्त बनाना जरूरी है, लेकिन उससे भी ज्यादा जरूरी है कि कानून लागू करने वाले तंत्र की जवाबदेही तय हो। पुलिस का रवैया संवेदनशील हो, शिकायत दर्ज करना आसान हो और न्याय की प्रक्रिया तेज और पारदर्शी हो। महिला आयोग और अन्य संस्थाओं को बयानबाजी से आगे बढ़कर ठोस कदम उठाने होंगे वरना महिलाएं सुरक्षित नहीं रह पाएंगी।

रीडर्स मेल

वाहन की परफॉर्मेंस देखी जाए

वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग ने आदेश जारी कर 15 वर्ष पुराने पेट्रोल और 10 वर्ष पुराने डीजल वाहनों पर लगाई गई तेलबंदी वापस ले ली है। एक जुलाई से वाहनों की धरपकड़ से दिल्ली में सियासत गरमा गई थी और मध्यमवर्गीय परिवारों में नाराजगी भी देखी गई थी। दिल्ली के उपराज्यपाल ने भी इस संदर्भ में दिल्ली सरकार से आग्रह किया था। इसके बाद यह आदेश पारित किया गया। सरकार की पहल पर मर्सिडीज तक की जब्ती दिल्ली सरकार को भारी पड़ी थी। देखा जाए तो प्रदूषण रोकने के लिए नया आदेश ज्यादा कारगर साबित होगा क्योंकि दिल्ली ही नहीं, बल्कि अब गाजियाबाद, नोएडा, फरीदाबाद, गुरुग्राम आदि दिल्ली से सटे शहरों में भी आदेश लागू होगा। यदि वाहन वास्तव में जर्जर है, फिटनेस संभव नहीं है, गाड़ी की अच्छी परफॉर्मेंस नहीं है, और भारी प्रदूषण हो रहा है, तो ऐसे वाहनों को 10 से 15 वर्ष की अवधि नहीं, बल्कि पहले ही सड़कों पर चलने की परमिशन न दी जाए।

हेमंत सिंह सिसौदिया, धौलपुर

आदेश की धज्जियां उड़ाईं

सुप्रीम कोर्ट के आदेश की धज्जियां उड़ाते हुए देश की राजधानी में सुप्रीम कोर्ट के सामने ही बिना सुरक्षा उपक्रमों के मैनुअल तरीके से गटर की सफाई का मामला सामने आया है, जिस पर सुप्रीम कोर्ट ने कड़ा रुख अपनाते हुए दिल्ली सरकार के पीडब्ल्यूडी विभाग पर 5 लाख का जुर्माना लगाया है, और भविष्य के लिए चेतावनी दी है। राज्यों से ऐसी घटनाएं आती रही हैं जिन पर सरकार को सख्त कार्रवाई करनी चाहिए। सरकार एवं संस्थाओं को सोचना चाहिए कि इस कार्य के लिए मनुष्य का प्रयोग न किया जाए जबकि वैकल्पिक साधन मौजूद हैं। मेरा मानना है कि सफाईकर्मियों में जागरूकता भी जरूरी है।

महेश चन्द्र केसरवानी, ई मेल से

रायशुमारी से बनेगी बात

'ब्रदर्स ऑफ इटली पार्टी' इटली में एक राष्ट्रीय-रूढ़िवादी और दक्षिणपंथी लोकलुभावन राजनीतिक पार्टी है, जो वर्तमान में देश की सत्तारूढ़ पार्टी है। इसका नेतृत्व प्रधानमंत्री जियोर्जिया मेलोनी कर रही हैं। बीते रविवार को इटली में रायशुमारी का पहला दौर कराया गया, जिसमें लोगों को आप्रवासन को लेकर कुछ बदलाव पर अपनी सहमति देनी है। पहला प्रस्ताव गैर-ईयू निवासियों के लिए नागरिकता के लिए आवेदन करने की प्रतीक्षा अवधि को 10 वर्ष से घटाकर केवल पांच वर्ष करने का है, जिससे इटली, जर्मनी और फ्रांस जैसे देशों के बराबर हो जाएगा। जनमत संग्रह में बेहतर नौकरी सुरक्षा प्रदान करने के लिए श्रम सुधारों को वापस लेने की भी मांग की गई है।

रामबहादुर सिंह, जमशेदपुर
letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
वर्ष - 20, अंक 6840
सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन द्वारा हिन्दुस्तान मीडिया वेन्चर्स लिमिटेड प्रेस, मौजा-दरियापुर, पुलिस स्टेशन-शाहपुर, दानापुर, पटना से मुद्रित तथा चतुर्थ तल, सहारा इण्डिया विहार, बोरिंग रोड क्रासिंग, पटना से प्रकाशित। । स्थानीय संपादक - संजय त्रिपाठी *।
पटना कार्यालय- 3911448/417/454/422, फैक्स : 2535935,2520760 विज्ञापन-3911455/434, प्रसार- 3911451/428
आर.एन.आई. सं. -बीआईएचएचआईएन/2006/18082 Postal Reg. No. : R-10/NP-50/06-07
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु उत्तरदायी

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

बीएलओ एवं चुनाव आयोग

भारत के चुनाव आयोग की प्रतिष्ठा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक सन्देहों से परे रही है परन्तु हालिया वर्षों के दौरान इसकी साख वह नहीं रही है जिसके लिए यह विश्व के लोकतान्त्रिक देशों में जाना जाता था। पूरे विश्व में सर्वाधिक मतदाताओं वाला भारत ऐसा देश है जिसमें सरकारों का गठन नागरिकों द्वारा मतदान करा कर किया जाता है। भारत में मतदाताओं की संख्या ही लगभग 98 करोड़ के आसपास है जो कि दुनिया के अधिसंख्य देशों की आबादी के मुकाबले बहुत बड़ी जनसंख्या है। इतनी बड़ी जनसंख्या के मतदाता समूह को नियमबद्ध करना कोई मामूली काम नहीं है। इसीलिए लोकतान्त्रिक दुनिया के अग्रणी देश तक भारत की चुनाव प्रणाली का अध्ययन करने आते रहे हैं। भारत की चुनाव प्रणाली की खूबी यह है कि इसमें देश के प्रत्येक वयस्क नागरिक को मत देने का अधिकार है, चाहे उसका धर्म या जाति अथवा वर्ग या सम्प्रदाय कोई भी हो। यह वोट का अधिकार कोई छोटा अधिकार नहीं है क्योंकि इसी के माध्यम से भारत के हर नागरिक को गांधी बाबा स्वयंभू बना कर गये हैं।

लोकतन्त्र में इस वोट की कोई भी कीमत नहीं आंकी जा सकती है। चुनाव आयोग का असल काम यही है कि वह लोगों को अपने इस अधिकार को अधिक से अधिक संख्या में प्रयोग करने के लिए प्रेरित करे जिससे किसी भी बनने वाली सरकार में लोगों की इच्छा का समावेश हो सके। हमारे संविधान निर्माताओं ने स्वतन्त्र व स्वायत्त चुनाव आयोग का गठन इसीलिए किया था कि देश की राजनीतिक प्रणाली में सत्ता पर काबिज कोई भी दल किसी भी सूरत में अपनी इच्छा न थोप सके। इसके लिए चुनाव प्रणाली को इतना पाक-साफ बनाया गया कि चुनावों के अवसर पर प्रशासन की बागडोर भी चुनाव आयोग को सौंपने का निर्णय किया गया। मगर चुनाव आयोग का यह भी कर्त्तव्य बनता है कि वह भारत की बढ़ती जनसंख्या के अनुरूप बढ़ते वयस्क नागरिकों को मतदाता बनाये। इस क्रम में चुनाव आयोग हर साल मतदाता सूचियों का संशोधन करता है परन्तु इस बार बिहार के चुनावों से पहले आयोग ने सूचियों का गहन पुनरीक्षण करने का फैसला किया जिसे सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती भी दी गई।

देश की सबसे बड़ी अदालत यह तय करेगी कि क्या गहन पुनरीक्षण कराना संवैधानिक है? इस मामले में न्यायालय में बहस जारी थी कि इसी दौरान बिहार के चुनाव हो गये और उनके बाद आयोग ने देश के 12 राज्यों में गहन पुनरीक्षण कराने के आदेश जारी कर दिये। आजकल यह कार्य इन सभी प्रदेशों में जोर-शोर से चल रहा है। इन 12 राज्यों में तीन केन्द्र प्रशासित क्षेत्र भी शामिल हैं। गहन पुनरीक्षण का कार्य चुनाव आयोग राज्य सरकारों के कर्मचारियों की सेवाएं लेकर ही करता है जिनमें सरकारी स्कूलों के अध्यापक सर्वाधिक होते हैं। ये कर्मचारी ब्लाक स्तर पर मतदाता सूचियों की जांच करते हैं।

देश की सबसे बड़ी अदालत यह तय करेगी कि क्या गहन पुनरीक्षण कराना संवैधानिक है? इस मामले में न्यायालय में बहस जारी थी कि इसी दौरान बिहार के चुनाव हो गये और उनके बाद आयोग ने देश के 12 राज्यों में गहन पुनरीक्षण कराने के आदेश जारी कर दिये। आजकल यह कार्य इन सभी प्रदेशों में जोर-शोर से चल रहा है। इन 12 राज्यों में तीन केन्द्र प्रशासित क्षेत्र भी शामिल हैं। गहन पुनरीक्षण का कार्य चुनाव आयोग राज्य सरकारों के कर्मचारियों की सेवाएं लेकर ही करता है जिनमें सरकारी स्कूलों के अध्यापक सर्वाधिक होते हैं। ये कर्मचारी ब्लाक स्तर पर मतदाता सूचियों की जांच करते हैं और मतदाताओं के नाम की तसदीक करते हैं। इन्हें अंग्रेजी में बीएलओ कहा जाता है। जिन 12 राज्यों में पुनरीक्षण का काम चल रहा है वहां से ऐसी खबरें आ रही हैं कि कई बीएलओ काम का भारी दबाव होने की वजह से आत्महत्या तक कर रहे हैं। यदि मीडिया की खबरों को सही मानें तो अभी तक पांच राज्यों प. बंगाल, केरल, गुजरात मध्य प्रदेश व राजस्थान में 14 बीएलओ खुदकशी कर चुके हैं। यह बहुत गंभीर मामला है जिस तरफ चुनाव आयोग के साथ ही राज्यों की सरकारों को भी ध्यान देना चाहिए और बीएलओ पर डाली गई जिम्मेदारियों की समीक्षा करनी चाहिए। चुनाव आयोग ने आदेश जारी कर दिया है कि आगामी 4 दिसम्बर तक पुनरीक्षण का पहला चरण पूरा हो जाना चाहिए। इसका मतलब है कि 4 दिसम्बर तक अपने क्षेत्र के हर वयस्क मतदाता का हिसाब-किताब बीएलओ को अन्तिम रूप से करना होगा। सुनने में यह काम जितना सरल लगता है करने में उतना ही मुश्किल है क्योंकि बीएलओ को ही आम जनता के इस बारे में उठाये गये हर सवाल का जवाब देना पड़ता है।

बीएलओ अधिकतर शिक्षक वर्ग के होते हैं और उन पर यह जिम्मेदारी होती है कि किसी भी तौर पर उनके द्वारा किया गया पुनरीक्षण पूरी तरह शुद्ध हो। इस प्रक्रिया में उन्हें सभी मतदाताओं की गहरी तसदीक करनी पड़ती है। प. बंगाल के नदिया जिले में 53 वर्ष की एक बीएलओ ने काम के बोझ की वजह से ही आत्महत्या की। उनके परिवार के सदस्यों की मानें तो उन पर काम का बोझ इतना अधिक था कि वह अपना मानसिक नियन्त्रण नहीं रख पाईं। इसी प्रकार गुजरात के तापी जिले में एक बीएलओ की दिल का दौरा पड़ने से मृत्यु पिछले गुरुवार को हो गई। राज्य में इससे पूर्व भी दो और बीएलओ इसी तरह अपनी जान गंवा बैठे। मध्य प्रदेश में पिछले सप्ताह दो बीएलओ मौत का ग्रास बन गये। इनके परिवारजनों ने भी काम का अधिक बोझ होने की शिकायत की। चुनाव आयोग का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह इन सभी बीएलओ की मृत्यु का असली कारण जाने और समझे कि क्या काम का बोझ ही उनकी आत्महत्या का सबब बन रहा है। आयोग ने प. बंगाल के बीएलओ की आत्महत्या पर तो रिपोर्ट मांगी है मगर अन्य राज्यों में हुई ऐसी घटनाओं का अभी तक संज्ञान नहीं लिया है। बहुत जरूरी है कि चुनाव आयोग इस बारे में उच्च स्तरीय फैसला ले और बीएलओ के साथ कुछ अन्य कर्मचारी भी लगाये।

जब सिसकियां कलेजे को चीर जाती हैं

गीता पाढा

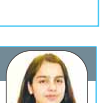

"क्यों आज के दौर की नारी भी स्वयं को लाचार पाती है,
आत्मनिर्भर होकर भी जानवरों की तरह पति की मार खाती हैं,,
फिर भी अपने चेहरे के निशान दुनिया से छिपाती है,
और रोज एक झूठी कहानी अपने बच्चों को बताती है,,
आज भी महिलाएं समाज में हाशिए पर नजर आती है,
जब जुल्म की सिसकियां कलेजे को चीर जाती हैं...।।"

बलराज साहनी का यज्ञोपवीत और टैगोर की लाहौर यात्रा

डा. चन्द्र त्रिखा
chandertrikha@gmail.com

यह बातें भले ही अविश्वसनीय लगें मगर तथ्य यहीं है कि वामपंथी एवं प्रगतिशील विचारों वाले बलराज साहनी और उनके छोटे भाई भीष्म साहनी को बचपन में ही उनके पिता लाला हरबंस लाल साहनी ने शुरूआती शिक्षा एवं संस्कारों के लिए गुरुकुल में भेजा था। वहां पर यज्ञोपवीत संस्कार के मध्य दोनों के बाल पूरी तरह मुंडवाए गए थे। बकायदा चोटी भी निकाली गई थी।

भीष्म साहनी 1970-80 के दशक में एक बार अम्बाला छावनी आए थे तो उन्होंने बताया था कि वह कुछ समय वहां जीएमएन कॉलेज में पढ़ाते भी रहे थे। यद्यपि भीष्म अंग्रेजी साहित्य पढ़ाते थे, मगर कहानी लेखन हिंदी में करते थे। अम्बाला छावनी के माल रोड पर लम्बी सैर के मध्य उन्होंने बताया था, 'बचपन में मुझे गुरुकुल में ऋजुपाठ कंठस्थ कराया गया था और भाई बलराज साहनी को 'लघुकौमुदी' कंठस्थ कराया गया था। यज्ञापवीत के बाद दोनों भाइयों को कुछ दिनों तक परंपरा के अनुसार भिक्षापात्र लेकर भिक्षा मांगने के लिए भी जाना पड़ा था। बाद में हम दोनों को रावलपिंडी के एक आर्य स्कूल में पढ़ने के लिए भेज दिया गया था। प्रारंभिक सरकारों की विचित्रता का उल्लेख करते हुए भीष्म साहनी ने बताया था कि एक बार आर्य समाज की अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर पिता जी सारे परिवार को महर्षि दयानंद के गुरु स्वामी विरजानंद के टूटे-फूटे आवास में भी ले गए थे और हम दोनों भाइयों ने स्कूल में श्रवण कुमार के जीवन पर आधारित नाटक का मंच करने में भी लगाया गया था।

भीष्म साहनी से मेरी मुलाकातें बाद में दिल्ली में भी हुई थीं, जब वह एक कहानी पत्रिका के सम्पादक थे। वैचारिक बदलाव कैसे किसी भी व्यक्ति के जीवन में बदलाव लाता है, इसका जीवंत विश्लेषण उन दिनों के साक्षात्कारों में भीष्म ने किया था।

उन्होंने वे दिन भी दोहराए जब गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर, अपने बलराज साहनी को साथ लेकर शांति निकेतन के लिए धन संग्रह का लक्ष्य लेकर लाहौर भी आए थे और रावलपिंडी भी गए थे। उन्होंने बताया, तब टैगोर को शांति निकेतन के लिए लाहौर के जिन बड़े लोगों ने वित्तीय मदद दी थी उनमें स. दयाल सिंह मजीठिया (बाद में ट्रिब्यून-समूह के संस्थापक) और सर गंगाराम भी शामिल थे। वहीं पर ब्रैडला हाल में गुरुदेव को कविता पाठ के लिए भी आमंत्रित किया गया था और उनकी कुछ कविताओं का हिंदी व अंग्रेजी में अनुवाद हरिवंश राय बच्चन व उनकी जीवनसंगिनी तेजी बच्चन ने प्रस्तुत किया था।

फैज व एलिस और कासमी भी दर्शकों में मौजूद थे। उसी ब्रेडला हॉल में उदय शंकर व उनकी नृत्य मण्डली ने भी शांति निकेतन के लिए धन संग्रह हेतु अपनी प्रस्तुतियां दी थीं। बाद में यही ब्रेडला हॉल सरदार भगत सिंह व अन्य क्रांतिकारियों की गतिविधियों का गुप्त ठिकाना भी बना। एक दिलचस्प संस्मरण यह भी था कि वहां की हीरामंडी की कुछ नृत्यांगनाओं और वेश्याओं ने भी गुरुदेव को शांति निकेतन के लिए अपनी ओर से कुछ नगदी व कुछ जेवर भेंट किए थे।

उस दिन वहां गुरुदेव टैगोर द्वारा तत्कालीन वायसराय लार्ड चैम्स फोर्ड को लिखा गया 30 मई, 1919 का वह पत्र भी वितरित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था, 'अब समय आ गया है जब ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा प्रदान किए गए सम्मान, शर्मिंदगी का एहसास देने लगे और मैं अब संघर्षरत देशवासियों के साथ खड़ा होने में गर्व महसूस करता हूं और यह भी इतिहास में दर्ज है कि टैगोर ने ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रदत्त 'नाइटहुड' व सर की उपाधि भी जलियांवाला बाग में हुए नरसंहार से आहत होकर लौटा दी थी।

इसी संदर्भ में गुरुदेव और बलराज साहनी के बीच हुआ वह संवाद भी चर्चा में बना रहा, जब बलराज साहनी ने गुरुदेव से स्नेहवश शिकायत की थी, 'आपने राष्ट्रगीत भी लिखे, राष्ट्रगान भी लिखे मगर 'विश्व गीत नहीं लिखा।' तब गुरुदेव ने उत्तर दिया था, 'बलराज तुम शायद भूल गए, वह विश्व गीत तो लगभग 500 वर्ष पूर्व ही लिखा जा चुका है। तुम्हें याद होगा श्री गुरुनानक देव जी की 'गगन में थाल... वाली आरती जो उन्होंने भाई मरदाना के साथ पुरी के जगन्नाथ मंदिर के प्रांगण में गाई थी। वह विश्व गीत ही तो था। अब उसके बाद तो कुछ भी लिखा जाना सम्भव कहां है?

उन दिनों गुरुदेव का एक चित्र लाहौर के ही एक फोटोग्राफर निरंजन सिंह नकोदरी ने खींचा था। एक चित्र में गुरुदेव, मिलाप के सम्पादक व आर्य समाजी नेता महाश्य खुशहाल चंद अपने मेजबान लाल धनीराम भल्ला व महात्मा हंसराज के साथ दिखाई दे रहे हैं। परिस्थितियां व ऐतिहासिक संदर्भ गवाह है कि वर्तमान लाहौर जहां इन दिनों कट्टर आतंकी गुटों का बोलबाला है, एक समय भी भारतीय संस्कृति, कला व साहित्य का मुख्य केंद्र था। इसी शहर में विवेकानंद के तीन दिन तक प्रवचन चले थे और गुरुदेव भी सात दिन ठहरे थे।

सेना बनाम सर्वोच्च न्यायालय बनाम मानवाधिकार

विनीत नारायण
www.vineetnarain.net

पिछले दिनों एक पोस्ट सोशल मीडिया पर तेजी से वायरल हुई। इस पोस्ट में सेवानिवृत्त कर्नल ए.एन. रॉय का बयान सेना के उस वर्ग की भावना को स्पष्ट करता है जो लगातार आतंकवाद, हिंसा और राजनीतिक अस्थिरता वाले इलाकों में डटा रहता है। जब सैनिक सीमाओं या कश्मीर जैसे 'संवेदनशील क्षेत्रों' में आतंकवाद का सामना करते हैं तब उन्हें कुछ फैसले अक्सर सैंकडों में लेने पड़ते हैं। इसमें औपचारिकताओं के लिए समय नहीं होता। जो भी निर्णय लेना होता है वह उन सैनिकों को दिए गए प्रशिक्षण और अपने विवेक से ही लेना पड़ता है।

इस पोस्ट ने सीधे सवाल उठाया, "क्या आपने कभी अपने बेटे को खोया है?" -यह व्यवस्था से उपजी पीड़ा और असंतोष की प्रामाणिक अभिव्यक्ति है। इसका मूल भाव यही है कि जब सैनिक आतंकवादी का सामना करता है तो वह कानून या न्यायालय की व्याख्याओं से अधिक अपने प्रशिक्षण और परिस्थिति पर ही निर्भर करता है। बाद में उस पर अभियोग या अधिकारों के उल्लंघन का आरोप लगना उसे अपमानजनक महसूस होता है।

दूसरी ओर, सर्वोच्च न्यायालय की दृष्टि संविधान की मूल भावना, 'हर नागरिक के मौलिक अधिकार' से निर्देशित होती है। न्यायालय किसी सेना या व्यक्ति का विरोध नहीं करता, बल्कि यह सुनिश्चित करता है कि 'राज्य की शक्ति' जवाबदेही से परे न हो। कश्मीर या किसी अशांत क्षेत्र में नागरिकों पर अत्याचार या फर्जी मुठभेड़ों के आरोप अक्सर सामने आते हैं। यदि जांच का हक छीन लिया जाए तो लोकतांत्रिक संस्थाओं की पारदर्शिता पर सवाल उठेंगे। न्यायालय यह नहीं कहता कि आतंकवादी को बचाया जाए, बल्कि यह मांगता है कि निर्दोष लोग आतंकवादी समझकर मारे न जाएं। यही 'न्याय का नैतिक आधार' है।

पोस्ट में "आतंकवादियों के मानवाधिकारों" को लेकर जो कटाक्ष किया गया है, वह भावनात्मक प्रतिक्रिया है लेकिन मानवाधिकारों का सार आतंकवादी के प्रति करुणा नहीं, बल्कि बिना भेदभाव सिद्धांतों पर आधारित न्याय को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया में है। जब किसी संदिग्ध की मौत की जांच होती है तो लक्ष्य अपराधियों को बचाना नहीं, बल्कि सत्ता के दुरुपयोग को रोकना होता है। वैश्विक संदर्भ में भी अमेरिका, ब्रिटेन या फ्रांस जैसे देशों में "वॉर क्राइम्स" या "एक्सेसिव फोर्स" पर सवाल उठते रहे हैं। सशक्त लोकतंत्र वे हैं जो अपने संस्थानों से प्रश्न पूछने का साहस रखते हैं।

यह साफ है कि सेना को अपराधी न मानें और न्यायपालिका को देश विरोधी न कहें। दोनों राष्ट्रीय सुरक्षा और संवैधानिक निष्ठा के दो मजबूत स्तंभ हैं। समस्या तब आती है जब संवैधानिक प्रक्रिया को "देश विरोधी साजिश" या सैनिक कार्रवाई को "न्याय की हत्या" मान लिया जाता है। इससे संवाद में विघटन और अविश्वास बढ़ता है।

समुचित समाधान यही है कि सेना को 'ऑपरेशनल प्रोटेक्शन' मिले, ताकि तत्काल कार्रवाई में की गई गलती अपराध न माना जाए लेकिन शक्ति का दुरुपयोग करने पर न्यायिक जांच की प्रक्रिया बनी रहे। ऐसे पोस्ट सोशल मीडिया पर राष्ट्रभक्ति की भावना को सीधा स्पर्श करते हैं। खतरा इस बात में है कि भावनाओं की लहरों में तथ्य और कानूनी सीमाओं की अनदेखी होने लगती है। न्यायपालिका, सेना और मानवाधिकार, ये विरोधी नहीं बल्कि लोकतंत्र के पूरक अंग हैं। सोशल मीडिया पर एकांगी नैरेटिव अंतत: सार्वजनिक विश्वास को कमजोर करता है। भारत में सेना, सुप्रीम कोर्ट और मानवाधिकार को लेकर टकराव की घटनाएं केवल हाल ही की नहीं, बल्कि देश के इतिहास में समय-समय पर सामने आई हैं।

18वीं शताब्दी में कोलोनियल शासन के दौरान सुप्रीम कोर्ट और गवर्नर जनरल इन काउंसिल के बीच अधिकार को लेकर पहली बड़ी भिड़ंत "कोसिजुरा मामला" में देखने को मिली। सुप्रीम कोर्ट ने सेना का इस्तेमाल करते हुए अपनी शक्तियां बढ़ाने का प्रयास किया, जबकि गवर्नर जनरल इन काउंसिल ने अदालत के आदेशों को चुनौती दी और सेना को अदालत के खिलाफ तैनात कर दिया। यह विवाद बंगाल ज्यूडिकेचर एक्ट 1781 के पास होने तक चलता रहा, जिसने अदालत की सीमाएं तय कर दीं और टकराव का अंत किया। इस मामले ने जता दिया कि अधिकारों की अस्पष्टता शक्ति संघर्ष का हमेशा केंद्र रही है।

1945 में आजाद हिंद फौज के सैनिकों पर देशद्रोह और हत्या के आरोप लगे और उन पर कोर्ट मार्शल चलाया गया। ब्रिटिश सरकार ने इन सैनिकों की गतिविधियों को "किंग के खिलाफ युद्ध" माना, जबकि भारतीय जनता और नेताओं ने देशभक्ति की भावना को कानूनी प्रक्रिया के विरोध में जोरदार तरीके से रखा। इस संघर्ष में अदालत के आदेशों और जनता के मानस के बीच गहरा विभाजन आया।

नगा पीपल्स मूवमेंट बनाम भारत सरकार केस में सर्वोच्च न्यायालय में एएफएसपीए की वैधता को चुनौती दी गई लेकिन अदालत ने यह माना कि राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर सेना को अतिरिक्त अधिकार देने का प्रावधान संविधान के खिलाफ नहीं। फिर भी अदालत ने सेना के अधिकारों पर निगरानी और जवाबदेही सुनिश्चित करने के उद्देश्य से दिशा-निर्देश जारी किए। इस मामले में मानवाधिकार और सैन्य अधिकार की सीमा को लेकर बड़ी बहस छिड़ी।

2023 में मणिपुर में जातीय हिंसा के दौरान सर्वोच्च न्यायालय से सेना/पैरामिलिट्री तैनात करने की मांग की गई थी। अदालत ने यह स्पष्ट किया कि ऐसे आदेश देना न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र में नहीं आता। यह कार्य कार्यपालिका का दायित्व है। बावजूद इसके, कभी-कभी अदालत ने सुरक्षा बलों की तैनाती के निर्देश दिए हैं, जैसे 2008 के ओडिशा के दंगों या 2023 के पश्चिम बंगाल पंचायत चुनावों के दौरान हुआ। अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस जैसे देशों में भी कभी-कभी सेना और मानवाधिकार संस्थाओं के बीच टकराव सामने आते हैं। मगर वहीं बार-बार यह सुनिश्चित किया जाता है कि जनहित और राज्य हित के बीच संतुलन बना रहे।

मणिपुर अथवा कश्मीर में जारी घटनाओं में अदालत के आदेश, सेना के अधिकार और जनता का विश्वास तीनों पहलू परस्पर टकरा सकते हैं। मगर, लोकतंत्र की खूबसूरती इनमें संतुलन बनाना और संवाद की प्रक्रिया में सही समाधान ढूंढना ही होना चाहिए। जरूरत इसी बात की है कि अतीत के अनुभवों से सीखकर आज के तात्कालिक विवादों को अंधी भावनाओं के बजाय गहन विश्लेषण और खुले संवाद द्वारा हल किया जाए। संविधान की साझा जिम्मेदारी मानते हुए सुरक्षा और अधिकार दोनों के बीच संतुलन जरूरी है।

संवाद के बिना, नफरत और अविश्वास बढ़ते हैं। सेना का आत्मसम्मान वही रख सकेगा जो न्यायपालिका पर भरोसा रखे और न्यायपालिका वही सम्मान पाएगी जो सैनिक के त्याग को समझ सके। इसीलिए सवाल पूछना गलत नहीं है लेकिन एक दूसरे पर दोषारोपण करना लोकतंत्र के लिए रचनात्मक नहीं।

डर से आजादी तक : यूपी में महिलाओं का बदलता सफर

शहजाद पूनावाला
प्रवक्ता भारतीय जनता पार्टी

उत्तर प्रदेश लंबे समय से विरोधाभासों की धरती रहा है, एक ओर यहीं से देश के सबसे बड़े सामाजिक-राजनीतिक आंदोलनों और सुधारों ने जन्म लिया, जिन्होंने भारत की स्वतंत्रता संग्राम और पितृसत्ता तथा स्त्री विरोधी मानसिकता के खिलाफ संघर्ष में अग्रणी महिलाओं को जन्म दिया लेकिन दूसरी ओर यूपी की अपनी महिलाएं लंबे समय तक एक ऐसी व्यवस्था की शिकार रहीं जो वोट बैंक के आगे घुटने टेकने वाली राजनीति के कारण उन्हें दोयम दर्जे पर रखती थी।

इन सबके बीच एक कठोर सच्चाई यह थी कि यूपी में महिलाओं पर रात की शिफ्ट में काम करने पर लगभग पूर्ण प्रतिबंध था-एक ऐसा निषेध जो केवल कानूनी दीवार नहीं था, बल्कि समाज की एक गहरी मानसिक कैद का प्रतीक था। 2017 से पहले, फैक्ट्री एक्ट 1948 की धारा 66(1)(b) के तहत, शाम 7 बजे के बाद किसी भी महिला का फैक्ट्री में प्रवेश वर्जित था, चाहे उसकी इच्छा हो या सुरक्षा के उपाय मौजूद हों। स्वतंत्रता के बाद "संरक्षण" के नाम पर बना यह कानून धीरे-धीरे महिलाओं की आर्थिक प्रगति में सबसे बड़ी बाधा बन गया, विशेषकर एक ऐसे राज्य में जहां नोएडा, कानपुर और लखनऊ की उद्योग इकाइयां रातभर चलती थीं। बेहतर वेतन और लचीले समय की चाह रखने वाली महिलाएं सूर्यास्त के साथ अपने सपनों को भी ढकती हुई पातीं। यह वह उत्तर प्रदेश था जब तक योगी आदित्यनाथ 2017 में मुख्यमंत्री नहीं बने। एक ऐसा यूपी जहां महिलाओं की श्रम भागीदारी 2011-12 में मात्र 14.7% थी, जो राष्ट्रीय औसत से भी कम थी। उस समय कथा यह थी कि महिलाएं शाम 5 बजे के बाद बाहर निकल ही नहीं सकतीं। 12 नवंबर 2025 तक यह परिदृश्य पूरी तरह बदल चुका है। योगी सरकार द्वारा लाया गया उत्तर प्रदेश फैक्ट्रियां संशोधन अधिनियम इस प्रतिबंध को इतिहास बना चुका है। अब महिलाएं 7 बजे शाम से 6 बजे सुबह तक रात की शिफ्ट में काम कर सकती हैं, उन सभी 29 श्रेणियों में भी जो पूर्व में पूर्णत: प्रतिबंधित थीं लेकिन यह कोई जल्दबाजी में उठाया कदम नहीं, यह सुविचारित सशक्तिकरण है, जिसका आधार है सहमति, दोगुना वेतन और अभेद्य सुरक्षा। महिलाओं की लिखित सहमति अनिवार्य है, जिसे श्रम विभाग में पंजीकृत किया जाता है ताकि किसी प्रकार का दबाव न बने।

इसके केंद्र में है "कवच प्रोटोकॉल"—सुरक्षा का किला। हर फैक्ट्री में 24/7 सीसीटीवी निगरानी, प्रशिक्षित सुरक्षा गार्ड, जीपीएस-ट्रैक्ड डोर-टू-डोर परिवहन अनिवार्य है। शौचालयों और मार्गों पर निगरानी, भोजन-पानी-चिकित्सा जैसी सुविधाएं सुनिश्चित और किसी भी शिफ्ट में एक साथ चार से कम महिलाएं नहीं, ताकि सामूहिक सुरक्षा बनी रहे। उल्लंघन की सजा भारी जुर्माने से लेकर बंदी तक। यह केवल नीति नहीं, यह क्रांति है-यूपी को प्रतिबंधों वाले राज्य से संभावनाओं वाले राज्य में बदलने वाली। एक नोएडा फैक्ट्री मालिक के शब्दों में, "महिलाएं लाइन में खड़ी हैं-यह सिर्फ नौकरी नहीं, सम्मान के साथ कमाई है।" यह बदलाव योगी शासन के उस व्यापक रूपांतरण की गूंज है जिसमें रात का काम महिलाओं के लिए जोखिम नहीं, विजय का प्रतीक बन गया है।

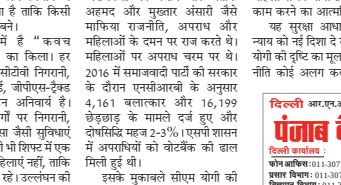

यह परिवर्तन संयोग नहीं, यह उस जीरो-टॉलरेंस कानून-व्यवस्था सुधार का परिणाम है जिसने ऐसे साहसिक निर्णयों को संभव बनाया। जब सीएम योगी ने कार्यभार संभाला तब यूपी अराजकता का पर्याय था। अतीक अहमद और मुख्तार अंसारी जैसे माफिया राजनीति, अपराध और महिलाओं के दमन पर राज करते थे। महिलाओं पर अपराध चरम पर थे। 2016 में समाजवादी पार्टी की सरकार के दौरान एनसीआरबी के अनुसार 4,161 बलात्कार और 16,199 छेड़छाड़ के मामले दर्ज हुए और दोषसिद्धि महज 2-3%। एसपी शासन में अपराधियों को वोटबैंक की ढाल मिली हुई थी।

इसके मुकाबले सीएम योगी की सख्ती बिल्कुल अलग है। 200 से अधिक एनकाउंटर, हजारों माफियाओं की गिरफ्तारी और अवैध संपत्तियों पर बुलडोजर, जिसने यूपी की सड़कों को वापस आम नागरिकों के लिए सुरक्षित बनाया। महिलाओं की सुरक्षा के आंकड़े स्वयं बोलते हैं: 2022 में महिलाओं के खिलाफ अपराधों में यूपी का दोषसिद्धि दर 71% रहा, राष्ट्रीय औसत 18% से चार गुना अधिक और लगातार चार वर्षों से देश में नंबर 1। सिर्फ 2022 में 37,551 मामलों में 13,099 दोषसिद्धियां, देशभर में दर्ज कुल मामलों का एक-तिहाई। मिशन शक्ति के तहत 1,694 एंटी-रोमियो स्क्वॉड, 9,000 महिला पुलिस बीट्स और हेल्पलाइनों ने रिपोर्टिंग से सजा तक की दूरी कम कर दी है। 2019-20 से रेप के मामलों में 11.6% की कमी और छेड़छाड़ में 9% की गिरावट दर्ज हुई है। योगी की "जीरो टॉलरेंस" नीति सिर्फ नारा नहीं, उसके परिणाम महिलाओं को आधी रात को भी सुरक्षित काम करने का आत्मविश्वास देते हैं।

यह सुरक्षा आधार अब लैंगिक न्याय को नई दिशा दे रहा है जो सीएम योगी की दृष्टि का मूल है। नाइट शिफ्ट नीति कोई अलग कदम नहीं-it is part of a larger tapestry. Periodic Labour Force Survey के अनुसार, 2022-23 में महिलाओं की श्रम भागीदारी बढ़कर 21.7% हो चुकी है-कौशल कार्यक्रमों और प्रोत्साहनों से प्रेरित। यह बड़ा बदलाव है, एसपी शासन के उस दौर से जब अखिलेश यादव महिला पत्रकारों की सुरक्षा की चिंता पर यह कहकर टालते थे-"आप सुरक्षित हैं, चिंता क्यों?"-एक ऐसे समय तक जब यूपी में रात का काम 'कृपा' नहीं, 'स्वतंत्रता' का चुनाव है। यह प्रथम दृष्टिकोण भाजपा की राष्ट्रीय नीति का भी विस्तार है जो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में "नारी शक्ति" को केंद्र में रखती है। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ ने देशभर में लिंगानुपात में सुधार किया। उज्ज्वला योजना ने 10 करोड़ से अधिक महिलाओं को धुएं से मुक्ति दी। स्वच्छ भारत के 11 करोड़ शौचालयों ने महिलाओं की गरिमा सुरक्षित की। 'जल जीवन मिशन' ने 13 करोड़ घरों तक पाइप जल पहुंचाया जिससे महिलाएं पानी ढोने के बोझ से मुक्त हुईं। आज जब यूपी की फैक्ट्रियां रात भर जगमगा रही हैं तो वहां काम करती महिलाएं केवल मशीनें नहीं चला रहीं, वे नियमों को फिर से लिख रही हैं। यह वही परिवर्तन है जो सीएम योगी के नए यूपी को परिभाषित करता है।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रेस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रेस, 2-प्रिंटिंग प्रेस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रेस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

हिन्दुस्तान
1936 सत्य • सार्थक • सदैव

कॉप-30 का संदेश

ब्राजील के बेलेम में जब शुक्रवार को संयुक्त राष्ट्र जलवायु शिखर सम्मेलन (कॉप-30) का परदा गिरा, तो यही उम्मीद जताई गई कि बेहतर भविष्य के लिए सभी देश मिलकर काम करेंगे, मगर इस सम्मेलन का हासिल बता रहा है कि यह इतना आसान भी नहीं है। विशेषकर सम्मेलन के आखिरी दिन जीवाश्म ईंधन को चरणबद्ध तरीके से खत्म करने को लेकर जिस तरह की खींचतान होती रही, वह दुनिया को बहुत आश्वस्त करने वाली नहीं थी। हालात यहां तक बिगड़े कि इससे जुड़ी जिस वैश्विक योजना का जिक्र पहले ड्राफ्ट में किया गया था, उसे संशोधित ड्राफ्ट से हटा लिया गया। साफ है, जीवाश्म ईंधन का पेच आगे भी फंसा रहने वाला है। इस सम्मेलन की शुरुआत 11 नवंबर को हुई थी और माना जा रहा था कि तमाम देश 'ग्लोबल वार्मिंग' के विरुद्ध किसी ठोस नतीजे पर पहुंच जाएंगे। मगर यह सम्मेलन जिस गति से अपने आखिरी मुकाम तक पहुंचा, उसके लिए नौ दिन में अढ़ाई कोस चलने से बेहतर विशेषण नहीं दिया जा सकता।

कॉप-30 से इसलिए अधिक उम्मीदें बांधी जा रही थीं, क्योंकि पेरिस समझौते को इस साल दस वर्ष हो गए। दुनिया आज कितनी गंभीर जलवायु चुनौतियों से जूझ रही है, यह बात किसी से छिपी नहीं है। फिर भी, ज्यादातर देश वैश्विक तापमान वृद्धि को दो डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने और 1.5 डिग्री के लक्ष्य को लेकर उदासीन दिख रहे हैं। नतीजतन, बढ़ता कार्बन-उत्सर्जन और असह्य तापमान मानव अस्तित्व की परीक्षा लेने लगे हैं। निस्संदेह, इसके पीछे एक बड़ी वजह विकसित देशों का अपनी प्रतिबद्धता पर खरा न उतरना है, जिसकी ओर हमारे पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने भी इशारा किया है। सम्मेलन में भारत का पक्ष रखते हुए उन्होंने साफ कहा कि विकसित देशों को तय अवधि से पहले 'नेट-जीरो' लक्ष्य तक पहुंचना चाहिए। यह बिल्कुल जायज मांग है, क्योंकि विकसित देशों ने ज्यादा कार्बन उत्सर्जन किया है, तो अतिरिक्त जिम्मेदारी भी उनको लेनी चाहिए। यहां वे भारत से सबक ले सकते हैं, जो अपने विकास कार्यक्रमों और पर्यावरण संरक्षण पहल को साथ-साथ आगे बढ़ा रहा है। इसी का नतीजा है कि साल 2005 से भारत के कार्बन उत्सर्जन में 36 प्रतिशत से अधिक की कमी आई है और कुल विद्युत उत्पादन क्षमता में गैर-जीवाश्म स्त्रोतों का योगदान 50 प्रतिशत से भी ज्यादा हो गया है। माना यह भी जा रहा है कि 2070 की समय-सीमा से पहले ही यह नेट-जीरो का लक्ष्य हासिल कर लेगा। हां, एनडीसी बेशक इस सम्मेलन में एक मुद्दा रहा, लेकिन भारत की तरफ से यह आश्वस्त किया गया है कि संशोधित एनडीसी 2035 तक समय पर घोषित कर दी जाएगी, साथ ही पहली द्विवार्षिक पारदर्शिता रिपोर्ट भी जारी कर दी जाएगी।

विकासशील देशों के हितों का ख्याल रखना आवश्यक है, क्योंकि जलवायु संकट में उनका सबसे कम योगदान है, मगर सर्वाधिक खामियाजा वही भुगत रहे हैं।

कॉप-30 सम्मेलन मूलतः तीन सवालों के इर्द-गिर्द घूमता रहा- देश क्लाइमेट एक्शन को किस तरह से आगे बढ़ाते हैं; तकनीक व पैसे उन देशों व लोगों तक कैसे पहुंच सकते हैं, जिनको इनकी सबसे ज्यादा जरूरत है; और तीसरा, किस तरह जलवायु कार्रवाई समग्रता में की जा सकती है? यह जानते हुए भी कि वक्त अब काफी कम है और पेरिस समझौते को जमीन पर उतारना निहायत जरूरी है, विकासशील देशों के हितों को महत्व देना अनिवार्य हो गया है। ऐसा इसलिए भी, क्योंकि इस संकट में उनका सबसे कम योगदान है, पर सबसे अधिक खामियाजा वही भुगत रहे हैं। लिहाजा, नजरें अब कॉप-31 पर टिक गई हैं। उम्मीद यही है कि वहां से शायद अच्छी खबर मिले।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले
24 नवम्बर, 1950

रिजर्व बैंक का कार्य

रिजर्व बैंक राष्ट्र का प्रमुख बैंक है। उसका प्रबंध राष्ट्रीय हाथों में है। रिजर्व बैंक के कानून में संशोधन करने के लिए भारतीय संसद में एक बिल पेश किया गया है। इस बिल पर जो प्रारंभिक चर्चा हुई, उससे यह जाहिर होता है कि रिजर्व बैंक से देश की आर्थिक उन्नति और समृद्धि में सहायक होने की बड़ी-बड़ी आशायें रखी जाती हैं। रिजर्व बैंक इस देश में बैंकिंग प्रणाली को अधिक ठोस और व्यापक बनाने की दिशा में बहुत-कुछ कर सकता है। भारत के वित्त मंत्री श्री चिन्तामणि देशमुख ने रिजर्व बैंक को प्रमाणपत्र देते हुए कहा है कि उसने देश को काफी लाभ पहुंचाया है और इस संस्था पर देश गर्व अनुभव कर सकता है। समाज के जीवन में आर्थिक व्यवहार को असाधारण महत्व मिल चुका है। यदि आर्थिक व्यवहार में गतिरोध उत्पन्न हो जाये, तो समाज का जीवन ही रुक जायेगा। समाज के आर्थिक जीवन को ठीक प्रकार से चलाते रहने के लिए देश की आर्थिक साख सुदृढ़ होनी चाहिए। रिजर्व बैंक ने देश की इस साख को देश और विदेश में ऊंचे स्तर पर कायम रखा है। उसी का परिणाम है कि अन्तर्राष्ट्रीय बैंक ने भारत को उसकी विकास योजनाओं के लिए बड़ी-बड़ी धन राशियां कर्ज के तौर पर दी हैं। किन्तु रिजर्व बैंक देश के लिए जितना कुछ कर रहा है, उसी पर संतोष मान लेने से काम नहीं चलेगा। उसको देश की आर्थिक समृद्धि के लिए पहले से भी अधिक काम करना होगा।

यद्यपि प्रस्तुत बिल का उद्देश्य काफी मर्यादित है, फिर भी सदस्यों ने बहस के दौरान में ऐसे मुद्दे उठाये, जिन पर प्रवर समिति शायद ही विचार कर सकेगी। इस बहस का इतना ही लाभ होगा कि रिजर्व बैंक के कार्य-क्षेत्र को विस्तृत करने की आवश्यकता सामने आ जायेगी। सरकार आगे चलकर इस संबंध में व्यापक बिल पेश कर सकती है। सदस्यों ने अनुरोध किया है कि रिजर्व बैंक को देहातों में रुपया उधार देने के काम में अभी की अपेक्षा अधिक हाथ बंटाना चाहिए। खेती की उन्नति के लिए एक आर्थिक कॉर्पोरेशन कायम करने का सुझाव भी दिया गया था। वित्त मंत्री का कहना था कि इस सुझाव को कार्यान्वित करने में अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां हैं। उदाहरण के लिए अभी हमारे देश में आधुनिक पैमाने पर खेती का विकास नहीं हुआ है और न ही शिक्षित लोग खेती के धन्धे को अपनाने की ओर प्रवृत्त हुए हैं।

महंगाई इतनी रहे कि तरक्की न रुके

आलोक जोशी | वरिष्ठ पत्रकार

अगर चीजों के दाम तय सीमा तक बढ़ेंगे नहीं, तो व्यापारियों के लिए उन्हें बनाना और बेचना फायदे का सौदा नहीं रह जाएगा। तब उनकी और देश की तरक्की कैसे होगी?

बहुत लंबे समय तक महंगाई आम भारतीयों की बड़ी चिंताओं में से एक रही है, लेकिन इस वक्त तस्वीर उल्टी दिख रही है। खुदरा महंगाई बढ़ने की दर और उपभोक्ता मूल्य सूचकांक, यानी सीपीआई, दोनों में जबर्दस्त गिरावट दिख रही है। रिजर्व बैंक का लक्ष्य है कि महंगाई दर को चार प्रतिशत या उससे दो फीसदी ऊपर-नीचे के दायरे में रखा जाए। यानी, एक अच्छी अर्थव्यवस्था में दो से छह प्रतिशत तक की महंगाई दर को बर्दाश्त करने लायक माना जाता है।

छह प्रतिशत से ऊपर महंगाई का मतलब होता है कि हालात ठीक नहीं हैं, लेकिन दो फीसदी से कम होने का मतलब भी कुछ ऐसा ही होता है। जनवरी में भारत की खुदरा महंगाई दर 4.3 प्रतिशत थी, जो अब गिरकर 0.25 फीसदी पर पहुंच गई है। थोक महंगाई दर तो शून्य के भी नीचे यानी (-)1.21 प्रतिशत पर है। शून्य के नीचे होने का अर्थ है कि दाम बढ़ने के बजाय गिर रहे हैं। सुनकर तो यह अच्छा लगता है, लेकिन क्या वास्तव में यह अच्छी हालत है? बहुत से लोग पूछ रहे हैं कि महंगाई अगर 1979 के बाद के सबसे निचले स्तर पर आ गई है, तो बाजार में इसका असर क्यों नहीं दिखता? वहां तो चीजें सस्ती नहीं मिल रही हैं!

यहां इस किस्से में एक पेच है। अर्थशास्त्र की भाषा में इसे 'बेस इफेक्ट' कहते हैं, यानी जिस चीज को आप देख रहे हैं, उसकी तुलना किससे कर रहे हैं? महंगाई के मामले में यह तुलना होती है एक साल पहले के आंकड़े से। इस वक्त महंगाई दर में जबर्दस्त गिरावट दिखने की वजह यह भी है कि पिछले साल इन्हीं महीनों में महंगाई की चाल ऊपर की ओर थी। इसे यूं भी समझ सकते हैं कि अगर पिछले साल सितंबर के मुकाबले अक्तूबर में महंगाई में तेज बढ़त थी और इस साल सितंबर और अक्तूबर में दाम बराबर रहे, तब भी अक्तूबर में महंगाई का आंकड़ा गिरावट दिखाएगा। यह बात सिर्फ अक्तूबर की नहीं है। अप्रैल, मई, जून, जुलाई और सितंबर में भी यही असर पड़ रहा था, कहीं कम तो कहीं ज्यादा।

लेकिन अब जब महंगाई दर काफी नीचे पहुंच चुकी है, तो इसका उल्टा असर शुरू होता है। आंकड़ों का विश्लेषण करने वाली एक रिपोर्ट का अनुमान है कि तीन महीनों तक महंगाई दर शून्य से नीचे दिख सकती है। इसका मतलब यह होगा कि फिर अगले साल इन्हीं महीनों में 'बेस इफेक्ट' का असर उल्टा दिखेगा और तब अचानक महंगाई तेज दिखने लगेगी।

महंगाई के आंकड़े में इस बार एक-दो बातें और देखने लायक हैं। एक तो महंगाई कम होने की सबसे बड़ी वजह है, खाने-पीने की चीजों के दाम गिरना। अक्तूबर में खाद्य महंगाई दर शून्य से पांच प्रतिशत नीचे के रिकॉर्ड स्तर पर थी। उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में इसकी हिस्सेदारी 39 प्रतिशत की है। जाहिर है, यह गिरेगा, तो महंगाई गिरेगी, लेकिन इसके साथ एक चिंता भी जुड़ी है। खाने-पीने की कुछ चीजों के दाम तेजी से गिरते-उठते हैं। एक या दो चीजों के दाम में तेज उतार-चढ़ाव भी महंगाई के आंकड़े को बना या बिगाड़ सकता है। इसी तरह की रफ्तार पेट्रोल, डीजल, गैस वगैरह के दाम में भी दिखती है, क्योंकि कच्चे तेल के अंतरराष्ट्रीय भावों का असर उन पर पड़ता है।

इसीलिए अर्थशास्त्री लंबे दौर में महंगाई का रुख समझने के लिए 'कोर इनफ्लेशन' का इस्तेमाल करते हैं। यहां महंगाई दर में वह आंकड़ा इस्तेमाल किया जाता है, जिसमें खाद्य पदार्थों व ऊर्जा को बाहर करके बाकी हिसाब जोड़ा जाता है। इस कसौटी पर महंगाई की तस्वीर कुछ और हो जाती है। यहां महंगाई का आंकड़ा 4.4 प्रतिशत पर दिख रहा है। शायद यही उस सवाल का जवाब है कि महंगाई इतनी कम हो गई है, तो बाजार में दिखती क्यों नहीं? ऐसा इसलिए भी होता है, क्योंकि एक मध्यवर्गीय परिवार के ज्यादातर जरूरी खर्च यहीं जोड़े जाते हैं। घर का किराया, स्कूल की फीस, दवा, रिक्शा, टैक्सी या बस, ट्रेन के किराये, रेस्तरां में खाने का खर्च और सभी तरह की सेवाओं की फीस इसमें शामिल होती है। ये वे खर्च हैं, जिनमें कमी नहीं हो रही, बल्कि इनमें से कई धीरे-धीरे बढ़े ही हैं।

इस बार महंगाई का गणित बिगाड़ने वाली एक और चीज है- सोने-चांदी का भाव। इन दोनों के दाम बेतहाशा बढ़े हैं और इसका असर भी कोर महंगाई पर दिख रहा है। हालांकि, महंगाई के आंकड़े में इनका वजन बहुत नहीं है, पर बढ़ते दाम के साथ इनका दबदबा भी बढ़ रहा है। उपलब्ध आंकड़ों के हिसाब से जहां पिछले साल की शुरुआत में इन दोनों धातुओं का महंगाई के आंकड़े में एक फीसदी के दसवें हिस्से से भी कम का योगदान था, वहीं इस अक्तूबर तक यह बढ़कर 0.88 प्रतिशत तक पहुंच चुका है। लगभग दस गुना।

अगर यह सब दरकिनार करके मान लिया जाए कि महंगाई दर में तेज गिरावट आ चुकी है और आगे भी कुछ समय तक आती रहेगी, तो क्या यह खुशखबरी नहीं है? आखिर रिजर्व बैंक महंगाई दर को चार प्रतिशत पर क्यों रखना चाहता है? जवाब यह है कि अगर चीजों के दाम बढ़ेंगे नहीं, तो व्यापारियों के लिए उन्हें बनाना व बेचना फायदे का सौदा नहीं रह जाएगा। तब उनकी और देश की तरक्की कैसे होगी? बहुत कम महंगाई का मतलब यह भी माना जाता है कि बाजार में मांग कम हो रही है, लोग पैसे खर्च नहीं करना चाहते और इसीलिए व्यापारी दाम बढ़ाने की स्थिति में नहीं हैं। कंपनियां अगर दाम नहीं बढ़ा पाएंगी, तो वे नया निवेश क्यों करेंगी?

साल 1990 तक जापान दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में गिना जाता था, लेकिन उसके बाद कई साल तक वहां महंगाई दर शून्य हो गई। इससे जो संकट पैदा हुआ, आज तीस साल बाद भी जापान उससे उबरने की कोशिश में लगा है। इन तीन दशकों को जापान में 'लॉस्ट डिकेड्स' कहा जाता है। यूरोप में 2012 से 16 तक महंगाई दर गिरकर एक फीसदी से नीचे पहुंच गई थी। इसके नतीजे यूरोप ही नहीं, बाकी दुनिया को भी भुगतने पड़े। ब्याज दर घटाकर शून्य करनी पड़ी। आर्थिक विकास पर ब्रेक लग गया और बेरोजगारी का विस्फोट हो गया। साल 2008 के भुगतान संकट के बाद अमेरिका को भी करीब-करीब ऐसी ही मुसीबत से जूझना पड़ा था।

इस वक्त महंगाई पिछले चौदह साल में सबसे कम है। अगर विकास की रफ्तार तेज करने में कामयाबी मिल जाए, तो शायद महंगाई थोड़ी बढ़ेगी और अर्थव्यवस्था का भविष्य बेहतर हो सकेगा। रिजर्व बैंक की जिम्मेदारी यही है कि वह महंगाई की लगाम इतनी कसे कि अर्थव्यवस्था का घोड़ा न तो बेरोकटोक भागे और न ही रुकने को मजबूर हो जाए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अमेरिका में भी अपना दायरा बढ़ा रहा भारतीय जायका

क्षमा शर्मा | वरिष्ठ पत्रकार

पिछले दिनों न्यूयॉर्क (अमेरिका) के एक भारतीय रेस्तरां में बैठी हुई थी। वहां तरह-तरह के शाकाहारी व्यंजन मौजूद थे। छोले-भठूरे की खुशबू तो हवा में तैर रही थी। लगता ही नहीं था कि हम भारत में नहीं हैं। कई भारतीय भी दिखाई दे रहे थे। मगर भारतीयों से ज्यादा श्वेत लोग भारतीय भोजन का आनंद उठा रहे थे। बहुत से अश्वेत जो भारतीय मूल के नहीं थे, वे भी खाने में मगन थे। कोई दाल-चावल, रोटी-सब्जी खा रहा था, तो कोई इडली, डोसा, चटनी, सांभर का आनंद ले रहा था।

इसके कुछ दिन बाद न्यूयॉर्क राज्य के एक छोटे से कस्बे इथका के भारतीय स्टोर में गई। इथका में विश्व प्रसिद्ध कॉर्नेल विश्वविद्यालय है। दुनिया भर के विद्यार्थी यहां पढ़ने आते हैं। बड़ी संख्या में भारतीय बच्चे भी पढ़ते हैं। यहां का भारतीय स्टोर बहुत बड़ा नहीं था, जैसा कई अन्य शहरों में दिखा। मगर यहां हर वह मसाला मिल रहा था, जो भारतीय पकवानों में इस्तेमाल होता है। जिन आलमारियों में ये मसाले, जैसे हल्दी, अजवायन, मेथी, जीरा, हींग, लाल मिर्च, सूखी मिर्च, धनिया, काला नमक, सेंधा नमक, इमली, नारियल, खटाई, सांभर मौजूद थे, उनके आसपास मसालों की वैसी ही गंध थी, जो भारत के किराना स्टोर और दुकानों में महसूस होती है।

मेरे साथ एक करीबी परिजन थे, जो पिछले तीस साल से अमेरिका में रहते हैं। मुझे इस तरह हैरान और खुश होते देख वह मुस्कराते हुए बोले- पहले यह सब इतनी आसानी से नहीं मिलता था। बड़े शहरों के स्टोर्स में कुछ चीजें मिल जाती थीं। मगर ज्यादातर चीजें तो भारत से ही साथ लानी पड़ती थीं या किसी आने वाले से मंगानी पड़ती थीं। जब से यहां पर भारतीयों तथा अन्य एशियाई देशों के लोगों का आना-जाना बढ़ा है, तब से अब भारतीय खान-पान की सामग्रियां भी आसानी से मिलने लगी हैं। यहां तक कि छोटे-छोटे शहरों में भी भारतीय सामान से भरे स्टोर और भारतीय व्यंजन परोसने वाले रेस्टोरेंट उपलब्ध हैं।

बाजार विशेषज्ञ बता रहे हैं कि साल 2031 तक अमेरिका में खाने-पीने की भारतीय सामग्री की बिक्री में प्रतिवर्ष 6.1 की दर से बढ़ोतरी होगी।

पिछले दिनों कई बड़े स्टोर मालिकों के वक्तव्य छप चुके हैं कि उनके स्टोर तब तक सफल नहीं हो सकते, जब तक कि उनमें वे चीजें न मिलती हों, जो खास तौर से भारतीय खान-पान से जुड़ी हैं। अब तो हालत यह है कि बहुत से गैर-भारतीय भी इन चीजों को खरीदते हैं। पिछले ही दिनों एक सर्वेक्षण में बताया गया था कि गत एक साल में इन मसालों व अन्य सामान की बिक्री में चार गुना वृद्धि हुई है। इन बातों को पढ़कर वे दिन याद आ रहे थे, जब हमें बताया जाता था कि विदेशी भारतीय मसालों, खासतौर से गरम मसाले का व्यापार करते थे।

भारतीय सामान को बेचने वाला शुरुआती स्टोर पटेल ब्रदर्स है। यह पचास साल पुराना है। इसकी पहली शाखा शिकागो में 1974 में खोली गई थी। इसकी शाखाएं अब तक अमेरिका के बीस राज्यों में खुल चुकी हैं। अन्य सूबों में भी खोलने की योजना है। यह अमेरिका में भारतीय खान-पान की सामग्री बेचने वाली सबसे बड़ी चेन है। अब पटेल ब्रदर्स रोजमर्रा के उपयोग में आने वाले सारे सामान बेचने लगे हैं और अपने व्यापार को फैला रहे हैं। इनकी देखादेखी अन्य स्टोर भी अपने यहां भारतीयों की जरूरतें पूरी करने की कोशिश में लगे हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि साल 2031 तक भारतीय सामग्री की बिक्री में प्रतिवर्ष 6.1 की दर से बढ़ोतरी होगी। कहा जा रहा है कि जेनरेशन-जी वाले अमेरिकी बड़ी संख्या में भारतीय और एशियाई खान-पान का लुत्फ उठा रहे हैं। उन्हें भारत से आई खान-पान की सामग्री जैसे मिठाइयां, नमकीन, अचार तथा अन्य चीजें बहुत पसंद आ रही हैं। जेनरेशन-जी के लिए खान-पान बस उसी देश तक सिमटा हुआ नहीं है, जहां वे रहते हैं, बल्कि वे किसी एक देश में रहते हुए भी दुनिया भर के जायके का आनंद लेना चाहते हैं।

जिस परिजन का मैंने ऊपर जिक्र किया है, उन्होंने ही बताया कि कुछ साल पहले एक महिला ने पूर्ण रूप से शाकाहारी रेस्टोरेंट खोला था। पहले तो वह खूब चला, लेकिन फिर कुछ निजी कारणों से बंद हो गया। अब उसी महिला के बच्चे इस शाकाहारी रेस्टोरेंट को खोलने की योजना बना रहे हैं। जाहिर है, भारतीय खान-पान और सुगंधित मसालों का डंका अमेरिका में हर तरफ बज रहा है। दुनिया के बहुत से लोग इसकी आवाज तेज करने में अपना योगदान दे रहे हैं।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

छुट्टियां किसे चाहिए

दुनिया में एक भी ऐसी संस्कृति नहीं है, जो छुट्टियों की सार्थकता पर सवाल उठाए। दरअसल, लोग छुट्टियों का इंतजार करते हुए काम करते हैं। आखिर वे कौन से पहलू हैं, जो रोज के कामकाज को बोरियत, तनाव, थकान से भर देते हैं? उनमें सबसे अहम यह है कि आप जो काम कर रहे हैं, उससे आपको प्रेम नहीं है। फिर चाहे स्त्रियां घर का काम कर रही हों या पुरुष दफ्तरों व दुकानों में काम कर रहे हों। हर कोई एक बोझ ढो रहा है!

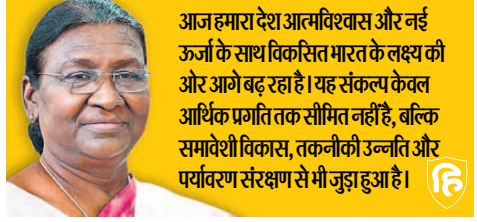

दूसरे, उस काम से उनकी बहुत सी अपेक्षाएं हैं, जो पूरी नहीं होतीं। इसलिए दिल में कोई खुशी नहीं होती। जब खुशी न हो, तो व्यक्ति छुट्टी का इंतजार करता है। अब तो 'वीक एंड' हमारी दिनचर्या का हिस्सा हो गया है। काम और अवकाश के इस चक्र को समझना मजेदार है। छह दिन काम और एक दिन विश्राम, यह अवधारणा ईसाई है। ईसाई धर्मगुरुओं ने माना कि ईश्वर ने छह दिन काम किया और एक दिन विश्राम। रविवार की छुट्टी का उदय इसी अवधारणा से हुआ है। क्या आपको पता है कि भारत में 10 जून, 1890 तक सब लोग हफ्ते में सातों दिन काम करते थे? वह तो मुंबई के कपड़ा मिलों के मजदूरों के लिए नारायण लोखंडे ने एक आंदोलन शुरू किया कि उन्हें एक दिन काम से छुट्टी मिलनी चाहिए। सात साल के संघर्ष के बाद अंग्रेज सरकार मान गई और उन्होंने रविवार की छुट्टी शुरू की।

लेकिन छुट्टियां भारतीय संस्कृति का अंग नहीं हैं। कुछ दिन धार्मिक उत्सव के जरूर होते थे, पर काम से छुट्टी लेने के लिए नहीं होते थे। काम करना शरीर के लिए इतना ही जरूरी माना जाता था, जितना सांस लेना। लोगों की मानसिकता इतनी सरल थी कि वे काम को पूजा मानते थे और उसका फल भगवान को अर्पण करते थे।

इधर जैसे-जैसे मनुष्य की बौद्धिकता विकसित होती गई, उसका अहंकार मजबूत होता चला गया। और जब अहंकार कोई भी कृत्य करता है, तो उसका बोझ बनता है। इस अहंकार ने मनुष्य की सरलता छीन ली। छुट्टी का वास्तविक अर्थ है, आप जो भी कर रहे हैं, उससे छुटकारा पाना। यह काम का अनादर है। क्या ऐसा संभव है कि आपका काम ही आपको विश्रांत करे, आनंद दे? छुट्टी की जरूरत ही न पड़े? यह केवल परिकल्पना नहीं है, सच्चाई है। जिनका अपने काम से लगाव है, उन्हें काम एक मजबूरी नहीं, बल्कि एक सृजन लगता है, उन्हें काम से ही ऊर्जा मिलती है।

क्या ऐसा संभव है कि छुट्टी की जरूरत ही न पड़े? यह परिकल्पना नहीं, सच्चाई है। जिनको अपने काम से लगाव है, उन्हें काम मजबूरी नहीं, सृजन लगता है, उन्हें काम से ही ऊर्जा मिलती है।

भारत में मनुष्य जीवन को लीला मानते हैं; लीला यानी खेल। हम तो उस सर्जनशीलता के वंशज हैं, जो हर दिन, हर पल सृजन कर ही रही है। और सृजन कोई काम नहीं है, वह तो समय की लहरों के साथ अठखेलियां करना है, इस कारण समय को बांटने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

अमृत साधना

द्रौपदी मुर्मु | राष्ट्रपति

आज हमारा देश आत्मविश्वास और नई ऊर्जा के साथ विकसित भारत के लक्ष्य की ओर आगे बढ़ रहा है। यह संकल्प केवल आर्थिक प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि समावेशी विकास, तकनीकी उन्नति और पर्यावरण संरक्षण से भी जुड़ा हुआ है।

महिलाओं को लालच देकर लिया गया वोट

बिहार में नीतीश कुमार की अगुवाई में राज्य सरकार का गठन हो चुका है। फिर भी, विधानसभा चुनाव में एनडीए को मिली जीत के विश्लेषण लगातार जारी हैं। यह सही है कि राज्य चुनाव में मतदाता स्थानीय समस्याओं को ध्यान में रखकर ही अपने प्रतिनिधि का चयन करते हैं, लेकिन हाल के समय के कई राज्य चुनावों में स्थानीय नागरिकों में एक प्रवृत्ति नजर आई है। अमूमन हो यह रहा है कि जो दल लोगों को लुभाने में कामयाब हो जाता है, उसे ही जीत नसीब हो रही है। इसका अर्थ है कि जो दल जितनी रेवड़ी मतदाताओं को दे रहा है, उसके जीतने की संभावना उतनी अधिक हो जाती है। बिहार चुनाव इसका अपवाद नहीं रहा।

यहां के सत्तारूढ़ गठबंधन ने चुनाव से ऐन पहले महिलाओं को दस-दस हजार रुपये उपलब्ध करवाए। यह राशि राज्य की 1.21 करोड़ महिलाओं के बैंक खातों में सीधे जमा कराई गई। दिलचस्प है, इस मुख्यमंत्री महिला रोजगार योजना की घोषणा 29 अगस्त को की गई थी और महज एक-दो माह में इसे लागू करके इसकी पहली राशि हस्तांतरित भी कर दी गई। बेशक, यह योजना महिलाओं के सशक्तीकरण की पहल के रूप में गिनाई जा रही है, लेकिन जिस तरह चुनाव से ठीक पहले महिलाओं में रुपये बांटे गए और महिला मतदाताओं की बड़ी संख्या मतदान-केंद्रों पर दिखी, उससे कयास यही लगाए जा रहे हैं कि इस योजना ने महिला मतदाताओं को मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का मुरीद बना दिया। इस कयास को बल इसलिए भी मिलता है, क्योंकि राज्य का खजाना ऐसी योजनाओं का भार ढोने में बहुत हद तक सक्षम नहीं है। स्थिति यह है कि इस राज्य में गरीब नागरिकों की संख्या सबसे अधिक है और रोजगार के लिए यहां से पलायन भी काफी अधिक होता है।

जाहिर है, यदि राज्य सरकारें चुनाव जीतने के लिए ऐसी योजनाएं लागू करती रहेंगी, तो उनको दिवालिया होने के लिए बहुत लंबा इंतजार नहीं करना पड़ेगा। भारतीय रिजर्व बैंक ने अपने प्रतिवेदन में साफ बताया है कि खासकर पंजाब, केरल, पश्चिम बंगाल, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, झारखंड, बिहार, दिल्ली जैसे राज्यों की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। यदि इन राज्यों के आर्थिक ढांचे सुधारने के प्रयास नहीं किए गए, तो यहां की स्थिति बिगड़ सकती है। हालांकि, समय-समय पर केंद्र सरकार सहायता-राशि उपलब्ध कराकर कई राज्यों की वित्तीय कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास करती रहती है, परंतु उसकी भी एक सीमा है और वह भी लंबे समय तक यह काम नहीं कर सकती। इसलिए, लोक-लुभावन योजनाओं से सरकारों को बचना चाहिए।

प्रह्लाद सबनानी, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम
महिला मतदाता

औरतों पर फिजूल के आरोप मत लगाइए

बिहार विधानसभा चुनाव का नतीजा आया और नीतीश कुमार फिर से राज्य के मुख्यमंत्री चुन लिए गए। यह फैसला बिहार की जनता का था। स्त्री-पुरुष, नौजवान, बुजुर्ग, सभी मतदाताओं का था। अगर बिहार विधानसभा चुनाव परिणाम देखें, तो सत्ता पक्ष के सामने विपक्ष कहीं टिका ही नहीं। एकतरफा चुनाव था यह। मगर इस बार महिला मतदाताओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। हालांकि, उनके मतदान-प्रतिशत में इस बार ही वृद्धि नहीं हुई है। वर्ष 2005 के बाद से हर चुनाव में महिला मतदाताओं ने अपनी सक्रियता दिखाई है। फिर इस बार ऐसा क्या हो गया कि ज्यादा संख्या में वोट करने के लिए महिलाओं को 'लालची' बताया जा रहा है? असल में, चुनाव से ठीक पहले नीतीश सरकार ने मुख्यमंत्री रोजगार योजना के तहत राज्य की उन महिलाओं के बैंक खाते में दस हजार रुपये डाले, जो जीविका समूह से जुड़ी हुई हैं। कई विश्लेषकों को लगता है कि केवल इसी वजह से नीतीश सरकार की वापसी हुई है, जबकि यह एक गलत सोच है। मुमकिन है कि इस योजना ने महिलाओं को सरकार के पक्ष में वोट करने का एक और कारण दे दिया हो, लेकिन सिर्फ इसी वजह से महिलाओं ने वोट किया, यह गलत तर्क है।

नीतीश कुमार जब पहली बार राज्य के मुखिया बने थे, तभी से उन्होंने महिला मतदाताओं को ध्यान में रखकर योजनाएं चलाई हैं। स्कूल जाने वाली लड़कियों को साइकिल दिया गया, जिससे गांव-देहात की फिजा बदल गई। जब लड़कियां बाहर निकलीं, तो कुछ जगहों पर शोहदे उनको परेशान करने लगे। नीतीश कुमार ने बिना 'एनकाउंटर' किए लड़कियों को भरोसा दिलाया कि अगर उन्हें कोई परेशान करेगा, तो पुलिस उसका इलाज करेगी। फिर, पंचायत में महिलाओं को आरक्षण दिया गया। बिहार पुलिस में लड़कियों के लिए आरक्षण का इंतजाम किया गया। शराबबंदी की गई, जबकि इससे राज्य को अरबों के राजस्व का नुकसान हुआ। इन सबसे महिलाओं का नीतीश कुमार पर भरोसा मजबूत हुआ है।

कहने का मतलब यह है कि नीतीश कुमार ने शुरुआती दिनों से ही राज्य की महिलाओं को एक अलग वोटबैंक के तौर पर देखा है। इसी वजह से महिलाएं हर चुनाव में उन पर भरोसा जताती रही हैं। इसलिए यह कहना बंद कर दीजिए कि कुछ पैसों के लिए महिलाओं ने इस बार नीतीश कुमार को वोट दिए। उन्होंने एनडीए को इसलिए वोट दिया, क्योंकि वह उनकी जरूरतों को समझता है। अगर अब भी विपक्ष नीतीश कुमार की जीत का सही विश्लेषण नहीं करेगा, तो अगला चुनाव भी वह शायद ही जीत सकेगा।

तेजी ईशा, प्रोफेसर

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
सोमवार 24 नवंबर, 2025

दैनिक जागरण
परिस्थितियां अवरोधक हो सकती हैं, किंतु निर्णायक नहीं

जी-20 के लिए सही सुझाव

जी-20 शिखर सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में भारतीय प्रधानमंत्री ने ड्रग्स तस्करी को बड़ी चिंता का विषय बताते हुए यह जो कहा कि आतंकवाद की कमर तोड़ने के लिए ड्रग्स तस्करों के नेटवर्क पर करारी चोट की आवश्यकता है, उससे इस संगठन के सदस्य देशों को न केवल सहमत होना चाहिए, बल्कि इस दिशा में कार्य करने के लिए संकल्पबद्ध भी होना चाहिए। अब यह किसी से छिपा नहीं कि मादक पदार्थों के अवैध कारोबार से अर्जित होने वाला धन गैर-कानूनी गतिविधियों में खपाया जाता है। इस पैसे का सबसे अधिक इस्तेमाल माफिया तत्व एवं आतंकी समूह करते हैं। दुनिया भर के आतंकी गुट खुद को संगठित करने और हथियार जुटाने के लिए आमतौर पर मादक पदार्थों की तस्करी में भी लिप्त रहते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है, जिससे कोई भी देश अनजान नहीं हो सकता। चिंता की बात यह है कि कुछ देश ऐसे भी हैं, जो न केवल ड्रग्स तस्करी में शामिल तत्वों की मदद करते हैं, बल्कि आतंकी समूहों को भी संरक्षण एवं सहयोग देते हैं। ड्रग्स तस्करों और आतंकी समूहों के बीच के गठजोड़ ने जो खतरा पैदा कर दिया है, उसका सामना विभिन्न देश मिलकर ही कर सकते हैं। यदि जी-20 जैसे संगठन अपनी सार्थकता साबित करना चाहते हैं तो उन्हें उन चुनौतियों का सामना करने के लिए एकजुट होना ही होगा, जो बढ़ती ही चली जा रही हैं।

जी-20 देशों को ड्रग्स नेटवर्क पर चोट करने का काम इसलिए अपने हाथ में लेना चाहिए, क्योंकि यह आसानी से किया जा सकता है। इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि जी-20 सम्मेलन के साझा घोषणापत्रों में जिन समस्याओं से निपटने की आवश्यकता जताई जाती है, उन पर कोई ठोस काम कठिनाई से ही हो पाता है। जिन मुद्दों को सुलझाना आसान है, वे जी-20 का एजेंडा बनें तो इस संगठन की छवि भी निखरेगी। मादक पदार्थों के काले कारोबार पर रोक लगाने के लिए साझा प्रयास इसलिए तेज किए जाने चाहिए, क्योंकि यह काम कोई एक देश अकेले नहीं कर सकता और यह सब जानते हैं कि साझा कार्रवाई के अभाव में ड्रग्स तस्करों का दुस्साहस बढ़ता चला जा रहा है। यह देखने को मिल रहा है कि अब नए-नए और कहीं अधिक घातक मादक पदार्थों को निर्मित कर उनकी तस्करी की जा रही है। उदाहरणस्वरूप फेंटानाइल नामक बेहद घातक माना जाने वाला मादक पदार्थ तेजी से फैल रहा है। अभी इससे अमेरिका ही बुरी तरह प्रभावित है, लेकिन आशंका है कि आने वाले समय में ड्रग्स तस्कर इसे अन्य देशों में भी पहुंचाने की कोशिश कर सकते हैं। जी-20 देश ड्रग्स तस्करी पर रोक लगाने के साथ भारतीय प्रधानमंत्री की ओर से रेखांकित किए गए एआइ के दुरुपयोग को रोकने के मामले में भी सक्रिय हों तो बेहतर, क्योंकि यह भी एक कटु सच्चाई है।

लूट पर लगाम

कोयला तस्करी के खिलाफ प्रवर्तन निदेशालय की कार्रवाई में जो तथ्य सामने आ रहे हैं, वे पूरी व्यवस्था को चुनौती देने वाले हैं। कोयला चोरी से बड़े संगठित तरीके से झारखंड सरकार को राजस्व का नुकसान पहुंचाया जा रहा है। कार्रवाई की जद में जो नाम आ रहे हैं, वे सभी रसूख वाले हैं। सवाल यह कि इनके काले कारनामों को इतने दिनों से कौन संरक्षण दे रहा था। कोयला खदानों में खनन से लेकर ट्रांसपोर्टिंग तक में पारदर्शिता का घोर अभाव है। डिजिटल होती व्यवस्था में सेंधमारी कर ये माफिया हजारों करोड़ का कोयला तस्करी कर रहे हैं। खदान से लेकर बाजार तक कोयले के पहुंचने में हर मोड़ पर भ्रष्टाचार का बोलबाला है। बंगाल और झारखंड से बिहार और उत्तर प्रदेश तक बिना किसी रोकटोक के ये तस्कर कोयला पहुंचा रहे हैं। राज्य और केंद्र दोनों ही सरकारों की कोयले की तस्करी रोकने में भूमिका है। ऐसे में बड़े माफिया पर लगाम लगाने के लिए पूरे सिस्टम को दुरुस्त करना होगा। खास बात यह है कि कोयला तस्करी के ये गिरोह एक संगठित अपराध का तंत्र चलाते हैं। हत्या, रंगदारी जैसी घटनाएं कोयला खनन क्षेत्र में आम हैं। इससे आमलोगों की जिंदगी में खलल पड़ता है। मुट्ठीभर लोग और इन्हें चलाने वाले सरगना अपने लाभ के लिए सरकार और समाज दोनों को चुनौती दे रहे हैं। प्रवर्तन निदेशालय की कार्रवाई के बाद हर स्तर पर इसे रोकने के लिए काम करना होगा। इसके साथ ही इन्हें संरक्षण देने वालों को भी कानून के दायरे में लाकर सबक सिखाना होगा। कोयला के खेल में स्वच्छता के लिए एजेंसियों को मिलकर काम करना होगा तभी यह उपयोगी होगा।

> केंद्रीय एजेंसी ने कोयला माफिया पर कार्रवाई की है। इससे राजस्व की लूट पर रोक लगेगी

आत्मनिर्भर भारत के लिए श्रम सुधार

डा. मनसुख मांडविया

नए श्रम सुधार आधुनिक, लचीली और समावेशी आर्थिकी की नींव रखते हैं। इनमें श्रमिकों-उद्यमों दोनों को देश के विकास के केंद्र में रखा गया है

कई दशकों तक भारत कमजोर आर्थिक विकास, भ्रष्टाचार और रोजगार सृजन एवं श्रमिक कल्याण के प्रति प्रतिबद्धता के अभाव से जूझता रहा। राजनीतिक उद्देश्यों से होने वाले घेराव और बंदी ने औद्योगिक गतिविधियों को बाधित किया, निवेश को रोका और व्यवस्था में भरोसा तोड़ा। इस जड़ता को तोड़ने के लिए देश के नेतृत्व में बड़ा बदलाव जरूरी था। तब लाल किले से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 'श्रमेव जयते' का आह्वान किया और कहा कि भारत की विकास यात्रा के केंद्र में श्रम की गरिमा यानी मजदूरों का सम्मान होना चाहिए। यह एक नारा ही नहीं था, बल्कि एक नए राष्ट्रीय सोच का आरंभ था, जिसमें नीतियां बनाते समय श्रमिकों को केंद्र में रखा गया।

भारत के अधिकांश श्रम कानून 1920 से 1950 के बीच बने थे और उनमें औपनिवेशिक सोच की झलक दिखती थी। जबकि दुनिया में काम करने का तरीका पूरी तरह बदल गया है। गिग और प्लेटफार्म आर्थिकी का बढ़ना, डिजिटल कामकाज, लचीली कार्य संरचनाएं और नए प्रकार के उद्यम तेजी से उभर रहे थे, लेकिन भारत के पुराने श्रम कानून समय के साथ नहीं बदले और आधुनिक कार्यबल या प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था की जरूरतों को पूरा नहीं कर पा रहे थे। एक बार फिर प्रधानमंत्री मोदी ने अपने पंच प्रण के माध्यम से यह संदेश दिया कि हमें औपनिवेशिक मानसिकता छोड़कर भविष्य की जरूरतों के अनुसार आगे बढ़ना चाहिए। पुराने कानून इसलिए नहीं बने रहे, क्योंकि वे अच्छे थे। वे इसलिए बने रहे, क्योंकि पिछली सरकारों में उन्हें बदलने का राजनीतिक साहस, इच्छा शक्ति और दूरदृष्टि की कमी थी।

ऐसी राष्ट्रीय आवश्यकता को समझते हुए मोदी सरकार ने भारत के सबसे महत्वपूर्ण सुधारों में से एक को लागू किया। पूर्व के 29 बिखरे हुए श्रम कानूनों को मिलाकर चार सरल और स्पष्ट श्रम संहिताएं बनाई गई हैं। वेतन संहिता, औद्योगिक संबंध संहिता, सामाजिक सुरक्षा संहिता एवं व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्यदशा संहिता। 21 नवंबर से ये संहिताएं लागू भी हो गईं। ये संहिताएं एक आधुनिक श्रम ढांचा स्थापित करती हैं, जो श्रमिक-हितैषी और विकास समर्थक हैं। यह दर्शाता है कि भारत अब तेजी से बदलती वैश्विक अर्थव्यवस्था की मांगों को पूरा करने के लिए तैयार है। सभी क्षेत्रों के स्टेकहोल्डर्स ने एक पुरानी पड़ चुकी श्रम प्रणाली से आगे बढ़ने की आवश्यकता को पहचाना है। श्रमिकों और उद्योग जगत के दिग्गजों के साथ संवाद में यही सामने आया कि कार्यस्थल पर स्पष्टता, निष्पक्षता और सम्मान की आवश्यकता श्रम संहिता के मूल में होनी चाहिए। इसी मार्गदर्शक सिद्धांत ने हमारे सुधारों को आकार दिया है।

अवधेश राजपूत

श्रम संहिताएं अपने मूल स्वरूप में नियोक्ताओं की अपेक्षाओं को संतुलित करते हुए श्रमिकों के हितों को प्राथमिकता देती हैं। वे निवारक स्वास्थ्य देखभाल को बढ़ावा देती हैं और सामाजिक सुरक्षा का विस्तार करती हैं। ये संहिताएं आडियो-विजुअल श्रमिकों और गिग तथा प्लेटफार्म श्रमिकों को औपचारिक मान्यता प्रदान करती हैं। ये अखिल भारतीय ईएसआइसी कवरेज को सक्षम बनाती हैं। 40 वर्ष और उससे अधिक आयु के सभी श्रमिकों के लिए वार्षिक स्वास्थ्य जांच अनिवार्य करती हैं। इनमें वे बागान श्रमिक भी शामिल हैं, जो पहले इसके दायरे में नहीं आते थे। ये राज्यों में असमानताओं को कम करने के लिए सभी श्रमिकों के लिए वैधानिक न्यूनतम वेतन की गारंटी देती हैं। अनिवार्य नियुक्ति पत्र, पे स्लिप और सवेतन वार्षिक अवकाश जैसे प्रविधान हर श्रमिक को अधिक स्थिरता, सम्मान और सुरक्षा प्रदान करते हैं।

कांट्रैक्ट आधारित रोजगार के एक प्रगतिशील विकल्प के रूप में संहिताओं में फिक्स्ड टर्म एंप्लायमेंट (एफटीई) यानी निश्चित अवधि के रोजगार की शुरुआत की गई है। एफटीई के तहत एक निश्चित अवधि के लिए नियोजित श्रमिकों को स्थायी कर्मचारियों के समान ही वेतन, लाभ और काम करने की स्थितियां प्राप्त होती हैं, जिनमें सवेतन अवकाश, काम के तय घंटे, चिकित्सा सुविधाएं, सामाजिक सुरक्षा और अन्य वैधानिक सुरक्षाएं शामिल हैं। एफटीई कर्मचारी केवल एक वर्ष की निरंतर सेवा के बाद ही ग्रेच्युटी के लिए पात्र हो जाते हैं। संहिताएं आधुनिक कार्यस्थलों की वास्तविकताओं को भी स्वीकार करती हैं। यदि कोई कर्मचारी स्वेच्छा से मानक घंटों से अधिक काम करना चुनता है तो उसे ओवरटाइम के लिए नार्मल सैलरी रेट से दोगुना पैसा मिलना चाहिए, जिससे हर परिस्थिति में निष्पक्षता सुनिश्चित हो सके।

नारी शक्ति इन सुधारों का एक केंद्रीय स्तंभ है। प्रधानमंत्री मोदी के महिलाओं के नेतृत्व वाले विकास के दृष्टिकोण से निर्देशित ये संहिताएं महिलाओं के लिए विभिन्न क्षेत्रों में शामिल होने के नई राहें खोलती हैं, जिनमें अंडरग्राउंड खदानों, भारी मशीनरी और नाइट शिफ्ट में काम करना शामिल हैं। यह तभी संभव है जब इस पर उनकी सहमति हो और मजबूत सुरक्षा प्रोटोकाल लागू हों। संहिताएं सिंगल रजिस्ट्रेशन, सिंगल लाइसेंस और सिंगल रिटर्न फाइलिंग की शुरुआत करके नियोक्ताओं पर अनुपालन के बोझ को काफी कम करती हैं। यह सुगमता उद्योगों को पूरे भारत में अपनी यूनिट्स का विस्तार करने और स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करेगा, जिससे स्थानीय रोजगार को बढ़ावा मिलेगा।

ये श्रम संहिताएं भारत के आत्मनिर्भर और विकसित भारत बनने की राह में एक बड़ा बदलाव लाने वाला पड़ाव हैं। ये श्रमिक की गरिमा बनाए रखती हैं, औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित करती हैं और ऐसा माडल बनाती हैं जहां श्रमिकों के अधिकार और सम्मान की रक्षा होती है। प्रधानमंत्री मोदी के विजन और सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, सबका प्रयास के प्रति प्रतिबद्धता से निर्देशित ये श्रम सुधार एक आधुनिक, लचीली और समावेशी अर्थव्यवस्था की मजबूत नींव रखने के साथ ही श्रमिकों और उद्यमों दोनों को भारत के विकास के केंद्र में रखते हैं।

(लेखक केंद्रीय श्रम एवं रोजगार तथा युवा कार्यक्रम और खेल मंत्री हैं)
response@jagran.com

अशक्त बनाती गुलामी की मानसिकता

प्रणय कुमार

मैकाले के शिक्षा तंत्र से उपजी गुलामी की मानसिकता से मुक्ति का प्रधानमंत्री मोदी का आह्वान राष्ट्रीय आवश्यकता है

विभाजनकारी वृत्तियां और औपनिवेशिक मानसिकता ''एक भारत, श्रेष्ठ भारत'' की राह में सबसे बड़ी बाधा रही हैं। विभाजनकारी प्रवृत्तियों ने जहां देश को अशक्त बनाने तथा उसे खंड-खंड में बांटने का निरंतर प्रयत्न किया, वहीं औपनिवेशिक मानसिकता ने इसे कभी इसकी शक्ति के मूल उत्स या केंद्र से जुड़ने ही नहीं दिया। मूल से जुड़े बिना न तो प्रगति संभव है, न मौलिक पहचान ही। आशा थी कि लंबे संघर्ष से प्राप्त हुई स्वतंत्रता के पश्चात भारत शासन-प्रशासन से लेकर जीवन के बहुविध क्षेत्रों में अपनी संस्कृति, विरासत, परंपरा के अनुकूल अपना पथ प्रशस्त करेगा। अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहकर शिक्षा, चिकित्सा, शोध, विज्ञान, अनुसंधान तथा सुशासन एवं विकास के आदर्श प्रतिमान गढ़ेगा, परंतु दुर्भाग्य से सत्ता का हस्तांतरण तो हुआ, पर सत्ता-व्यवस्था का चरित्र एवं स्वरूप नहीं बदला। भारत 1947 में स्वाधीन अवश्य हुआ, पर स्व पर आधारित तंत्र, मंत्र एवं मानस आज तक निर्मित तथा विकसित नहीं कर सका। फलस्वरूप शिक्षा से लेकर कला, साहित्य और सिनेमा तक, शासन-व्यवस्था से लेकर न्याय और दंड विधान तक तथा वास्तु, विज्ञान और चिकित्सा से लेकर पर्यटन तक-परकीय तंत्र, सोच तथा दृष्टि की प्रभावी स्थिति एवं भूमिका यथावत बनी रही।

शायद ही कोई ऐसा भारतीय होगा, जिसे अपनी भाषा, अपनी वेश-भूषा, अपने सांस्कृतिक प्रतीक-पहचान के प्रति गौरवबोध रखने के कारण अपनी ही संस्थाओं-व्यवस्थाओं द्वारा कभी-न-कभी असमान व्यवहार, उपेक्षा या अपमान का दंश न झेलना पड़ा हो! न केवल कारपोरेट एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में, बल्कि सरकारी संस्थाओं में भी ज्ञान तथा योग्यता का पैमाना कार्यकुशलता नहीं, अपितु आंग्ल भाषा की दक्षता को मान लिया गया है। मौलिकता एवं सहजता के अभ्यासी भारतवर्ष एवं भारतीयों को तरह-तरह के कथित शिष्टाचार के नाम पर नितांत असहज, अ-मौलिक एवं अभारतीय बनाने का अभियान- आज महानगरों से लेकर छोटे-छोटे शहरों तक चलाया जा रहा है। मैकाले प्रणीत शिक्षण-तंत्र ने श्रम, कौशल तथा प्रतिभा तीनों का अवमूल्यन कर ''सूट-बूट वाली कुलीन संस्कृति

अपनी स्वर्णिम विरासत पर गर्व करें भारतीय। फाइल

एवं आभिजात्यवादी मानसिकता'' को बढ़ावा दिया है। और तो और मैकाले के मानस-पुत्रों ने पश्चिमीकरण को ही विकास एवं आधुनिकता का पर्याय मान लिया है। अपनी परंपराओं एवं त्योहारों के प्रति शंका तथा प्रश्न निर्मित करना तथा पश्चिमी त्योहारों, परंपराओं एवं दिवसों को उत्सव की तरह प्रस्तुत-प्रोत्साहित करना भी औपनिवेशिक मानसिकता का ही एक उदाहरण है।

आज दुनिया मानती है कि ध्यान, योग एवं आसन आदि का शरीर तथा मन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, पर हमने इन्हें तब मान्यता दी, जब पश्चिम ने इन्हें स्वीकार किया। आयुर्वेद समग्र चिकित्सा-पद्धति है, परंतु हम आज भी उसे वैकल्पिक चिकित्सा-पद्धति से अधिक का महत्व देने को तैयार नहीं। हमारी काल-गणना, ग्रहों-नक्षत्रों-ऋतुओं आदि की अवधारणा एवं नामकरण पश्चिम से अधिक युक्तिसंगत, तार्किक तथा वैज्ञानिक हैं, पर हम हैं कि उसे रस्मी मानते हुए पूजा-पाठ और त्योहारों तक सीमित मानते हैं। हमारा नगर-नियोजन, वास्तुशास्त्र, सांस्कृतिक धरोहर पश्चिम से अधिक विकसित एवं समृद्ध रहा है, सौंदर्य से लेकर रंग-रस-रूप-गंध आदि का हमारा सामूहिक बोध पश्चिम से अधिक समग्रता और वैविध्य लिए हुए है, पर पश्चिम के अंधानुकरण ने हमें यहां भी सरलीकरण और एकरूपता का शिकार बनाया है। हमारा खान-पान, रहन-सहन, जीवन-व्यवहार आदि पश्चिम की तुलना में अधिक सहज एवं प्रकृति-अनुकूल है, उसमें पर्यावरण के प्रति बड़ी सूक्ष्म दृष्टि एवं गहरे सरोकार सन्निहित हैं, पर यहां भी हम पश्चिमी मानकों पर आधारित संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों से आगे की सुधि नहीं ले पाते। यह औपनिवेशिक मानसिकता नहीं तो और क्या है कि हम आज भी मध्य-काल के भारत बनाम विदेशी संघर्ष को हिंदू-मुस्लिम संघर्ष के रूप में देखते एवं प्रस्तुत करते हैं और अलाउद्दीन खिलजी और अकबर जैसे चरित्र को सिने परदे पर अभिनीत करने के लिए 'रणवीर सिंह एवं ऋतिक रोशन' जैसे लंबे-चौड़े कद-काठी वाले अभिनेताओं का चयन करते हैं, जबकि उन्हें तुर्क, चीनी या मंगोलों जैसा दिखाना अधिक स्वाभाविक होता।

विचार करें कि इन सबके पीछे कौन-सी मूल भावना कार्य कर रही थी या कर रही है? क्या इनके पीछे विगत आठ दशकों से चल रही शिक्षा की व्यवस्था और बौद्धिक विमर्श नहीं जिम्मेदार हैं? किसके माध्यम से अपनी भाषा, भूषा, भोजन, भजन एवं भाव के प्रति पीढ़ियों के मन में हीनता की धारणाएं विकसित की गईं? कौन पीढ़ी-दर-पीढ़ी युवा संततियों के मन में यह उतारता चला गया कि जो कुछ पश्चिम का है, वह श्रेष्ठ, युगीन, तर्कसंगत, वैज्ञानिक एवं वरेण्य है और जो भारत का है, वह तो प्रतिगामी, कालबाह्य, अप्रासंगिक, अवैज्ञानिक एवं त्याज्य है? किसने उन्हें समझाया कि विदेशी तौर-तरीकों तथा सोच-संस्कार को अपनाए बिना वे कुछ बड़ा नहीं कर सकते? सच यही है 2035 तक मैकाले की शिक्षा-व्यवस्था से उपजी गुलामी की मानसिकता से मुक्ति का प्रधानमंत्री मोदी का आह्वान सर्वथा उपयुक्त एवं गहन राष्ट्रीय आवश्यकता है।

(लेखक शिक्षाविद् एवं सामाजिक संस्था 'शिक्षा-सोपान' के संस्थापक हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

ईश्वर का अनुभव

श्रीरामचरितमानस में ईश्वर की पहचान के लिए 'तन बिनु परस' इस दार्शनिक सत्य को प्रकट करता है कि परमात्मा देहरहित, अशरीरी और विदेही हैं। उनका न रूप है, न रंग, न आकार, न आरंभ और न अंत। इसलिए परमात्मा हर उपमा, हर कल्पना और हर अनुमान से परे हैं। आगम-निगम-पुराण ने भी उनकी महिमा का निरूपण अपने अनुमान तक ही किया है तो फिर मनुष्य का सोच उस अनंत सत्ता का स्पर्श कैसे कर सकता है। फिर भी उसके बिना पैरों के चलना, बिना कानों के सुनना, बिना आंखों के देखना, बिना नासिका के सुगंध ग्रहण करना- यह सब संकेत देता है कि वह सर्वशक्तिमान है, कर्मरहित होते हुए भी सर्वकर्ता है, मौन रहकर भी महाज्ञानी है। उसकी दिव्य सामर्थ्य का वर्णन सीमा से परे है। अखिल ब्रह्मांड तक जिसकी सत्ता व्याप्त हो, वही ब्रह्मांड का अधिनायक है। विविध प्राकृतिक सौंदर्य से सजी यह सृष्टि उसी द्वारा सजाया गया उपवन है। जैसे माली अपने बगीचे की देखभाल के लिए बार-बार आता-जाता है, वैसे ही परमात्मा भी अपने इस सृष्टिरूपी उपवन में सतत उपस्थित रहते हैं। दिखें या न दिखें, यह अलग बात है, लेकिन आते रहते हैं, यह सत्य है।

ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव दृश्य के रूप में नहीं, अनुभूति के रूप में होता है। जैसे ग्रीष्म में तपते शरीर को अचानक मिलने वाली ठंडी हवा, पीड़ा के समय असहाय मन को प्राप्त अप्रत्याशित सहायता, अनमने मन के बीच अचानक मंदिर के शंख-घंटी की ध्वनि या दुविधा के क्षण में अंतरात्मा से कौंधता कोई मार्गदर्शक विचार-ये सभी अनुभव अदृश्य पर उपस्थित परमात्मा के स्पर्श हैं। इन क्षणों को 'तन बिनु परस' का दर्शन समझकर नमन के साथ स्वीकार करना चाहिए। जैसे-जैसे यह भाव परिपक्व होता जाता है, मन स्थापित होता है कि परमात्मा हर क्षण हमारे साथ हैं। यही विश्वास जीवन को शांत, प्रसन्न और समर्थ बनाता है।

एसएन दुबे 'स्नेही'

भूख मिटाने की कठिन होती लड़ाई

देवेंद्रराज सुथार

> अत्याधुनिक तकनीक और अथाह संसाधनों के युग में भी भूख जैसी बुनियादी समस्या से निपटने में हम विफल हैं

संयुक्त राष्ट्र के विश्व खाद्य कार्यक्रम की वर्ष 2026 की वैश्विक रिपोर्ट के अनुसार, विश्व में 31 करोड़ 80 लाख लोग 2026 में गंभीर भूख का सामना करेंगे, जो 2019 की तुलना में दोगुने से अधिक हैं। इनमें से चार करोड़ दस लाख लोग आपातकालीन या उससे बदतर स्थिति में होंगे। लगभग 69 प्रतिशत गंभीर खाद्य असुरक्षा संघर्षग्रस्त देशों में केंद्रित है। विश्व खाद्य कार्यक्रम को 2026 में 11 करोड़ लोगों की सहायता के लिए 13 अरब डालर की आवश्यकता है, लेकिन वर्तमान अनुमान केवल आधी राशि मिलने के संकेत देते हैं। सबसे चौंकाने वाला तथ्य यह है कि 2030 तक वैश्विक भूख उन्मूलन के लिए सालाना मात्र 93 अरब डालर की आवश्यकता है, जो पिछले दशक के कुल सैन्य व्यय (लगभग 22 खरब डालर) के एक प्रतिशत से भी कम है।

इस सदी में पहली बार गाजा और सूडान के कुछ हिस्सों में एक साथ अकाल की पुष्टि हुई है। विश्व खाद्य कार्यक्रम की कार्यकारी निदेशिका सिंडी मैक्केन के अनुसार, 21वीं सदी में यह पूर्णतः अस्वीकार्य है। ये अकाल प्राकृतिक आपदाओं के नहीं, बल्कि युद्ध, नाकाबंदी और खाद्य आपूर्ति को हथियार बनाने के परिणाम हैं। सूडान में दो करोड़ दस लाख से अधिक लोग अर्थात 45 प्रतिशत आबादी पर्याप्त भोजन से वंचित है। अफगानिस्तान, यमन, सीरिया, दक्षिण सूडान, साहेल क्षेत्र, कांगो और हैती भी गंभीर संकट में हैं। विश्व खाद्य कार्यक्रम की रिपोर्ट के अनुसार, सबसे असुरक्षित लोगों के लिए अंतरराष्ट्रीय सहायता धीमी, असंगठित और अपर्याप्त है। वैश्विक सहायता अब कुल आवश्यकता की आधे से भी कम पूरी करती है। संयुक्त राष्ट्र उप महासचिव आमिना मोहम्मद ने अफ्रीकी कहावत का उपयोग करते हुए कहा कि जब हाथी लड़ते हैं, तो घास ही कुचली जाती है। जब शक्तिशाली राष्ट्र भू-राजनीतिक हितों के लिए टकराते हैं, तो निर्दोष नागरिक पिसते हैं।

वैश्विक खाद्य संकट से निपटने के लिए बहुआयामी रणनीति आवश्यक है जिसमें संघर्षों का शांतिपूर्ण समाधान, जलवायु अनुकूलन में निवेश, स्थानीय खाद्य उत्पादन को बढ़ावा, न्यायसंगत वितरण प्रणाली और सामाजिक सुरक्षा तंत्रों का विस्तार शामिल हैं। विश्व खाद्य कार्यक्रम ने साहेल क्षेत्र में एक लाख 58 हजार हेक्टेयर बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाया है और 18 देशों में साढ़े पांच लाख परिवारों को जलवायु बीमा कार्यक्रम से लाभान्वित किया है। यह दर्शाता है कि समाधान संभव है। भूख मिटाने के संसाधन उपलब्ध हैं। कमी है राजनीतिक इच्छाशक्ति और नैतिक प्रतिबद्धता की। यदि हम 93 अरब डालर भी नहीं जुटा सकते जो सैन्य खर्च की तुलना में नगण्य है, तो हमें अपनी मानवता पर ही प्रश्न उठाने चाहिए। भूख के खिलाफ लड़ाई केवल मानवीय मुद्दा नहीं है, यह हमारे विवेक और भविष्य की परीक्षा है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

मजबूत विपक्ष जरूरी

'झूठे आरोपों पर टिका विपक्ष' शीर्षक से लिखे आलेख में संजय गुप्त ने भाजपा को रोकने के लिए विपक्ष के सामने मौजूद चुनौतियों पर प्रकाश डाला है। जहां भाजपा का नेतृत्व संगठित और रणनीतिक दृष्टि वाला दिखाई देता है, वहीं कांग्रेस में नेतृत्व का अभाव स्पष्ट रूप से महसूस किया जा रहा है। देश की सबसे पुरानी राजनीतिक पार्टी होने के बावजूद कांग्रेस आज नेतृत्वहीनता के संकट से जूझ रही है। पार्टी के भीतर ऐसे नेता कम दिखाई देते हैं जो राष्ट्रीय स्तर पर जनस्वीकृति और जनविश्वास प्राप्त कर सकें। हर चुनाव में प्रचार के केंद्र में केवल राहुल गांधी और प्रियंका गांधी ही दिखाई देते हैं, जबकि पार्टी को व्यापक और सामूहिक नेतृत्व की आवश्यकता है। कांग्रेस का कमजोर पड़ना देश के लिए शुभ संकेत नहीं है। लोकतंत्र की मजबूती के लिए जितनी आवश्यक भूमिका सत्तासीन सरकार की होती है, उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका विपक्ष की भी होती है। यदि विपक्ष कमजोर होता जाएगा तो सत्ता असंतुलित और एकतरफा होती जाएगी। यह किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए खतरे की घंटी है। आज स्थिति यह है कि एक ओर भाजपा का कद लगातार बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर विपक्ष अपने ही निर्णयों और नीतियों की कमजोरी के कारण सिकुड़ता जा रहा है। सवाल यह भी उठना चाहिए कि मोदी के नेतृत्व के सामने कांग्रेस का कद इतना छोटा क्यों हो गया? क्यों देश की सबसे पुरानी पार्टी अपने अस्तित्व को बचाने के संघर्ष तक सिमट गई? आखिर क्यों जनता का विश्वास उसके नेतृत्व और कार्यशैली से हटता जा रहा है? विपक्ष का दायित्व केवल आलोचना करना नहीं, बल्कि तर्कसंगत विमर्श प्रस्तुत करना और विश्वसनीय विकल्प देना भी है और वर्तमान में कांग्रेस इस भूमिका में प्रभावी दिखाई नहीं देती।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

तत्काल परिणाम की बेचैनी

जीवन में सफलता की दौड़ जितनी तेज़ होती जा रही है, उतनी ही बढ़ती जा रही है परिणाम की आतुरता। आज अधिकांश लोग मेहनत से ज्यादा उसके फल के इंतजार में उलझे दिखाई देते हैं। पर सच यह है कि इच्छित परिणाम देर से नहीं आते, बल्कि हमारी अधीरता ही उन्हें हमसे दूर कर देती है। जिस क्षण मन में यह विचार घर कर जाए कि अभी, इसी वक्त वहीं से बेचैनी शुरू होती है और यह बेचैनी व्यक्ति को प्रक्रिया से अलग कर देती है। प्रगति का नियम स्पष्ट है पहले प्रयास, फिर निरंतरता, फिर समय और उसके बाद परिणाम। लेकिन जब अपेक्षा समय से पहले जाग जाती है, तब स्थिति उलट जाती है। हम मेहनत तो करते हैं, पर मन हर पल भविष्य में टंगा रहता है। इससे न तो वर्तमान में ध्यान लगता है, न कार्य में आनंद बचता है। बेचैनी अंततः थकान बन जाती है और थकान लक्ष्य को छोड़ देने का बहाना खोजने लगती है। इतिहास गवाह है कि बड़े बदलाव धीरे-धीरे परिपक्व होते हैं। बीज तुरंत पेड़ नहीं बनता, पर इसके बावजूद उसमें विकास की प्रक्रिया हर पल चलती रहती है। ठीक ऐसा ही मनुष्य के लक्ष्यों के साथ भी है। परिणाम भले दिखने में देर लगाएं, पर हर दिन का समर्पण भीतर बदलाव लाता रहता है।

अमन सिंह गौर, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

शहरों में बेसहारा लोग

शहर अपनी चमक-दमक, सुविधाओं और रोजगार के अवसरों के कारण लगातार लोगों को आकर्षित कर रहे हैं। गांव सिकुड़ते जा रहे हैं और शहर फैलते जा रहे हैं। परंतु बढ़ती आबादी के बोझ को संभालने में शहर सक्षम नहीं दिखते। एक रिपोर्ट के अनुसार देश के शहरी क्षेत्रों में डेढ़ करोड़ से अधिक लोग बेघर हैं। ये लोग दिन भर मजदूरी करते हैं और रात होते ही फुटपाथ ही इनका बिस्तर बन जाता है। विडंबना यह है कि समाज का संपन्न वर्ग, उच्च पदाधिकारी और नेतागण रोज इन्हीं सड़कों से गुजरते हैं, लेकिन इन बेसहारा जीवनों को संवेदना, सुविधा और सुरक्षा प्रदान करने की दिशा में ठोस प्रयास बहुत कम दिखाई देते हैं। फुटपाथ पर सोने की मजबूरी बुनियादी अधिकारों का अपमान है।

himanshushekhar.mca@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : response@jagran.com

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****

परिस्थितियां अवरोधक हो सकती हैं, किंतु निर्णायक नहीं

जी-20 के लिए सही सुझाव

जी-20 शिखर सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में भारतीय प्रधानमंत्री ने ड्रग्स तस्करी को बड़ी चिंता का विषय बताते हुए यह जो कहा कि आतंकवाद की कमर तोड़ने के लिए ड्रग्स तस्करों के नेटवर्क पर करारी चोट की आवश्यकता है, उससे इस संगठन के सदस्य देशों को न केवल सहमत होना चाहिए, बल्कि इस दिशा में कार्य करने के लिए संकल्पबद्ध भी होना चाहिए। अब यह किसी से छिपा नहीं कि मादक पदार्थों के अवैध कारोबार से अर्जित होने वाला धन गैर-कानूनी गतिविधियों में खपाया जाता है। इस पैसे का सबसे अधिक इस्तेमाल माफिया तत्व एवं आतंकी समूह करते हैं। दुनिया भर के आतंकी गुट खुद को संगठित करने और हथियार जुटाने के लिए आमतौर पर मादक पदार्थों की तस्करी में भी लिप्त रहते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है, जिससे कोई भी देश अनजान नहीं हो सकता। चिंता की बात यह है कि कुछ देश ऐसे भी हैं, जो न केवल ड्रग्स तस्करी में शामिल तत्वों की मदद करते हैं, बल्कि आतंकी समूहों को भी संरक्षण एवं सहयोग देते हैं। ड्रग्स तस्करों और आतंकी समूहों के बीच के गठजोड़ ने जो खतरा पैदा कर दिया है, उसका सामना विभिन्न देश मिलकर ही कर सकते हैं। यदि जी-20 जैसे संगठन अपनी सार्थकता साबित करना चाहते हैं तो उन्हें उन चुनौतियों का सामना करने के लिए एकजुट होना ही होगा, जो बढ़ती ही चली जा रही हैं। जी-20 देशों को ड्रग्स नेटवर्क पर चोट करने का काम इसलिए अपने हाथ में लेना चाहिए, क्योंकि यह आसानी से किया जा सकता है। इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि जी-20 सम्मेलन के साझा घोषणापत्रों में जिन समस्याओं से निपटने की आवश्यकता जताई जाती है, उन पर कोई ठोस काम कठिनाई से ही हो पाता है। जिन मुद्दों को सुलझाना आसान है, वे जी-20 का एजेंडा बनें तो इस संगठन की छवि भी निखरेगी। मादक पदार्थों के काले कारोबार पर रोक लगाने के लिए साझा प्रयास इसलिए तेज किए जाने चाहिए, क्योंकि यह काम कोई एक देश अकेले नहीं कर सकता और यह सब जानते हैं कि साझा कार्रवाई के अभाव में ड्रग्स तस्करों का दुस्साहस बढ़ता चला जा रहा है। यह देखने को मिल रहा है कि अब नए-नए और कहीं अधिक घातक मादक पदार्थों को निर्मित कर उनकी तस्करी की जा रही है। उदाहरणस्वरूप फेंटानाइल नामक बेहद घातक माना जाने वाला मादक पदार्थ तेजी से फैल रहा है। अभी इससे अमेरिका ही बुरी तरह प्रभावित है, लेकिन आशंका है कि आने वाले समय में ड्रग्स तस्कर इसे अन्य देशों में भी पहुंचाने की कोशिश कर सकते हैं। जी-20 देश ड्रग्स तस्करी पर रोक लगाने के साथ भारतीय प्रधानमंत्री की ओर से रेखांकित किए गए एआइ के दुरुपयोग को रोकने के मामले में भी सक्रिय हों तो बेहतर, क्योंकि यह भी एक कटु सच्चाई है।

निगरानी तंत्र जरूरी

तमाम कोशिशों के बावजूद प्रदेश में अवैध तरीके से बालू खनन पर पूरी तरह से लगाम नहीं लगाया जा सका है। बालू के अवैध धंधे में सफेदपोशों की संलिप्तता भी समय-समय पर उजागर होती रही है। वहीं, धंधेबाजों तथा माफिया पर लगाम के लिए पुलिस कार्रवाई में हिंसक टकराव की भी खबरें आती रहती हैं। हाल ही में राजधानी पटना के दुल्हिन बाजार में बालू की अवैध ढुलाई को रोक रहे सैप जवान पर गाड़ी चढ़ा दी गई, जिससे उनकी मौत हो गई। राज्य की नदियों से लगातार तीन महीने खनन पर लगी रोक अक्टूबर के मध्य में ही समाप्त हो चुकी है। नदियों से एक बार फिर बालू खनन शुरू है। खान एवं भू-तत्व विभाग को जानकारी मिल रही है कि बंदोबस्तधारी को नदी घाट में जितनी गहराई में खनन की अनुमति है, वे उससे अधिक गहराई तक खनन कर रहे हैं। इस संबंध में विभाग सख्त हो गया है। सभी जिलों के खनिज विकास पदाधिकारियों के साथ ही सभी सहायक खनिज निदेशकों को निर्देशित किया गया है कि बालू घाटों की सघन जांच करें और कोई गड़बड़ी पाई जाती है तो नियमानुकूल दोषियों पर कार्रवाई सुनिश्चित करें। साथ ही यह भी तय किया जाए कि किसी भी हाल में घाटों से अवैध बालू खनन नहीं होने पाए। पुलिस के साथ झड़प के मामलों का भी त्वरित निपटारा किया जाना चाहिए, ताकि दोषियों को कड़ी सजा मिल सके।

बालू खनन नियमानुसार हो और अवैध खनन पर लगाम के लिए मुख्यालय स्तर पर औचक निरीक्षण की व्यवस्था भी हो।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या नए श्रम सुधारों से अर्थव्यवस्था को लाभ पहुंचेगा?

आज का सवाल
क्या दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ वनडे सीरीज के लिए केएल राहुल को कप्तान बनाने का फैसला सही है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आत्मनिर्भर भारत के लिए श्रम सुधार

डा. मनसुख मंडाविया

नए श्रम सुधार आधुनिक, लचीली और समावेशी आर्थिकी की नींव रखते हैं। इनमें श्रमिकों-उद्यमों दोनों को देश के विकास के केंद्र में रखा गया है

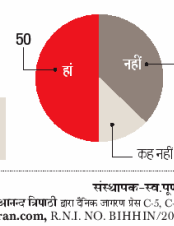

कई दशकों तक भारत कमजोर आर्थिक विकास, भ्रष्टाचार और रोजगार सृजन एवं श्रमिक कल्याण के प्रति प्रतिबद्धता के अभाव से जूझता रहा। राजनीतिक उद्देश्यों से होने वाले घेराव और बंदी ने औद्योगिक गतिविधियों को बाधित किया, निवेश को रोका और व्यवस्था में भरोसा तोड़ा। इस जड़ता को तोड़ने के लिए देश के नेतृत्व में बड़ा बदलाव जरूरी था। तब लाल किले से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 'श्रमेव जयते' का आह्वान किया और कहा कि भारत की विकास यात्रा के केंद्र में श्रम की गरिमा यानी मजदूरों का सम्मान होना चाहिए। यह एक नारा ही नहीं था, बल्कि एक नए राष्ट्रीय सोच का आरंभ था, जिसमें नीतियां बनाते समय श्रमिकों को केंद्र में रखा गया।

भारत के अधिकांश श्रम कानून 1920 से 1950 के बीच बने थे और उनमें औपनिवेशिक सोच की झलक दिखती थी। जबकि दुनिया में काम करने का तरीका पूरी तरह बदल गया है। गिग और प्लेटफार्म आर्थिकी का बढ़ना, डिजिटल कामकाज, लचीली कार्य संरचनाएं और नए प्रकार के उद्यम तेजी से उभर रहे थे, लेकिन भारत के पुराने श्रम कानून समय के साथ नहीं बदले और आधुनिक कार्यबल या प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था की जरूरतों को पूरा नहीं कर पा रहे थे। एक बार फिर प्रधानमंत्री मोदी ने अपने पंच प्रण के माध्यम से यह संदेश दिया कि हमें औपनिवेशिक मानसिकता छोड़कर भविष्य की जरूरतों के अनुसार आगे बढ़ना चाहिए। पुराने कानून इसलिए नहीं बने रहे, क्योंकि वे अच्छे थे। वे इसलिए बने रहे, क्योंकि पिछली सरकारों में उन्हें बदलने का राजनीतिक साहस, इच्छा शक्ति और दूरदृष्टि की कमी थी।

ऐसी राष्ट्रीय आवश्यकता को समझते हुए मोदी सरकार ने भारत के सबसे महत्वपूर्ण सुधारों में से एक को लागू किया। पूर्व के 29 बिखरे हुए श्रम कानूनों को मिलाकर चार सरल और स्पष्ट श्रम संहिताएं बनाई गई हैं। वेतन संहिता, औद्योगिक संबंध संहिता, सामाजिक सुरक्षा संहिता एवं व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्यदशा संहिता। 21 नवंबर से ये संहिताएं लागू भी हो गईं। ये संहिताएं एक आधुनिक श्रम ढांचा स्थापित करती हैं, जो श्रमिक-हितैषी और विकास समर्थक हैं। यह दर्शाता है कि भारत अब तेजी से बदलती वैश्विक अर्थव्यवस्था की मांगों को पूरा करने के लिए तैयार है। सभी क्षेत्रों के स्टेकहोल्डर्स ने एक पुरानी पड़ चुकी श्रम प्रणाली से आगे बढ़ने की आवश्यकता को पहचाना है। श्रमिकों और उद्योग जगत के दिग्गजों के साथ संवाद में यही सामने आया कि कार्यस्थल पर स्पष्टता, निष्पक्षता और सम्मान की आवश्यकता श्रम संहिता के मूल में होनी चाहिए। इसी मार्गदर्शक सिद्धांत ने हमारे सुधारों को आकार दिया है। इस सुधार ने पूर्व के जटिल और छितरे हुए तंत्र को ऐसे सिस्टम से बदल दिया है जो सरल, पारदर्शी और हर श्रमिक की सुरक्षा करने वाला है।

अवधेश राजपूत

श्रम संहिताएं अपने मूल स्वरूप में नियोक्ताओं की अपेक्षाओं को संतुलित करते हुए श्रमिकों के हितों को प्राथमिकता देती हैं। वे निवारक स्वास्थ्य देखभाल को बढ़ावा देती हैं और सामाजिक सुरक्षा का विस्तार करती हैं। ये संहिताएं आडियो-विजुअल श्रमिकों और गिग तथा प्लेटफार्म श्रमिकों को औपचारिक मान्यता प्रदान करती हैं। ये अखिल भारतीय ईएसआइसी कवरेज को सक्षम बनाती हैं। 40 वर्ष और उससे अधिक आयु के सभी श्रमिकों के लिए वार्षिक स्वास्थ्य जांच अनिवार्य करती हैं। इनमें वे बागान श्रमिक भी शामिल हैं, जो पहले इसके दायरे में नहीं आते थे। ये राज्यों में असमानताओं को कम करने के लिए सभी श्रमिकों के लिए वैधानिक न्यूनतम वेतन की गारंटी देती हैं। अनिवार्य नियुक्ति पत्र, पे स्लिप और सवेतन वार्षिक अवकाश जैसे प्रविधान हर श्रमिक को अधिक स्थिरता, सम्मान और सुरक्षा प्रदान करते हैं।

कांट्रैक्ट आधारित रोजगार के एक प्रगतिशील विकल्प के रूप में संहिताओं में फिक्स्ड टर्म एंप्लायमेंट (एफटीई) यानी निश्चित अवधि के रोजगार की शुरुआत की गई है। एफटीई के तहत एक निश्चित अवधि के लिए नियोजित श्रमिकों को स्थायी कर्मचारियों के समान ही वेतन, लाभ और काम करने की स्थितियां प्राप्त होती हैं, जिनमें सवेतन अवकाश, काम के तय घंटे, चिकित्सा सुविधाएं, सामाजिक सुरक्षा और अन्य वैधानिक सुरक्षाएं शामिल हैं। विशेष रूप से एफटीई कर्मचारी केवल एक वर्ष की निरंतर सेवा के बाद ही ग्रेच्युटी के लिए पात्र हो जाते हैं। संहिताएं आधुनिक कार्यस्थलों की वास्तविकताओं को भी स्वीकार करती हैं। यदि कोई कर्मचारी स्वेच्छा से मानक घंटों से अधिक काम करना चुनता है तो उसे ओवरटाइम के लिए नार्मल सैलरी रेट से दोगुना पैसा मिलना चाहिए, जिससे हर परिस्थिति में निष्पक्षता सुनिश्चित हो सके।

नारी शक्ति इन सुधारों का एक केंद्रीय स्तंभ है। प्रधानमंत्री मोदी के महिलाओं के नेतृत्व वाले विकास के दृष्टिकोण से निर्देशित ये संहिताएं महिलाओं के लिए विभिन्न क्षेत्रों में शामिल होने के नई राहें खोलती हैं, जिनमें अंडरग्राउंड खदानों, भारी मशीनरी और नाइट शिफ्ट में काम करना शामिल हैं। यह तभी संभव है जब इस पर उनकी सहमति हो और मजबूत सुरक्षा प्रोटोकाल लागू हों। संहिताएं सिंगल रजिस्ट्रेशन, सिंगल लाइसेंस और सिंगल रिटर्न फाइलिंग की शुरुआत करके नियोक्ताओं पर अनुपालन के बोझ को काफी कम करती हैं। यह सुगमता उद्योगों को पूरे भारत में अपनी यूनिट्स का विस्तार करने और स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करेगा, जिससे स्थानीय रोजगार को बढ़ावा मिलेगा।

ये श्रम संहिताएं भारत के आत्मनिर्भर और विकसित भारत बनने की राह में एक बड़ा बदलाव लाने वाला पड़ाव हैं। ये श्रमिक की गरिमा बनाए रखती हैं, औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित करती हैं और ऐसा माडल बनाती हैं जहां श्रमिकों के अधिकार और सम्मान की रक्षा होती है। प्रधानमंत्री मोदी के विजन और सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, सबका प्रयास के प्रति प्रतिबद्धता से निर्देशित ये श्रम सुधार एक आधुनिक, लचीली और समावेशी अर्थव्यवस्था की मजबूत नींव रखने के साथ ही श्रमिकों और उद्यमों दोनों को भारत के विकास के केंद्र में रखते हैं।

(लेखक केंद्रीय श्रम एवं रोजगार तथा युवा कार्यक्रम और खेल मंत्री हैं)
response@jagran.com

अशक्त बनाती गुलामी की मानसिकता

प्रणय कुमार

मैकाले के शिक्षा तंत्र से उपजी गुलामी की मानसिकता से मुक्ति का प्रधानमंत्री मोदी का आह्वान राष्ट्रीय आवश्यकता है

विभाजनकारी वृत्तियां और औपनिवेशिक मानसिकता "एक भारत, श्रेष्ठ भारत" की राह में सबसे बड़ी बाधा रही हैं। विभाजनकारी प्रवृत्तियों ने जहां देश को अशक्त बनाने तथा उसे खंड-खंड में बांटने का निरंतर प्रयत्न किया, वहीं औपनिवेशिक मानसिकता ने इसे कभी इसकी शक्ति के मूल उत्स या केंद्र से जुड़ने ही नहीं दिया। मूल से जुड़े बिना न तो प्रगति संभव है, न मौलिक पहचान ही। आशा थी कि लंबे संघर्ष से प्राप्त हुई स्वतंत्रता के पश्चात भारत शासन-प्रशासन से लेकर जीवन के बहुविध क्षेत्रों में अपनी संस्कृति, विरासत, परंपरा के अनुकूल अपना पथ प्रशस्त करेगा। अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहकर शिक्षा, चिकित्सा, शोध, विज्ञान, अनुसंधान तथा सुशासन एवं विकास के आदर्श प्रतिमान गढ़ेगा, परंतु दुर्भाग्य से सत्ता का हस्तांतरण तो हुआ, पर सत्ता-व्यवस्था का चरित्र एवं स्वरूप नहीं बदला। भारत 1947 में स्वाधीन अवश्य हुआ, पर स्व पर आधारित तंत्र, मंत्र एवं मानस आज तक निर्मित तथा विकसित नहीं कर सका। फलस्वरूप शिक्षा से लेकर कला, साहित्य और सिनेमा तक, शासन-व्यवस्था से लेकर न्याय और दंड विधान तक तथा वास्तु, विज्ञान और चिकित्सा से लेकर पर्यटन तक-परकीय तंत्र, सोच तथा दृष्टि की प्रभावी स्थिति एवं भूमिका यथावत बनी रही।

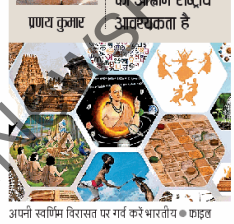

शायद ही कोई ऐसा भारतीय होगा, जिसे अपनी भाषा, अपनी वेश-भूषा, अपने सांस्कृतिक प्रतीक-पहचान के प्रति गौरवबोध रखने के कारण अपनी ही संस्थाओं-व्यवस्थाओं द्वारा कभी-न-कभी असमान व्यवहार, उपेक्षा या अपमान का दंश न झेलना पड़ा हो! न केवल कारपोरेट एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में, बल्कि सरकारी संस्थाओं में भी ज्ञान तथा योग्यता का पैमाना कार्यकुशलता नहीं, अपितु आंग्ल भाषा की दक्षता को मान लिया गया है। मौलिकता एवं सहजता के अभ्यासी भारतवर्ष एवं भारतीयों को तरह-तरह के कथित शिष्टाचार के नाम पर नितांत असहज, अ-मौलिक एवं अभारतीय बनाने का अभियान- आज महानगरों से लेकर छोटे-छोटे शहरों तक चलाया जा रहा है। मैकाले प्रणीत शिक्षण-तंत्र ने श्रम, कौशल तथा प्रतिभा तीनों का अवमूल्यन कर "सूट-बूट वाली कुलीन संस्कृति एवं आभिजात्यवादी मानसिकता" को बढ़ावा दिया है। और तो और मैकाले के मानस-पुत्रों ने पश्चिमीकरण को ही विकास एवं आधुनिकता का पर्याय मान लिया है। अपनी परंपराओं एवं त्योहारों के प्रति शंका तथा प्रश्न निर्मित करना तथा पश्चिमी त्योहारों, परंपराओं एवं दिवसों को उत्सव की तरह प्रस्तुत-प्रोत्साहित करना भी औपनिवेशिक मानसिकता का ही एक उदाहरण है।

अपनी स्वर्णिम विरासत पर गर्व करें भारतीय ● फाइल

आज दुनिया मानती है कि ध्यान, योग एवं आसन आदि का शरीर तथा मन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, पर हमने इन्हें तब मान्यता दी, जब पश्चिम ने इन्हें स्वीकार किया। आयुर्वेद समग्र चिकित्सा-पद्धति है, परंतु हम आज भी उसे वैकल्पिक चिकित्सा-पद्धति से अधिक का महत्व देने को तैयार नहीं। हमारी काल-गणना, ग्रहों-नक्षत्रों-ऋतुओं आदि की अवधारणा एवं नामकरण पश्चिम से अधिक युक्तिसंगत, तार्किक तथा वैज्ञानिक हैं, पर हम हैं कि उसे रस्मी मानते हुए पूजा-पाठ और त्योहारों तक सीमित मानते हैं। हमारा नगर-नियोजन, वास्तुशास्त्र, सांस्कृतिक धरोहर पश्चिम से अधिक विकसित एवं समृद्ध रहा है, सौंदर्य से लेकर रंग-रस-रूप-गंध आदि का हमारा सामूहिक बोध पश्चिम से अधिक समग्रता और वैविध्य लिए हुए है, पर पश्चिम के अंधानुकरण ने हमें यहां भी सरलीकरण और एकरूपता का शिकार बनाया है। हमारा खान-पान, रहन-सहन, जीवन-व्यवहार आदि पश्चिम की तुलना में अधिक सहज एवं प्रकृति-अनुकूल है, उसमें पर्यावरण के प्रति बड़ी सूक्ष्म दृष्टि एवं गहरे सरोकार सन्निहित हैं, पर यहां भी हम पश्चिमी मानकों पर आधारित संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों से आगे की सुधि नहीं ले पाते। यह औपनिवेशिक मानसिकता नहीं तो और क्या है कि हम आज भी मध्य-काल के भारत बनाम विदेशी संघर्ष को हिंदू-मुस्लिम संघर्ष के रूप में देखते एवं प्रस्तुत करते हैं और अलाउद्दीन खिलजी और अकबर जैसे चरित्र को सिने परदे पर अभिनीत करने के लिए 'रणवीर सिंह एवं ऋतिक रोशन' जैसे लंबे-चौड़े कद-काठी वाले अभिनेताओं का चयन करते हैं, जबकि उन्हें तुर्क, चीनी या मंगोलों जैसा दिखाना अधिक स्वाभाविक होता।

विचार करें कि इन सबके पीछे कौन-सी मूल भावना कार्य कर रही थी या कर रही है? क्या इनके पीछे विगत आठ दशकों से चल रही शिक्षा की व्यवस्था और बौद्धिक विमर्श नहीं जिम्मेदार हैं? किसके माध्यम से अपनी भाषा, भूषा, भोजन, भजन एवं भाव के प्रति पीढ़ियों के मन में हीनता की धारणाएं विकसित की गईं? कौन पीढ़ी-दर-पीढ़ी युवा संततियों के मन में यह उतारता चला गया कि जो कुछ पश्चिम का है, वह श्रेष्ठ, युगीन, तर्कसंगत, वैज्ञानिक एवं वरेण्य है और जो भारत का है, वह तो प्रतिगामी, कालबाह्य, अप्रासंगिक, अवैज्ञानिक एवं त्याज्य है? किसने उन्हें समझाया कि विदेशी तौर-तरीकों तथा सोच-संस्कार को अपनाए बिना वे कुछ बड़ा नहीं कर सकते? सच यही है 2035 तक मैकाले की शिक्षा-व्यवस्था से उपजी गुलामी की मानसिकता से मुक्ति का प्रधानमंत्री मोदी का आह्वान सर्वथा उपयुक्त एवं गहन राष्ट्रीय आवश्यकता है।

(लेखक शिक्षाविद् एवं सामाजिक संस्था 'शिक्षा-सोपान' के संस्थापक हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

ईश्वर का अनुभव

श्रीरामचरितमानस में ईश्वर की पहचान के लिए 'तन बिनु परस' इस दार्शनिक सत्य को प्रकट करता है कि परमात्मा देहरहित, अशरीरी और विदेही हैं। उनका न रूप है, न रंग, न आकार, न आरंभ और न अंत। इसलिए परमात्मा हर उपमा, हर कल्पना और हर अनुमान से परे हैं। आगम-निगम-पुराण ने भी उनकी महिमा का निरूपण अपने अनुमान तक ही किया है तो फिर मनुष्य का सोच उस अनंत सत्ता का स्पर्श कैसे कर सकता है। फिर भी उसके बिना पैरों के चलना, बिना कानों के सुनना, बिना आंखों के देखना, बिना नासिका के सुगंध ग्रहण करना-यह सब संकेत देता है कि वह सर्वशक्तिमान है, कर्मरहित होते हुए भी सर्वकर्ता है, मौन रहकर भी महाज्ञानी है। उसकी दिव्य सामर्थ्य का वर्णन सीमा से परे है।

अखिल ब्रह्मांड तक जिसकी सत्ता व्याप्त हो, वही ब्रह्मांड का अधिनायक है। विविध प्राकृतिक सौंदर्य से सजी यह सृष्टि उसी द्वारा सजाया गया उपवन है। जैसे माली अपने बगीचे की देखभाल के लिए बार-बार आता-जाता है, वैसे ही परमात्मा भी अपने इस सृष्टिरूपी उपवन में सतत उपस्थित रहते हैं। दिखें या न दिखें, यह अलग बात है, लेकिन आते रहते हैं, यह सत्य है।

ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव दृश्य के रूप में नहीं, अनुभूति के रूप में होता है। जैसे ग्रीष्म में तपते शरीर को अचानक मिलने वाली ठंडी हवा, पीड़ा के समय असहाय मन को प्राप्त अप्रत्याशित सहायता, अनमने मन के बीच अचानक मंदिर के शंख-घंटी की ध्वनि या दुविधा के क्षण में अंतरात्मा से कौंधता कोई मार्गदर्शक विचार-ये सभी अनुभव अदृश्य पर उपस्थित परमात्मा के स्पर्श हैं। इन क्षणों को 'तन बिनु परस' का दर्शन समझकर नमन के साथ स्वीकार करना चाहिए। जैसे-जैसे यह भाव परिपक्व होता जाता है, मन स्थापित होता है कि परमात्मा हर क्षण हमारे साथ हैं। यही विश्वास जीवन को शांत, प्रसन्न और समर्थ बनाता है।

एसएन दुबे 'स्नेही'

पाठकनामा

pathaknama@pat .jagran.com

मजबूत विपक्ष जरूरी

'झूठे आरोपों पर टिका विपक्ष' शीर्षक से लिखे आलेख में संजय गुप्त ने भाजपा को रोकने के लिए विपक्ष के सामने मौजूद चुनौतियों पर प्रकाश डाला है। जहां भाजपा का नेतृत्व संगठित और रणनीतिक दृष्टि वाला दिखाई देता है, वहीं कांग्रेस में नेतृत्व का अभाव स्पष्ट रूप से महसूस किया जा रहा है। देश की सबसे पुरानी राजनीतिक पार्टी होने के बावजूद कांग्रेस आज नेतृत्वहीनता के संकट से जूझ रही है। पार्टी के भीतर ऐसे नेता कम दिखाई देते हैं जो राष्ट्रीय स्तर पर जनस्वीकृति और जनविश्वास प्राप्त कर सकें। हर चुनाव में प्रचार के केंद्र में केवल राहुल गांधी और प्रियंका गांधी ही दिखाई देते हैं, जबकि पार्टी को व्यापक और सामूहिक नेतृत्व की आवश्यकता है। कांग्रेस का कमजोर पड़ना देश के लिए शुभ संकेत नहीं है। लोकतंत्र की मजबूती के लिए जितनी आवश्यक भूमिका सत्तासीन सरकार की होती है, उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका विपक्ष की भी होती है। यदि विपक्ष कमजोर होता जाएगा तो सत्ता असंतुलित और एकतरफा होती जाएगी। यह किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए खतरे की घंटी है। आज स्थिति यह है कि एक ओर भाजपा का कद लगातार बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर विपक्ष अपने ही निर्णयों और नीतियों की कमजोरी के कारण सिकुड़ता जा रहा है। सवाल यह भी उठना चाहिए कि मोदी के नेतृत्व के सामने कांग्रेस का कद इतना छोटा क्यों हो गया? क्यों देश की सबसे पुरानी पार्टी अपने अस्तित्व को बचाने के संघर्ष तक सिमट गई? आखिर क्यों जनता का विश्वास उसके नेतृत्व और कार्यशैली से हटता जा रहा है? विपक्ष का दायित्व केवल आलोचना करना नहीं, बल्कि तर्कसंगत विमर्श प्रस्तुत करना और विश्वसनीय विकल्प देना भी है और वर्तमान में कांग्रेस इस भूमिका में प्रभावी दिखाई नहीं देती।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार

शहरों की चमक-दमक और रोजगार के अवसर लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। इसी कारण गांव सिकुड़ते जा रहे हैं, शहरों का आकार बढ़ता जा रहा है। शहर बढ़ती हुई आबादी का बोझ उठाने में सक्षम नहीं है। एक रिपोर्ट के अनुसार देश के शहरों में डेढ़ करोड़ से अधिक आबादी बेघर है। वे दिनभर सड़कों पर मजदूरी करते हैं, झाड़ू लगाते हैं, फल-फूल बेचते हैं, रिक्शा चलाते हैं एवं रात में फुटपाथ पर सो जाते हैं। सरकार प्रधानमंत्री आवास योजना के द्वारा बेघर लोगों को घर उपलब्ध कराने का दावा करती है, लेकिन आज भी शहरों में बड़ी संख्या में गरीब फुटपाथ पर सो रहे हैं, उनकी संख्या की तुलना में रैन बसेरा का अभाव है। प्रतिवर्ष सर्दी के मौसम में कई बेघर लोगों की मौत हो जाती है। शीतलहर से बचाव के सरकारी प्रयास ऊंट के मुंह में जीरा के समान है। हमारी संस्कृति वसुधैव कुटुंबकम की रही है। समाज और सरकार को मिलकर बेघर लोगों को गरिमापूर्ण जीवन प्रदान करने का प्रयास करना चाहिए। सभी को गरिमापूर्ण तरीके से जीवन बिताने का अधिकार है।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी

विश्वास जीवन का आधार

मानव जीवन के लिए विश्वास ऐसा आधार है, जिस पर संबंधों, कार्यों और सामाजिक व्यवस्था की पूरी इमारत टिकी होती है। किंतु विश्वास जब संदेह में बदल जाए तो व्यक्ति न केवल स्वयं के लिए, बल्कि अपने परिवेश के लिए भी चुनौती बन जाता है। वह धीरे-धीरे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में असंतुलन उत्पन्न कर देता है। वह संभावित खतरे की कल्पना कर लेता है। अक्सर वह लोगों की नीयत पर संदेह करता है, उनकी बातों को गलत अर्थ देता है और किसी भी तथ्य को तुरंत स्वीकार नहीं करता। कभी-कभी ऐसी प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप में मन में घर कर जाती है। ऐसे व्यक्ति में आत्मविश्वास की कमी होती है, जिससे उनमें संदेह को बल मिलता है। वे स्वयं को असुरक्षित मानते ही हैं, दूसरों को भी शंका की दृष्टि से देखते रहते हैं। इनके लिए परामर्शदाता की सहायता की जरूरत होती है, पर दिक्कत यह हो जाती है कि न तो ऐसे लोग स्वयं को मानसिक रोगी समझने को तैयार होते हैं और न ही स्वजन उन्हें चिकित्सक के पास ले जाने का प्रयास करते हैं। जब शंकालु स्वभाव वाला व्यक्ति किसी संस्थान का प्रमुख अथवा नेतृत्वकारी पद पर हो, तब स्थिति और अधिक विस्फोटक होने का खतरा रहता है। शंकालु स्वभाव जन्मजात नहीं, बल्कि परिस्थितिजन्य होता है। ऐसे लोगों के प्रति सहानुभूति, संवेदनशीलता और रचनात्मक व्यवहार अपनाना आवश्यक है।

डा. मिथिलेश कुमार, भागलपुर, बिहार

पोस्ट

एसआइआर वैसे तो सामान्य प्रक्रिया है, लेकिन इसका जिस तरह से विरोध हो रहा है और बीएलओ जान गंवा रहे हैं, उसे देखते हुए सब कुछ सामान्य नहीं लगता।
हर्ष वर्धन त्रिपाठी@MediaHarshVT

भारतीयों के नामों से चलने वाले और नफरत फैलाने वाले कई एक्स हैंडल पाकिस्तानियों और बांग्लादेशियों के पाए गए। यह बताता है कि किस तरह सुनियोजित षड्यंत्र के तहत देश में नफरत फैलाई जा रही है।
अखिलेश शर्मा@akhileshsharma1

क्या एआइ भी 25 साल पहले सामने आए डाटकाम बबल की तरह फटेगा और बाजार को ले डूबेगा? गूगल के सुंदर पिचाई, ओपेन एआइ के फाउंडर सैम अल्टमैन और माइक्रोसाफ्ट के संस्थापक बिल गेट्स के हालिया बयानों का सार यही दिखाई पड़ता है कि बाजार में एआइ बुलबुला होने की आशंका है। मिलिंद खांडेकर@milindkhandekar

स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार- के अलावा केंद्र सरकार को जिन तीन मुद्दों पर सर्वाधिक ध्यान देने की जरूरत है, वे हैं जनसंख्या नियंत्रण कानून, एनआरसी और समान नागरिक संहिता। डा. अनुज कुमार@dranuj_k

जनपथ

अरशद मदनी की हुई याददाश्त कमजोर,
तभी मचाने लग गए जोर-जोर से शोर।
जोर-जोर से शोर याद उनको ना आए,
कितने मुस्लिम लोग राष्ट्रपति गए बनाए!
रक्खा शीश चढ़ाय तभी तो छाया है मद,
झूठ बोल भड़काय रहे लोगों को अरशद!!
- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त
जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 220

****

https://t.me/AllNewsPaperRaid1

6 | संपादकीय
जनसत्ता | 24 नवंबर, 2025

कल्पमेधा

सफल इंसान बनने की कोशिश करने के बजाय, सिद्धांतों वाला इंसान बनने का प्रयत्न करना चाहिए।
– अल्बर्ट आइंस्टीन

हादसा और सबक

भारत रक्षा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है। वैश्विक स्तर पर युद्ध के जो नए आयाम उभर कर सामने आ रहे हैं, उस लिहाज से रक्षा साजो-सामान का अपने देश में निर्माण और उनका उन्नयन बेहद जरूरी हो गया है। स्वदेशी एवं बहुउद्देशीय लड़ाकू विमान तेजस का निर्माण भारत की इसी सोच और इच्छाशक्ति का परिणाम है। इसे देश की रक्षा तकनीक की ताकत का प्रतीक भी माना जाता है। मगर भारतीय वायुसेना में शामिल इस विमान का दुबई में आयोजित एक प्रदर्शन के दौरान शुक्रवार को हादसे का शिकार हो जाने की घटना ने रक्षा क्षेत्र में देश की आत्मनिर्भरता की राह में चिंता की लकीरें खींच दी हैं। इस हादसे को इसलिए भी चिंताजनक दृष्टि से देखा जा रहा है, क्योंकि दो वर्ष के इतिहास में यह दूसरी बार है जब तेजस दुर्घटनाग्रस्त हुआ है। इससे पहले मार्च 2024 में राजस्थान के जैसलमेर में भारतीय सेनाओं के एक त्रि-सेवा अभ्यास के दौरान यह लड़ाकू विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। तब शुरुआती जांच में विमान के इंजन में तकनीकी खराबी की ओर इशारा किया गया था।

जहां तक रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की बात है तो भारत पिछले कुछ वर्षों से स्वदेशी रक्षा उत्पादन के मामले में एक नए केंद्र के रूप में उभर रहा है। देश में आत्मनिर्भरता एक मार्गदर्शक सिद्धांत रहा है, जिसने स्थानीय डिजाइन, विकास और विनिर्माण को प्राथमिकता देने वाली नीतियों को प्रेरित किया है। सरकारी सुधारों, रणनीतिक निवेश और औद्योगिक साझेदारियों ने नवाचार को बढ़ावा देकर घरेलू रक्षा क्षमताओं को मजबूत किया है। भारत ने स्वदेशी रक्षा प्रणाली आकाशतीर, ब्रह्मोस मिसाइल और लड़ाकू विमान तेजस जैसे रक्षा उकपरणों को तैयार कर दुनिया को अपनी तकनीक एवं उसकी शक्ति का परिचय दिया है। आपरेशन सिंदूर के दौरान देश की इस आधुनिक रक्षा प्रणाली ने अपनी क्षमता को बखूबी दर्ज किया है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, भारत का रक्षा निर्यात वर्ष 2013-14 में 686 करोड़ रुपए से बढ़कर 2024-25 में 23,622 करोड़ रुपए हो गया है। यह तस्वीर आत्मनिर्भर और विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी रक्षा उद्योग के लिए देश के निरंतर एवं गहन प्रयासों को रेखांकित करती है।

करीब दो दशक के विकास और परीक्षण के बाद लड़ाकू विमान तेजस को बेहद सुरक्षित माना जाता रहा है। इसका निर्माण वर्ष 2007 में शुरू हुआ था और जुलाई, 2016 में भारतीय वायुसेना ने तेजस का पहला बेड़ा बनाया। हल्के किस्म के इस विमान का निर्माण हिंदुस्तान एयरोनाटिक्स लिमिटेड ने किया है। इसका ढांचा कार्बन फाइबर से बना हुआ है, जो इसे धातु की तुलना में बहुत हल्का और मजबूत बनाता है। इसके भीतर सेंसर तरंग रडार लगा है, जो दुश्मन के विमान से लेकर जमीन से हवा में दागी गई मिसाइल का भी पता लगा सकता है। यानी यह दुश्मन से खुद की सुरक्षा करने में भी सक्षम है। तेजस एमके-1 का उन्नत संस्करण भी जल्द तैयार होने वाला है, जो हवा से हवा में और हवा से सतह पर मार करने वाली मिसाइलों तथा एंटी रेडिएशन मिसाइल रूद्रम-2 से लैस होगा। ऐसे में तेजस की उन तकनीकी कमियों का पूरी सटीकता से पता लगाना और उन्हें दुरुस्त करना बेहद जरूरी है, जो दो बार हादसों का कारण बनी हैं। तभी यह विमान पूरी तरह सुरक्षित एवं मजबूत रक्षा ढाल बन पाएगा।

तनाव के परिसर

पढ़ाई और परीक्षा के दबाव की वजह से विद्यार्थियों की आत्महत्या की घटनाएं पहले ही चिंता का विषय बनी हुई थीं। मगर हाल के दिनों में स्कूल में अपने साथ हुए बर्ताव से आहत होकर कुछ विद्यार्थियों के आत्महत्या कर लेने की खबरें बेहद परेशान करने वाली हैं। पिछले हफ्ते दिल्ली में दसवीं कक्षा के एक छात्र और मध्य प्रदेश के रीवा में ग्यारहवीं की छात्रा ने खुदकुशी कर ली। उन्होंने अपने आत्महत्या नोट में बताया कि कुछ शिक्षक उन्हें लगातार प्रताड़ित कर रहे थे। वहीं जयपुर के स्कूल में महज नौ वर्ष की एक बच्ची पर उसके कई सहपाठी लगातार परेशान करने वाली टिप्पणियां कर रहे थे। दिल्ली के छात्र ने स्कूल के काउंसलर से अपना दुख साझा किया था, वहीं जयपुर के स्कूल की बच्ची ने भी शिक्षकों से मदद मांगी थी। मगर शिक्षकों ने इस पर ध्यान देना जरूरी नहीं समझा। जबकि शिक्षकों और काउंसलरों की यह प्राथमिक जिम्मेदारी होती है कि वे किसी भी तरह की परेशानी का सामना कर रहे बच्चों की हर स्तर पर मदद करें।

विडंबना यह है कि अपनी जिम्मेदारी का अहसास किए बिना कुछ शिक्षक बच्चों के साथ ऐसा बर्ताव करते हैं कि कई बच्चे तनाव और अवसाद की हालत में चले जाते हैं। ऐसे नाजुक समय में अगर समय पर बच्चों को मनोवैज्ञानिक सहायता मुहैया नहीं कराई जाती है, तो इसका परिणाम कई बार दुखद होता है। सवाल है कि जो शिक्षक बच्चों की मुश्किलों की पहचान समय पर नहीं कर पाते, मदद करने के बजाय उनके प्रति सख्त व्यवहार करते हैं, उनका प्रशिक्षण किस रूप में हुआ होता है। अगर कोई बच्चा स्कूल में हुए व्यवहार की वजह से आखिरकार जीने का हौसला खो देता है, तो ऐसे माहौल के लिए कौन जिम्मेदार है? स्कूलों के साथ-साथ घर-परिवार में भी यह विचार करने की जरूरत है कि बच्चों को किसी भी वजह से उपजे तनाव या दबाव का सामना करने को लेकर कैसे प्रशिक्षित किया जाए। स्कूलों में अपने साथ शिक्षकों या अन्य सहपाठियों के बर्ताव की वजह से बच्चों की आत्महत्या की घटनाएं गंभीर चिंता का विषय हैं। इसके हल के लिए सरकार, समाज और स्कूल प्रबंधनों को तुरंत विचार करना चाहिए। स्कूल परिसर को बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य के अनुकूल बनाने के लिए हर जरूरी कदम उठाए जाने चाहिए।

नशे के जाल में उलझती युवा पीढ़ी

देश की युवा पीढ़ी जो राष्ट्र की शक्ति है, वह नशे की अंधेरी दुनिया में गुम होती जा रही है। नशा मुक्ति केंद्र ही नशा फैलाने वाले स्थल बनते जा रहे हैं। अगर इस पर गंभीरता से विचार नहीं किया गया, तो स्थिति बेहद जटिल हो सकती है।

सुरेश सेठ

देश में महंगाई, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार ऐसी समस्याएं हैं, जिनका समाधान हमें नजर नहीं आता। अब स्थिति यह है कि इसका हल निकालने के बजाय रेवड़ियां बांटी जा रही हैं। यहां सब चलता है, यह भाव तब और तीक्ष्ण हो जाता है, जब हम देखते हैं कि युवा पीढ़ी जो देश की शक्ति है, वह नशे की अंधेरी दुनिया में गुम हो रही है। ऐसे में न केवल देश, बल्कि नई पीढ़ी भी जोखिम में है। अगर इस पर गंभीरता से न सोचा गया, तो स्थिति बेहद गंभीर हो सकती है। पिछले दिनों पंजाब सरकार की ओर से एक आदेश में कहा गया कि किसी भी व्यक्ति को पांच से अधिक नशा मुक्ति केंद्र खोलने की इजाजत नहीं होगी।

दरअसल, नशा मुक्ति केंद्र ही अन्य प्रकार का नशा फैलाने वाले स्थल बनते जा रहे हैं। नशा छुड़ाने वाली गोलियों की लत भी नौजवानों को ऐसे लग जाती है कि वे उसी पर निर्भर होने लगते हैं। जैसे वे कभी चिट्टे और हेरोइन की लत के शिकार थे। नतीजा यह कि कई नशा मुक्ति केंद्र अब संदेह के घेरे में हैं। नशा छोड़ने के इच्छुक नौजवानों में दवा की जो गोलियां मुफ्त बांटी जाती हैं, अमूमन उसी की उन्हें लत लग जाती है। बाद में यही दवा उन्हें महंगे दामों में बेची जाती है। इस पैसे से दूसरे लोग अपने लिए चिट्टा जैसा नशीला पदार्थ खरीदते हैं। इस तरह चिट्टे से लेकर नशा छुड़ाने वाली दवा का एक ऐसा कुचक्र बन गया है, जिसे तोड़ना आसान नहीं है।

सवाल है कि जब बाड़ ही खेत को खाने लगे, तो उसका रखवाला कौन होगा। जब इस नशाखोरी की तह में जाते हैं, तो पता चलता कि कई दवा विक्रेता भी इस षड्यंत्र में संलिप्त हैं। इन्हीं से सांठगांठ कर युवा दवाइयां खरीद कर लाते हैं और फिर दस गुना ज्यादा दाम पर नश से ग्रस्त लोगों को बेच देते हैं। यानी यह एक अलग तरह का गोरखधंधा शुरू हो गया है। इस धंधे में जुटे युवा आमतौर पर सरकारी अस्पताल और नशा मुक्ति केंद्रों के आसपास मंडराते रहते हैं। हैरानी की बात यह है कि नशा मुक्ति अभियान चलाने वाली पुलिस की नजर इस अवैध धंधे पर क्यों नहीं जाती है! जबकि यह उतना ही खतरनाक है जितना परंपरागत नशे की तस्करी कर बेचने का धंधा। यह काला कारोबार बड़े पैमाने पर फैल चुका है और बड़ी मछलियों पर कभी कोई हाथ नहीं डालता। दवा के नाम पर नशे का जो ये धंधा चल रहा है, इसे गंभीरता से नहीं लिया जा रहा। नशा मुक्ति के नाम पर युवाओं को नशे की गर्त में धकेला जा रहा है।

नशे के कई रूप हैं। अभी एक सबक केरल से मिला है। वहां डिजिटल तरीके से नशे के एक नए रूप का पता चला है। इसमें नौजवानों से लेकर उम्रदराज लोग तक शामिल हैं। यह एक नई 'डिजिटल लत' है। आनलाइन ऐसे खेल शुरू किए गए हैं, जिनमें एक रात में वारे-न्यारे करने की बात होती है। शुरू-शुरू में इन खेलों का प्रचार करने के लिए बड़ी हस्तियों को लाया गया। मगर जब बात खुली, तो उन पर कानूनी शिकंजा कसा गया। बेशक

आनलाइन शिक्षा के जरिए विद्यार्थियों के पास पढ़ाई का कारगर विकल्प है। अभिभावक समझते हैं कि बच्चे आनलाइन पढ़ाई में व्यस्त हैं। मगर बच्चे तो ऐसे आभासी खेलों में लगे हुए हैं कि जिसमें वारे न्यारे तो कम होते हैं, उल्टे इसमें सब गंवाने के बाद वे अवसाद

> **जब बाड़ ही खेत को खाने लगे, तो उसका रखवाला कौन होगा। जब नशाखोरी की तह में जाते हैं, तो पता चलता है कि कई दवा विक्रेता भी इस षड्यंत्र में संलिप्त हैं। इन्हीं से सांठगांठ कर युवा नशे वाली दवाइयां खरीद कर लाते हैं और फिर दस गुना ज्यादा दाम देकर नशे के आदि लोगों को बेच देते हैं। यानी यह एक अलग तरह का नया गोरखधंधा शुरू हो गया है। इसमें संलिप्त युवा आमतौर पर सरकारी अस्पताल और नशा मुक्ति केंद्रों के आसपास मंडराते हैं। हैरानी की बात यह है कि नशा मुक्ति अभियान चलाने वाली पुलिस की नजर इस अवैध कारोबार की ओर क्यों नहीं जाती है!**

में चले जाते हैं। अब तो आत्महत्या की खबरें भी आने लगी हैं। यह स्थिति बेहद चिंताजनक है। केरल पूर्ण शिक्षित राज्यों में से एक है। वहां डिजिटल साक्षरता भी स्वाभाविक रूप से ज्यादा है। मगर वहां भी स्थिति बिगड़ रही है। ऐसा नहीं कि ऐसी खबरें दिल्ली या पंजाब से नहीं आतीं, लेकिन केरल में बड़े पैमाने पर डिजिटल लत बढ़ रही है। मनोवैज्ञानिक जब इस लत के शिकार बच्चों से बात करते हैं, तो उन्हें उबारने में कोई ज्यादा सफलता नहीं मिल पाती है। क्योंकि एक सप्ताह में काफी पैसे मिलने का लोभ उन पर बुरी तरह हावी रहता है। ऐसे में इस पर गंभीरता से विचार करना होगा कि इस जाल को किस तरह तोड़ा जाए। यह डिजिटल खेल नशे की लत की तरह गहरा होता है। इसके लिए 'इंटरनेट एडिक्शन टेस्ट' जरूरी है। इस लत के स्तर का पता कर इससे ग्रस्त युवाओं को रचनात्मक विकल्प देकर उन्हें उबारने की कोशिश की जा सकती है।

किसी के लिए यह कहना कि वह डिजिटल नशे का शिकार हो गया है, बहुत कठिन है। हर व्यक्ति मोबाइल या इंटरनेट का इस्तेमाल कर रहा है। भारत की डिजिटल ताकत पर सरकार भी गर्व करती है। अब इसी ताकत के बूते हम 5जी से 6जी की यात्रा तय कर रहे हैं। इसके साथ ही कृत्रिम मेधा की नई दुनिया भी नौजवानों के सामने खुल रही है। इस साइबर दुनिया में वे काले कारोबार की अंतरराष्ट्रीय मंडियों से भी जुड़ जाते हैं। फिर उनके लोभ की सीमा बढ़ जाती है। देश में अब यह डिजिटल लत एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। कैसे इन युवाओं को इस नशे की लत से बाहर निकाला जाए, यह एक बड़ी चुनौती बन गई है, क्योंकि आभासी मंचों का जाल इस तरह से हमारे समाज में फैल गया है कि किसी को डिजिटल नशे से ग्रस्त कहना बहुत कठिन है।

दूसरी ओर, जब नौजवान कुछ खतरनाक खेलों को डिजिटल शक्ति के साथ खेलते हैं, तो प्रायः हार जाने पर अवसादग्रस्त हो जाते हैं। कभी-कभी ऐसे युवा तो आत्महत्या तक कर लेते हैं। ऐसे में हमें समस्या की तह में जाना होगा। केवल परंपरागत नशे को ही देश की युवा पीढ़ी को बर्बाद करने वाला मान लेना, यथार्थ से आंखें मूंद लेने जैसा है। लिहाजा नशे के हर रूप और उसके हर स्तर से देश को निपटना होगा। चिट्टे और हेरोइन से लेकर अवैध शराब तक, जिसकी भट्ठियां पंजाब से लेकर उत्तर प्रदेश तक लगी नजर आती हैं। यह तो खतरनाक है ही, लेकिन इससे भी अधिक खतरनाक है डिजिटल नशा। इससे बड़ी संख्या में युवा प्रभावित हो रहे हैं।

माता-पिता बच्चे की आनलाइन पढ़ाई पर भरोसा कर लेते हैं और दूसरी ओर बच्चे अपनी बर्बादी की राह पर चल रहे होते हैं। उन्हें लगता है कि पढ़ने-लिखने की अब क्या जरूरत, जब वे इन डिजिटल खेलों से अपनी जेबें भर सकते हैं। केरल ने इस बात को ज्यादा गंभीरता से लिया है। वहां कुछ केंद्र भी बनाए गए हैं। असल में पढ़ाई और इंटरनेट के इस्तेमाल में संतुलन बहुत जरूरी है। इस संतुलन के लिए बच्चों के साथ अभिभावकों का भी मार्गदर्शन आवश्यक है। इसको लेकर केंद्र और राज्य सरकारों को एक स्पष्ट नीति बनानी चाहिए। ऐसे नशा मुक्ति केंद्र खोलने चाहिए जहां डिजिटल खेल से सभी को आगाह किया जाए, युवाओं को असलियत समझाई जाए। यह इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि इस समस्या के बेकाबू होने से युवा पीढ़ी को बचाना और कठिन हो जाएगा।

पड़ोस की संस्कृति

रितुप्रिया शर्मा

दुनिया मेरे आगे

हमने अक्सर सुना है, 'यह तो पड़ोसी धर्म है' या 'पड़ोसी से सगा दूसरा कोई भी नहीं', लेकिन जैसे-जैसे जमाना बदला, समय ने करवट ली, नई सोच के साथ जीवन के नए आयाम भी बनने लगे। आज यह स्थिति उत्पन्न हो गई है कि कई बार हमें यह भी पता नहीं होता है कि हमारे पड़ोस में कौन रह रहा है। जो पड़ोस हमारे सुख-दुख और जीवन की खुशियों का साथी हुआ करता था, वहां से हम कन्नी काट कर निकलना बेहतर समझते हैं। मोबाइल और इंटरनेट के इस युग में हमारी मोहल्ला संस्कृति लगभग नष्ट हो गई है। नहीं तो पहले के दौर में काम से निवृत्त होकर आसपास की सभी महिलाएं एक-दूसरे के सुख-दुख में साझेदारी निभाती थीं। सर्दी की धूप हो या रात के वक्त अलाव जलाकर हाथ सेंकना, ये सभी कार्य लोग साथ-साथ ही करते थे। एक भावुक-सा बंधन बंधता था, हमारा हमारे पड़ोसियों के साथ।

होली की रंगत हो या दीवाली के पटाखे, आस-पड़ोस के बच्चे टोली बनाकर त्योहार का आनंद उठाते थे। कभी घर पर कोई बीमार होता तो पड़ोसी डाक्टर के पास ले जाते, लेकिन आज की संस्कृति एकलवादी होती जा रही है। हमें अपने घर के रिश्तों में भी घुटन महसूस होने लगती है, तो पड़ोसियों की बात क्या की जाए! आज का दौर सांस्कृतिक उथल-उथल की ओर लेता जा रहा है और इसके लिए हम ही जिम्मेदार हैं। फ्लैट संस्कृति का विकास इस एकलवाद को और बढ़ावा दे रहा है। सब अपने-आप में ही बहुत खुश दिखने का प्रयास करते हैं।

आज शादियां होती हैं, तो दो दिन में निपटा दी जाती हैं। पिछले दौर में यही उत्साह पंद्रह-बीस दिन तक बना रहता था, क्योंकि भाग लेने वाले लोग ज्यादा होते थे और वे ज्यादातर पड़ोसी ही होते थे। आज ऐसा समय आ गया है कि रिश्तेदार तक काम को हाथ नहीं लगाते हैं। मगर पड़ोस-प्रेम की उस निश्चल दौर में बारात कब खाना खाकर उठ जाती थी, लड़की के पिता को पता भी नहीं चलता था। सारा काम आस-पड़ोस के लोग निपटा दिया करते थे।

शाम की चौपालों में गुजरती गर्मी की रातें, हर बात में पड़ोसी का शामिल होना, यही हमारी संस्कृति का भाग रहा है। हालांकि गांव-कस्बों में अभी भी यह थोड़ा-बहुत देखने को मिल जाता है, लेकिन शहरीकरण के दबे कदम वहां की आबोहवा को भी एकाकी बना रहे हैं। यही बात देश की परिधि के परे भी लागू होती है, यानी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हमारे पड़ोसियों के बारे में। हमारा भारत हमेशा से ही पड़ोसी राष्ट्रों से मधुर संबंध चाहता रहा है। हमारे देश ने हमेशा अपना पड़ोसी धर्म निभाया है। ये हमारी परंपरा का हिस्सा है कि हम 'वसुधैव कुटुंबकम' का भाव संपूर्ण विश्व के लिए रखते हैं। प्रायद्वीपीय भारत की भौगोलिक स्थिति भी ऐसी ही है कि हमारे पड़ोस से हमारे सांस्कृतिक गुण काफी हद तक मेल खाते हैं। लेकिन अब अंतरराष्ट्रीय मानको में निजी स्वार्थ का बोलबाला हो रहा है। ऐसे में यह भावना हताहत हो रही है। मगर हमारे राष्ट्र ने अपने भाईचारे की नीति को अभी भी खत्म नहीं किया है।

कहने का तात्पर्य यह है कि चाहे हमारे निजी जीवन में हो या राष्ट्रीय जीवन में, हमें हमारे पड़ोसियों से हमेशा सुमधुर संबंधों को कायम रखना चाहिए। ये संबंध हमें न केवल भावनात्मक मजबूती प्रदान करते हैं, बल्कि हमारे जीवन को आसान बनाते हैं। हमारी स्वयं की सुरक्षा के लिए भी यह बहुत आवश्यक है कि हम अपने पड़ोसियों से संबंधों को अनुकूल बनाकर रखें। सबके अलग-अलग ढंग होने के बावजूद भी हमारे पड़ोस के सांस्कृतिक तत्त्वों को हम आत्मसात करते हैं। एक-दूसरे की संस्कृति का हिस्सा बनना कितने सौभाग्य की बात है। यह बात वही जानता है जिसने ऐसा जीवन जिया है।

गुजरे जमाने में तो यह भी पता नहीं चलता था कि बच्चे कहां खेल रहे हैं, क्या खा रहे हैं और कैसे पल रहे हैं। वे एक बड़े परिवार रूपी पड़ोस का अभिन्न हुए हिस्सा हुआ करते थे और उनका विकास बड़े ही उन्नत रूप में होता था। वे शरीर से हृष्ट-पुष्ट और भावनात्मक रूप से मजबूत हुआ करते थे और तनाव का छोटा सिरा भी उन्हें छू नहीं सकता था। मगर आज अवसाद भयावह रूप ले रहा है। एकाकीपन एक अवसाद ही है और इससे बचने की जरूरत है। व्यक्तिगत रूप से हमें अपना समय चाहिए, तो उसमें कोई बुराई नहीं है, लेकिन हमें एक-दूसरे का खयाल रखने में कोई कोर कसर नहीं छोड़नी चाहिए। जब-जब हमने अपने आप को व्यक्ति के रूप से अपने अंदर समेटा है, वह कहीं से भी हमारे काम नहीं आया है। खुले हृदय और खुले व्यवहार से पड़ोस को जानने की जरूरत है। हमें एक-दूसरे का मुसीबत में साथ देना चाहिए। एक का दुख दूसरे को महसूस हो और सुख दूसरे व्यक्ति को भी सुख की नरम छाया प्रदान करे। यही हमारा देश है और भारत अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी भाईचारे की इसी बुनियाद को वर्षों से संजोए हुए है।

> **गुजरे जमाने में तो यह भी पता नहीं चलता था कि बच्चे कहां खेल रहे हैं, क्या खा रहे हैं और कैसे पल रहे हैं। वे एक बड़े परिवार रूपी पड़ोस का अभिन्न हिस्सा हुआ करते थे और उनका विकास बड़े ही उन्नत रूप में होता था। मगर आज एकाकीपन अवसाद का भयावह रूप ले रहा है, जिससे बचने की जरूरत है।**

हम एक-दूसरे के काम आएं और बिना किसी लाग लपेट और और भ्रम के एक-दूसरे को शक्तिशाली बनाएं, यह बहुत जरूरी है। पड़ोस रूपी इस आत्मिक शक्ति को फिर से एकत्रित करने की जरूरत है, ताकि हम एक-दूसरे को मुसीबतों से बचा सकें। प्रेम और करुणा के मानवीय भावों का संचरण कर सकें, भारत को व्यक्तिगत संस्कृति और एकांतवास से बचा सकें, ताकि फिर हमारे मोहल्लों में पड़ोस का कोलाहल हो, बच्चों की हलचल हो और जिंदगी, जिंदगी जैसी लगे।

श्रम का बोझ

देश में एक बार फिर यह बहस जोर पकड़ रही है कि क्या भारत को विकास की रफ्तार बढ़ाने के लिए युवाओं से हफ्ते में 72 घंटे काम करवाना चाहिए। हाल ही में यह विचार दोहराया गया है कि भारत को चीन जैसे देशों की बराबरी करने के लिए लंबे समय तक कड़ी मेहनत करनी होगी। पहले भी यही बात कही गई थी। इसके बाद देशभर में इस पर व्यापक चर्चा हुई। इसका विरोध भी हुआ था। कई युवाओं ने इसे अव्यावहारिक ही नहीं, बल्कि स्वास्थ्य के लिए खतरनाक भी बताया था। भारत अक्सर चीन की तेज विकास दर को उदाहरण के रूप में पेश करता है, लेकिन वहां 12 घंटे काम की '996 संस्कृति' (सुबह नौ से रात नौ बजे, सप्ताह में छह दिन) ने कर्मचारियों को मानसिक और शारीरिक रूप से बुरी तरह प्रभावित किया। लगातार काम के कारण युवाओं में तनाव, अवसाद, नींद की कमी और अचानक मौत जैसी स्थिति पैदा हो गई थी। इसके बाद चीन के शीर्ष न्यायालय ने वर्ष 2021 में ऐसी कार्य व्यवस्था को अवैध घोषित कर दिया। यह समझने की जरूरत है कि भारतीय युवा पहले ही अत्यधिक दबाव में काम कर रहे हैं।

– चंद्र प्रकाश शर्मा, रानी बाग, दिल्ली

बच्चों का अधिकार

पिछले दिनों अंतरराष्ट्रीय बाल दिवस मनाया गया। इसका मुख्य उद्देश्य बच्चों के अधिकारों की रक्षा और उनकी बेहतरी के लिए काम करना है। आज दुनिया के कई देशों में बच्चों का विभिन्न तरह से शोषण हो रहा है। गरीबी, भेदभाव और बाल श्रम मुख्य तौर पर इसके रूप हैं। हमारे देश में भी ये समस्याएं कम नहीं हैं। कोई भी गरीब परिवार नहीं चाहता होगा कि उनके बच्चे छोटी उम्र में दिहाड़ी मजदूरी करें, लेकिन मजबूरी उन्हें विवश कर देती है। यह शर्मनाक है कि आज स्वतंत्र भारत में छोटे-छोटे बच्चे गरीबी के कारण मजदूरी करने के लिए विवश हैं। कई बच्चे कुपोषण के शिकार हो रहे हैं। गरीब लोग भी अपने बच्चों के सुनहरे भविष्य के लिए सपने देखते हैं, लेकिन आर्थिक कमजोरी की वजह से उनके सपने टूट जाते हैं। देखा जाए तो हर बच्चे का भविष्य संवारा जाना चाहिए, क्योंकि यह उनका अधिकार भी है।

– राजेश कुमार चौहान, जलंधर

बेघर होने का दंश

'चमकते शहरों में उपेक्षित बेघर लोग' (आलेख, 21 नवंबर) पढ़ा। रोटी, कपड़ा और मकान मूलभत जरूरतें हैं। हर किसी का अपना एक घर का सपना होता है। कड़ाके की ठंड में फुटपाथों पर बिखरी पुरानी रजाइयां, प्लास्टिक की फटी हुई चादरें और कभी-कभार धुंधली आग की लौ, सचमुच शहर की जगमगाती रोशनी से कटी हुई दुनिया लगती हैं। शहरों में कड़ाके की शीतलहर के दौरान कई लोगों की मौत हो जाती है। अक्सर गुमनाम चेहरे हमें रेलवे स्टेशनों, बस अड्डों के पास और पुलों के नीचे मृत पड़े दिखाई पड़ते हैं। ये मौतें केवल मौसमी हादसे नहीं हैं, ये हमारी व्यवस्था की सच्चाई हैं। ठंड से लोगों का मरना निस्संदेह समाज की संवेदनहीनता का क्रूर आईना हैं। वर्ष 2015 में शुरू की गई प्रधानमंत्री आवास योजना का परिणाम यह है कि कागजों पर तो कोई बेघर नहीं दिखता, लेकिन जमीनी हकीकत इससे अलग है।

– शाहिद हाशमी, नई दिल्ली

जल्दबाजी क्यों

मध्य प्रदेश में मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण के दौरान लगातार 'पोर्टल' की धीमी गति, एप की समस्या और क्षेत्र में आने वाली वास्तविक चुनौतियों ने प्रखंड स्तरीय अधिकारियों या बीएलओ के काम को गंभीर रूप से धीमा कर दिया है। आधा समय गुजर चुका है, पर कार्य का बड़ा हिस्सा अब भी लंबित है। ऊपर से ठंड और विवाह के मौसम की बढ़ती व्यस्तताएं चुनौतियों को और अधिक विकट बना रही हैं। जबकि प्रदेश में न कोई चुनाव प्रस्तावित है, न ही तत्काल संशोधित मतदाता सूची की कोई अनिवार्य आवश्यकता, तो फिर क्यों प्रशासनिक अमले और बीएलओ पर इतनी अव्यावहारिक समय-सीमा का बोझ डाला गया है? चुनाव आयोग से कहा जाना चाहिए कि प्रदेश के लिए एसआइआर की निर्धारित तारीख को कम से कम एक माह बढ़ाया जाए।

– आरके जैन 'अरिजीत', बड़वानी, मप्र

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, सोमवार 24 नवम्बर 2025

संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

श्रम संहिताएं शोषण का नया औजार

केंद्र सरकार ने शुक्रवार को एक अधिसूचना जारी कर चार श्रम संहिताएं लागू कर दी हैं। इनमें से मजदूरी संहिता 2019 में संसद ने पारित की थी। अन्य तीनों संहिताएं सामाजिक सुरक्षा संहिता, औद्योगिक संबंध संहिता और व्यवसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और कार्यदशाएं संहिता 2020 में संसद में पारित की जा चुकी हैं। लेकिन इसके बाद इन्हें लागू करने पर कोई बात नहीं हुई, तो समझा गया कि इन्हें ठंडे बस्ते में डाल दिया गया है।2024 में मोदी सरकार का दूसरा कार्यकाल भी खत्म हो गया। फिर चुनाव में जीत कर नरेन्द्र मोदी ने तीसरा कार्यभार संभाला, उसके बाद भी इन श्रम संहिताओं पर कोई बात नहीं हुई। अब यकायक मोदी सरकार ने इन्हें लागू करने की अधिसूचना जारी कर सबको चौंका दिया। सरकार इस फैसले को कर्मचारियों और मज़दूरों के हित में बता रही है। प्रधानमंत्री मोदी ने सोशल मीडिया एक्स पर लिखा, 'आज, हमारी सरकार ने चार लेबर कोड लागू कर दिए हैं। यह आज़ादी के बाद मज़दूरों लिए सबसे बड़े और प्रगतिशील सुधारों में से एक है। यह हमारे कामगारों को बहुत ताक़तवर बनाता है। इससे नियमों का पालन भी काफ़ी आसान हो जाएगा और यह 'ईज़ ऑफ़ डूइंग बिज़नेस' को बढ़ावा देने वाला है।'

प्रधानमंत्री ने इन्हें आजमाए बिना ये तो कह दिया कि ये मजदूरों के सबसे प्रगतिशील सुधारों में से एक हैं, लेकिन ये नहीं बताया कि पिछले कार्यकाल में इन सुधारों को लागू करने से उन्हें किसने रोका था और अब अचानक इन्हें लागू क्यों किया गया। ध्यान रहे कि जिस समय इन संहिताओं को पारित कराया गया, वह कोरोना महामारी का दौर था। जिसने नोटबंदी के बाद त्रस्त जनता की कमर बुरी तरह तोड़ दी थी। लाखों लोग बेघर और बेरोजगार हो गए थे। तब नरेन्द्र मोदी ने आत्मनिर्भर भारत का लुभावना नारा दिया था। अभी श्रम संहिताओं को लागू करते वक्त फिर इसी आत्मनिर्भर भारत की बात ही कही जा रही है। मगर मजदूर संगठन अब भी यह नहीं मान रहे हैं कि इनसे मजदूरों का भला होगा। पांच साल पहले भी उन्होंने इसका विरोध किया था, और वे अब भी यही कह रहे हैं कि यह पूंजीपतियों के हितों को देखते हुए बनाए गए हैं।

श्रम संहिता के ख़िलाफ़ इंटक, एटक, एचएमएस, सीआईटीयू, एआईयूटीयूसी, टीयूसीसी, एईडब्लूए, एआईसीसीटीयू, एलपीएफ़ और यूटीयूसी जैसे मज़दूर संगठनों ने 26 नवंबर को देशभर में विरोध प्रदर्शन का फ़ैसला भी किया है। वहीं कांग्रेस नेता जयराम रमेश ने सोशल मीडिया एक्स पर लिखा, 'मज़दूरों से जुड़े 29 मौजूदा क़ानूनों को 4 कोड में री-पैकेज किया गया है। इसका किसी क्रांतिकारी सुधार के तौर पर प्रचार किया जा रहा है, जबकि इसके नियम अभी तक नोटिफ़ाई भी नहीं हुए हैं। उन्होंने सवाल खड़े किए हैं, 'लेकिन क्या ये कोड भारत के मज़दूरों की न्याय के लिए इन 5 ज़रूरी मांगों को हक़ीक़त बना पाएंगे ?

1.मनरेगा समेत पूरे देश में हर किसी के लिए 400 रुपये की न्यूनतम मज़दूरी

2. 'राइट टू हेल्थ' क़ानून जो 25 लाख रुपये का हेल्थ कवरेज देगा

3. शहरी इलाक़ों के लिए एम्प्लॉयमेंट गारंटी एक्ट

4. सभी असंगठित श्रेत्र के मज़दूरों के लिए पूरी सोशल सिक्योरिटी, जिसमें लाइफ़ इंश्योरेंस और एक्सीडेंट इंश्योरेंस शामिल है।

5. प्रमुख सरकारी क्षेत्रों में कॉन्ट्रैक्ट वाली नौकरी पर रोक।

देखना होगा कि मोदी सरकार इन सवालों के जवाब देती है या इन्हें अनदेखा कर देती है। वैसे सरकार का दावा है कि साल 2019 के वेज कोड से कामगारों को न्यूनतम मज़दूरी की गारंटी मिल सकेगी और हर पांच साल में न्यूनतम मज़दूरी की समीक्षा की जाएगी। लेकिन जिस देश में साल में कई बार महंगाई के झटके लगते हैं, वहां मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी तय करने के लिए पांच साल क्या ज्यादा लंबा वक्त नहीं है। सरकार का यह भी दावा है कि इससे सभी कामगारों को समय पर वेतन मिलने की गारंटी भी दी जाएगी और महिलाओं और पुरुषों को समान मेहनताना मिल सकेगा। एक छोटे से योगदान के बाद सभी कामगारों को ईएसआईसी के हॉस्पिटल और डिस्पेंसरी में चिकित्सा सुविधा मिल सकेगी और यह सामाजिक सुरक्षा मुहैया कराने के लिहाज़ से काफ़ी अहम होगा।

अच्छी बात है कि इन संहिताओं में इस तरह के प्रावधान हैं, लेकिन महिलाओं को समान वेतन के साथ ही रात में काम के लिए बुलाने की भी छूट दी गई है। बेशक इसमें महिलाओं की सहमति जरूरी होगी, लेकिन इसके बावजूद महिला शोषण के खतरे बढ़ जाएंगे। नयी श्रम संहिता में श्रमिकों को हड़ताल की अनुमति नहीं है, चाहे उन्हें नौकरी से निकाल दिया जाए, चाहे पगार कम कर दी जाए, वे अपने हक के लिए संगठित होकर खड़े नहीं हो पाएंगे।

गौरतलब है कि भारत में मज़दूर संगठनों ने लंबी लड़ाई के बाद कामगारों के हित में 44 क़ानून बनवाए थे। जिनमें काम के निर्धारित घंटे, श्रम संगठन बनाना, श्रमिकों के हितों के लिए सामूहिक तौर पर सौदेबाज़ी कर पाने की क्षमता वग़ैरह शामिल थे। लेकिन मोदी सरकार में इन सब ख़त्म कर दिया गया है। अहम बात यह है कि संहिता और क़ानून में फ़र्क होता है। क़ानून में सज़ा का प्रावधान होता है, जबकि संहिता में कंपनी/फ़ैक्टरी मालिकों पर जुर्माने का प्रावधान रखा गया है।

कुल मिलाकर श्रम सुधारों के नाम पर उद्योगपतियों की मनमानियों को आसान करने का रास्ता मोदी सरकार ने बनाया है।

अगर बिहार नहीं जीतते तो क्या दूसरे राज्यों में एसआईआर होता ?

एसआईआर (मतदाता विशेष गहन पुनरीक्षण) से अगर बिहार में सफलता नहीं मिलती तो क्या उसे दूसरे राज्यों में लागू किया जाता? 12 राज्यों में जिनमें से तीन बड़े राज्यों जहां भाजपा कभी सरकार नहीं बना पाई बंगाल, केरल, तमिलनाडु में इसे करवाने का मतलब साफ है कि बिहार में एनडीए की जीत का प्रमुख कारण एसआईआर था।

इसकी कामयाबी आप एक दूसरे पैमाने से भी देख सकते हैं। पूरा गोदी मीडिया और बीजेपी समर्थक वर्ग बिहार के चुनाव नतीजों के बाद से ही सबसे ज्यादा जोर इस बात पर दे रहा है कि कांग्रेस ने एसआईआर का मुद्दा गलत उठाया। इस पर इतना जोर नहीं देना चाहिए था। और अब भी कांग्रेस इसे छोड़ने को तैयार नहीं है। दिल्ली के रामलीला मैदान में इसी मुद्दे पर 14 दिसंबर को एक बड़ी रैली कर रही है।

मीडिया और दूसरे लोग इसे ऐसे कह रहे हैं जैसे वे कांग्रेस के हितैषी हों। जबकि सच्चाई यह है कि वे सब जानते हैं कि बिहार की जीत में एसआईआर का बड़ा रोल रहा। और जिसे नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी बड़े परिप्रेक्ष्य में वोट चोरी कह रहे हैं वह बिहार से पहले हरियाणा, महाराष्ट्र, कर्नाटक लोकसभा और कई जगह बीजेपी की जीत का मुख्य हथियार रही।

वोट चोरी का मतलब पूरी चुनावी प्रक्रिया को अपने कब्जे में ले लेना। अपने मनमाफिक चुनाव परिणाम निकालना। हरियाणा में साफ दिख रहा था बीजेपी हार रही है। बिहार में मुकाबला कांटे का और महागठबंधन की तरफ झुका दिख रहा था। मगर दोनों जगह अविश्वसनीय नतीजे आए।

जनता के मन में चुनाव प्रक्रिया पर सवाल पैदा न हों इसलिए यह बार-बार बताया जा रहा है कि राहुल गलत सवाल उठा रहे हैं। राहुल विरोधियों को तो खुश होना चाहिए कि राहुल गलत सवाल में फंस गए हैं। मगर वे खुश होने के बदले परेशान हैं कि राहुल यह सवाल क्यों नहीं छोड़ रहे।

दरअसल सच्चाई यही है कि वे भी जानते हैं कि ऐसा कोई और कारण नहीं है जो बिहार में भाजपा को इतनी बड़ी जीत दिला सकता। एसआईआर के अलावा जो और भी हैं वे सब इतने वाजिब नहीं हैं कि उन्हें बताया जाए। जीत का एक दूसरा बड़ा कारण डेढ़ करोड़ महिलाओं के खाते में दस-दस हजार रूपया डालना है।

इसे अगर जीत का प्रमुख कारण बताया जाएगा तो यह सवाल जरूर पैदा होगा कि इस तरह तो कोई भी सरकार कभी नहीं हारेगी। उसके पास तो पैसों की कोई कमी होती नहीं है। कोई और सरकार पन्द्रह और बीस हजार भी देगी। मगर समाज के एक वर्ग को और उसकी कीमत पूरे राज्य के लोगों को चुकाना पड़ेगी। बिहार में प्रति व्यक्ति कर्ज 24 हजार से ज्यादा हो गया। और यह बिहार का है। केन्द्र का प्रति व्यक्ति कर्ज लगभग 5 लाख रुपए है। यह बिहार के लोगों पर भी लागू होता है। और रेवड़ियां बांटोगे और कर्ज बढ़ेगा। और उन पर बढ़ेगा जिन्हें इन मुफ्त रेवड़ियों का कोई फायदा नहीं है।

तो यह जीत का कारण मीडिया और भाजपा बता नहीं सकते। जैसे रिश्वत देकर काम करवा के लौटा व्यक्ति यह नहीं बताता कि उसका गलत काम पैसे देकर हुआ है। वह यही बताता है कि काम ही सही था। इसलिए एसआईआर या सरकारी पैसे बांटने को जीत का कारण अगर कोई बताता है तो गोदी मीडिया और बीजेपी समर्थक नवभक्त उसका विरोध करते हैं या नेता अगर बड़ा है राहुल जैसा तो उसे सलाह देते हैं कि इसे नहीं उठाना चाहिए दूसरा मुद्दा उठाना चाहिए।

राहुल ने उठाया तो था। सबसे बड़ा मुद्दा। नौकरी का बेरोजगारी का। और वही चर्चा में था। मगर वह न चले इसलिए तो सरकारी खजाने से दस-दस हजार रुपए बांट दिए गए।

राहुल कांग्रेस महागठबंधन नौकरी देकर तनखा देने की बात कर रही थी। मगर एनडीए ने बिना कुछ किए धरे दस हजार रुपए दे दिए। महागठबंधन के मुद्दे को दबाने के लिए ही। लेकिन फिर भी इस पर पूरा विश्वास नहीं था इसलिए वोट काटने और वोट जोड़ने की एसआईआर तकनीक उपयोग में लाई गई।

लोकतंत्र बहुत खतरनाक मोड़ पर पहुंच गया है। राहुल की आलोचना करना आसान है मगर उनकी तरह लड़ना बहुत मुश्किल। राहुल से कितने सवाल हो रहे हैं। मगर बीजेपी से एक नहीं। वह एक सवाल कि बिहार जीत का कोई एक कारण तो बता दो ?

बीस साल से वहां नीतीश के साथ साझी सरकार। 11 साल से केन्द्र में मोदी सरकार। मगर बिहार के लिए क्या किया ? कोई रोजगार नौकरी ? कोई जवाब नहीं। बस प्रचार माध्यम साथ हैं तो उल्टे राहुल से सवाल। मगर फिर भी राहुल को पथ भ्रमित (विचलित) नहीं कर पाते हैं। राहुल वोट चोरी के अपने मुद्दे पर कायम हैं। इसलिए दिल्ली रामलीला मैदान से एक बड़ी रैली के जरिए वोट चोरी के खिलाफ देशव्यापी आंदोलन की शुरूआत की जा रही है।

वोट चोरी अगर नहीं रुकेगी तो पूरी चुनावी प्रक्रिया ही इकतरफा हो जाएगी। और फिर कोई चुनाव नहीं जीत सकता। अब एक और सबसे जरूरी पहलू पर जिस पर कोई बात नहीं हो रही है। लोगों को कागजी काम में उलझाना। कोई भी सरकार अपनी जनता को अनावश्यक रूप से परेशान नहीं करती है। मगर प्रधानमंत्री मोदी इस पर विश्वास करते हैं कि जनता को रात-दिन बेकार के कामों उलझाए रखो ताकि वह अपने जरूरी सवालों को भूली रहे।

नोटबंदी इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। पूरा देश इसमें महीनों उलझा रहा। मिला क्या कुछ नहीं। प्रधानमंत्री मोदी ने जो बड़े-बड़े दावे किए कि भ्रष्टाचार, काला धन, आतंकवाद, नकली नोट खत्म हो जाएंगे वह कुछ नहीं हुआ। इसी तरह तीन कृषि कानून लाए थे। किसान परेशान हो गया। साल से ज्यादा सड़क पर बैठा रहा। आन्दोलन किया। कानून वापस ले लिए। कोरोना में ताली-थाली बजवाकर कोरोना भगाने के दावे कर दिए। नागरिकता संशोधन कानून ले आए। ऐसे कामों की बहुत लंबी लिस्ट है जिसमें जनता को उलझाए रखा।

अब एक नया शिगुफा छेड़ा है आधार फिर से बनेगा। जैसे एसआईआर में पहले बिहार के लोग और आज 12 प्रदेशों के लोग परेशान घूम रहे हैं वैसे ही इसके बाद आधार के लिए लोग घूमेंगे। आपको याद है मोबाइल को आधार से जोड़ने की घोषणा की थी। और जब लोगों ने भागदौड़ करके यह काम करवा लिया तो कहा गया कि जरूरी नहीं था। कल को पेन कार्ड आपके बैंक खाते पासपोर्ट किसी को भी या सबको फिर से बनाने की बात कर सकते हैं। उद्देश्य एक ही है। सरकार पर सवाल नहीं उठा पाओ। नौकरी रोजगार भूल जाओ। सरकारी चिकित्सा शिक्षा जो पहले सबको मिलती थी उसकी बात मत करो। गैर जरूरी सरकारी कामों में उलझे रहो।

एसआईआर करवाने वाली जनता तो परेशान है ही। फार्म में 2003 की वोटर लिस्ट से मिलान मांगा है। माता-पिता के वोटर कार्ड का नंबर, दादा-दादी तक का। इस पर सुनवाई में सुप्रीम कोर्ट ने और तो कुछ किया नहीं मगर यह जरूर कह दिया कि यह फार्म हम भी नहीं भर सकते हैं। और प्रधानमंत्री मोदी क्या खुद बिना किसी की मदद के यह फार्म भर सकते हैं ? और एक इस पूरी कवायद का सबसे दुखद और अमानवीय पहलू! इस काम को जिन सरकारी कर्मचारियों (बीएलओ) से करवाया जा रहा है उन पर भारी दबाव। जिसे न सह पाने के कारण उनके मरने और आत्महत्या की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं।

इससे पहले इतना ज्यादा शारीरिक और मानसिक दोनों श्रम वाला काम सरकारी कर्मचारियों पर आज तक कभी नहीं लादा गया। यह क्रूरता की हद है। बीएलओ मर रहे हैं। मगर सरकार को कोई मतलब नहीं।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार है)

शकील अख्तर

जनता के मन में चुनाव प्रक्रिया पर सवाल पैदा न हों इसलिए यह बार-बार बताया जा रहा है कि राहुल गलत सवाल उठा रहे हैं। राहुल विरोधियों को तो खुश होना चाहिए कि राहुल गलत सवाल में फंस गए हैं। मगर वे खुश होने के बदले परेशान हैं कि राहुल यह सवाल क्यों नहीं छोड़ रहे। दरअसल सच्चाई यही है कि वे भी जानते हैं कि ऐसा कोई और कारण नहीं है जो बिहार में भाजपा को इतनी बड़ी जीत दिला सकता।

इंडिया ब्लॉक को निष्पक्ष चुनाव के लिए संघर्ष करते हुए आत्मनिरीक्षण करना होगा

■ नीलोत्पल बसु

बिहार विधानसभा चुनाव हमारे देश के चुनावी इतिहास में एक अहम मोड़ है। 25 जून को घोषित मतदाता सूची का विशेष गहन पुनरीक्षण (स्पेशल इंटेंसिवरिविज़न) (एसआईआर) की पृष्ठभूमि में हुए इस चुनाव में, वयस्क मताधिकार के लिए नए बुनियादी नियम बनाए गए।

भारत का संविधान बनाने वाली संविधान सभा में हुई बहसों में एक ऐसे लोकतंत्र की कल्पना की गई थी जो 'लोगों द्वारा, लोगों के लिए और लोगों का' हो। चुनावी लोकतंत्र इसकी नींव थी। यह आज़ादी की लड़ाई की विरासत पर आधारित था जिसने नागरिक की भूमिका को इसकी नींव बनाया। हर भारतीय नागरिक को एक वोट का अधिकार था, चाहे उसकी जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति और मूल कुछ भी हो। इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए, भारतीय चुनाव आयोग (ईसीआई) को एक सच में ताकतवर और आज़ाद संवैधानिक संस्था के तौर पर अधिकार दिया गया था।

ईसीआई से उम्मीद थी कि वह दो आसान सिद्धांतों के ज़रिए नागरिकों को भारतीय लोकतंत्र और उसकी राजनीतिक प्रणाली का भविष्य तय करने में मदद करेगा। पहला, मतदाता सूची ईसीआई की मशीनरी खुद बनाएगी, तथा इसे राजनीतिक पार्टियों या सरकारों की मर्ज़ी पर नहीं छोड़ा जाएगा। इसलिए, अंतिम मतदाता सूची को प्रकाशित करना ईसीआई की ज़िम्मेदारी थी और किसी एक नागरिक पर इसका बोझ नहीं डाला गया। दूसरा, हालांकि यह बताया गया था कि भारतीय नागरिक मतदाता सूची में मतदाता के तौर पर दिखेंगे, लेकिन ईसीआई को नागरिकता तय करने के काम से बाहर रखा गया था। अगर कोई विवाद होता, तो उसे होम मिनिस्ट्री से सलाह करके सुलझाया जाता।

पहली बार, बिहार में एसआईआर इन दो बुनियादी बातों से भटक गया। एसआईआर में यह माना गया था कि मतदाताओं को एक फॉर्म भरकर मतदाता सूची में अपनी नामदर्ज पक्का करना होगा और अगर कोई विवाद नहीं भी होता, तो भी उन्हें वोट देने की योग्यता के लिए ईसीआई द्वारा बताए गए दस्तावेज दिखाने होंगे। इससे दूसरा सिद्धांत भी जुड़ गया क्योंकि ईसीआई द्वारा बताए गए दस्तावेज अजीब तरह से नेशनल रजिस्टर ऑफ़ सिटिज़नशिप (एनसीआर) की ज़रूरतों से मिलते-जुलते थे, जैसा कि नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) में सोचा गया था।

इससे, नागरिकता पर पूरा विवाद, जो पहले भड़क गया था और मुश्किल सवालों की वजह से रुका हुआ था, पिछले दरवाज़े से फिर से शुरू हो रहा था। इसका बिहार में भारी विरोध हुआ और पूरे देश में यह बहस छिड़ गई। मुख्य समस्या यह थी कि नागरिकता के लिए आधिकारिक तौर पर कोई एक दस्तावेज नहीं था। प्रस्तावित एसआईआर अंदर ही अंदर बंटवारे के सदमे को फिर से जगा रहा था। पूछने पर, ईसीआई नागरिकता और मतदाता सूची को फाइनल करने के बीच संबंध से इनकार कर रहा था। लेकिन असल में, बदला हुआ फोकस बिल्कुल साफ था। इसलिए, इस काम के कुछ समय बाद, यह साफ़ हो गया कि यह वोटर रोल की गलतियों को ठीक करने का काम नहीं था, बल्कि बड़े पैमाने पर लोगों को बाहर करने और वोटरों को अधिकार से वंचित करने का काम था। ड्राफ़्ट मतदाता सूची और उसके फ़ाइनल फ़ॉर्म ने विवाद को और बढ़ा दिया है और वोटरों की संख्या में कमी साफ़ दिख रही है। एसआईआर प्रक्रिया के संवैधानिक आधार अभी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय नहीं किए गए हैं। यह साफ़ है कि इस प्रक्रिया से वोटरों के एक बड़े हिस्से को बहुत ज़्यादा सदमा लगा। बिहार में, जहां प्रवासी मज़दूरों का अनुपात ज़्यादा है और समय बहुत कम था, ऐसा होना ही था। मतदाता सूची में महिला वोटरों के नाम हटाने के अनुपात में भी काफ़ी बढ़ोतरी देखी गई, साथ ही सीमावर्ती ज़िलों में अल्पसंख्यक धर्मों के मतदाताओं के नाम भी बड़ी संख्या में हटाये गये।

एसआईआर के साथ-साथ, ईसीआई की भूमिका पर सवाल ने भी बड़ी चिंताएं खड़ी कीं। ईसीआई के काम से यह साफ़ हो गया कि नाकाबिलियत और पारदर्शिता की कमी के अलावा, सत्तारूढ़ पार्टी को फ़ायदा पहुंचाने के लिए एक साफ़ भेदभाव था। यह उस तरीके से साफ़ था जिस तरह ईसीआई ने चुनाव आचार संहिता को मॉनिटर किया। भाजपा-जद(यू)सरकार ने चुनावों की घोषणा से ठीक पहले मुख्यमंत्री महिला रोज़गार योजना शुरू की, जिसमें एक करोड़ से ज़्यादा महिलाओं को 10,000 रुपये दिए गए। यह बड़े पैमाने पर सीधा फ़ायदा पहुंचाना था, जिसमें 14,000 करोड़ रुपये तुरंत दिए गए, जो चुनाव के बहुत करीब था और मतदाताओं की पसंद को इस नए तरह के 'सरकारी ग्राहकवाद' से बचाने में नाकाम रहा। यह पहले से बिल्कुल अलग था जब गरीब मतदाता अलग-अलग पार्टियों के समर्थक थे, और वे पूरी राजनीतिक पसंद से उम्मीदवार तय करते थे।

इसके अलावा, 125 यूनिट तक मुफ्त बिजली, सामाजिक सुरक्षा पेंशन को तीन गुना करना, और एक करोड़ नौकरियां बनाना भी सत्ताधारी गठबंधन के वायदे थे। बेशक, ऐसे वायदे प्रधानमंत्री मोदी की 'रेवड़ी' पॉलिटिक्स और भविष्य की आर्थिक स्थिति पर इसके असर के बारे में कही गई बातों के उलट थे। पहले से ही, ऐसी घोषणाओं और चुनाव होने के बीच एक सही अंतर रखने के लिए चुनाव आचार संहिता को फिर से बनाने पर सवाल उठ रहे हैं। यह साफ़ है कि असल में ऐसी कोशिशों ने लोगों की लंबे समय की भलाई से ध्यान हटाया, जबकि उनका मकसद लोगों की सोच को बेहतर बनाना था, खासकर उन लोगों की जो सबसे ज़्यादा परेशान थे।

चुनाव के नतीजों से एक अजीब बात का पता चला है कि महिला वोटरों की संख्या कम हुई है, लेकिन उन्होंने तुलना में कहीं ज़्यादा संख्या में वोट दिये और आखिरी नतीजे पर ज़्यादा असर डाला। यह रूझान पहले भी दिख रहा था, लेकिन एसआईआर और ज़्यादा संख्या में पुरुष प्रवासी मज़दूरों की गैर-मौजूदगी के साथ, यह और बढ़ गया है। विकास के असली मुद्दों से दूरी और भी साफ़ है, क्योंकि बिहार मज़दूरी, आय, रोज़गार, शिक्षा, स्वास्थ्य और दूसरे सामाजिक संकेतकों के मामले में ज़्यादातर बड़े भारतीय राज्यों से पीछे होने के बावजूद, कॉर्पोरेट मीडिया नतीजों और सत्तारूढ़ गठबंधन की बड़ी जीत को समझाने के लिए यह दावा कर रहा था कि यह नीतीश कुमार की सरकार के विकास के रिकॉर्ड की वजह से था।

सच तो यह है कि सत्तारूढ़ गठबंधन ने जाति-समुदाय के असर को मज़बूत किया था, जो एसआईआर से पैदा हुई असुरक्षा की भावना से परेशान थे और जो कमज़ोर लोगों के बड़े हिस्से में और बढ़ गया था। अमित शाह की खासियत कहे जाने वाले 'वोट मैनेजमेंट' की वजह से छोटी पार्टियां और निर्दलीय उम्मीदवार बुरी तरह हार गए, और उन्हें जो वोट मिल सकते थे, वे पूरी तरह से सत्तारूढ़ गठबंधन की तरफ चले गए हैं। कुछ छोटी पार्टियां, हालांकि सीटों के मामले में कोई खास असर नहीं डाल पाईं, लेकिन उनके वोट प्रतिशत ने विपक्ष पर बुरा असर डाला है। प्रशांत किशोर की जन सुराज पार्टी या सीमांचल में एआईएमआईएम का हाई-प्रोफाइल चुनाव प्रचार इसके उदाहरण हैं।

सब कुछ कहने और करने के बाद, यह भी सत्य है कि इंडिया ब्लॉक के साथ जुड़ी पार्टियों के लिए भी बहुत कुछ सोचने की बात है। हालांकि इसमें कोई शक नहीं है कि कई ऐसे मुद्दे थे जिन्होंने लोगों की ज़िंदगी और रोजी-रोटी पर असर डाला, लेकिन विपक्ष उन पर जनता के विचार को स्वरूप देने में नाकाम रहा, ताकि सत्तारूढ़ गठबंधन को पीछे धकेला जा सके। ऐसे कई कारक हैं जिनकी और गहराई से अध्ययन करने और मिलकर हल करने की ज़रूरत है। माकपा समेत वाम पार्टियों ने बहुत मेहनत की थी और उन्हें काफी वोट मिले थे। लेकिन इसका असर उनके निर्वाचन क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व की संख्या में नहीं दिखा। भविष्य लोगों के सामने आने वाले मुद्दों पर उनके संघर्षों को फिर से मज़बूत करने और सरकारी मिलीभगत और कुल मिलाकर नव-फासीवादी तरीकों से हिंदुत्व-कॉर्पोरेट के हमले के खिलाफ़ लगातार राजनीतिक अभियान चलाने में है। एक निष्पक्ष चुनाव प्रणाली और एक न्यायपूर्ण लोकतंत्र के लिए लड़ाई ऐसे ही लगातार संघर्ष की मांग करती है।

सब कुछ कहने और करने के बाद, यह भी सत्य है कि इंडिया ब्लॉक के साथ जुड़ी पार्टियों के लिए भी बहुत कुछ सोचने की बात है। हालांकि इसमें कोई शक नहीं है कि कई ऐसे मुद्दे थे जिन्होंने लोगों की ज़िंदगी और रोजी-रोटी पर असर डाला, लेकिन विपक्ष उन पर जनता के विचार को स्वरूप देने में नाकाम रहा, ताकि सत्तारूढ़ गठबंधन को पीछे धकेला जा सके।

आपके पत्र

भारत-ऑस्ट्रेलिया-कनाडा त्रिकोण, अमेरिकी चिंता की बड़ी लकीरें

ग्यारहवें जी-20 शिखर सम्मेलन (जोहान्सबर्ग, 2025) के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ऑस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री एंथनी अल्बनीज़ और कनाडा के प्रधानमंत्री मार्क कार्नी के साथ मिलकर ऑस्ट्रेलिया-कनाडा-इंडिया टेक्नालॉजी इनोवेशन पार्टनरशिप की घोषणा की। यह साझेदारी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, स्वच्छ ऊर्जा, महत्वपूर्ण खनिज और आपूर्ति श्रृंखलाओं के विविधीकरण जैसे क्षेत्रों पर केंद्रित है। इन तीनों देशों के बीच यह नई त्रिपक्षीय तकनीकी संरचना न केवल आर्थिक अवसरों का विस्तार करती है, बल्कि यह अमेरिका के नेतृत्व वाले वैश्विक तकनीकी गठबंधनों की एक वैकल्पिक लोकतांत्रिक धुरी प्रस्तुत करती है। इस गठबंधन का राजनीतिक महत्व और बढ़ जाता है क्योंकि ऑस्ट्रेलिया और कनाडा दोनों फाइव आइज़ खुफिया नेटवर्क के अभिन्न अंग हैं, जिससे भारत के साथ उनकी रणनीतिक तालमेल केवल तकनीक या व्यापार तक सीमित नहीं रह जाता, बल्कि सुरक्षा-नीति, खुफिया आदान-प्रदान और भू-राजनीतिक समन्वय तक विस्तृत हो जाता है। इसके समानांतर चीन-रूस ने भी 2025 में अपनी 'समग्र रणनीतिक साझेदारी' को और सुदृढ़ करने की घोषणा की, जो अमेरिका की 'डबल कंटेनमेंट' नीति—यानी चीन और रूस दोनों को एक साथ रोकने की रणनीति—के प्रति तीखा प्रतिउत्तर है। दोनों देशों ने एक संयुक्त बयान जारी कर यह स्पष्ट कर दिया कि अमेरिका और उसके सहयोगी जिस प्रकार उनके चारों ओर 'शत्रु-शक्ति घेरे' बना रहे हैं, वह न केवल अस्वीकार्य है बल्कि उनकी संप्रभुता के लिए सीधी चुनौती भी है। चीन-रूस का गठबंधन केवल कूटनीतिक वक्तव्यों तक सीमित नहीं रहा है; ऊर्जा, डिजिटल अवसंरचना, अंतरिक्ष-सहयोग, आर्कटिक लॉजिस्टिक्स, रक्षा प्लेटफॉर्म, साइबर-सुरक्षा और यू एआई-शासन जैसे क्षेत्रों में इनके बीच व्यावहारिक सहयोग तेजी से बढ़ रहा है। रूस की ऊर्जा निर्भरता और चीन की आर्थिक व तकनीकी क्षमता एक दूसरे के पूरक के रूप में उभर रही है एक ऐसी धुरी के रूप में जो अमेरिकी प्रभाव को चुनौती देने के लिए सामरिक रूप से पूरी तरह संरेखित है। यदि इन दोनों गतिशील प्रक्रियाओं एक ओर भारत-ऑस्ट्रेलिया-कनाडा त्रिकोण और दूसरी ओर चीन-रूस की निकटता को एक साथ देखा जाए, तो स्पष्ट होता है कि दुनिया एक नए महाध्रुवीय क्रम में प्रवेश कर रही है, जहां अमेरिका की परंपरागत सर्वोच्चता को दो दिशाओं से चुनौती मिल रही है। पहली चुनौती लोकतांत्रिक, लेकिन अमेरिका-वर्चस्व से स्वतंत्र उभरते गठजोड़ से आ रही है, जिसकी अगुआई भारत कर रहा है। दूसरी चुनौती एक प्रतिद्वंद्वी, दृढ़ और साझा वैचारिक धुरी—चीन और रूस—से आ रही है, जिसका उद्देश्य अमेरिकी प्रभुत्व का विकल्प तैयार करना है। भारत-ऑस्ट्रेलिया-कनाडा का त्रिगुट तकनीक, खनिज, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, समुद्री सुरक्षा, इंडो-पैसिफिक स्थिरता और सामरिक पारदर्शिता के क्षेत्र में ऐसा नेटवर्क तैयार कर रहा है जिसे अमेरिका आसानी से नियंत्रित नहीं कर सकता।

इन दोनों उभरते ब्लॉकों को मिलाकर देखने पर अमेरिका की रणनीतिक चिंताएं कई गुना बढ़ जाती हैं। एक ओर भारत-ऑस्ट्रेलिया-कनाडा त्रिकोण अमेरिका-प्रधान गठबंधनों के विकल्प के रूप में उभर रहा है, जबकि दूसरी ओर चीन-रूस अमेरिका के विरुद्ध एक वैचारिक और सामरिक मोर्चे के रूप में सक्रिय हैं। इससे अमेरिका के लिए दोहरी चुनौती पैदा हो गई है- एक प्रतिस्पर्धी लोकतांत्रिक नेटवर्क और दूसरा प्रतिस्पर्धी अधिनायकवादी धुरी—दोनों उसके प्रभाव क्षेत्र को सीमित कर रहे हैं।

-संजीव ठाकुर

ललित सुरजन की कलम से

यात्रा वृत्तांत :दक्षिण अफ्रीका में भारतवंशी

दक्षिण अफ्रीका में इस तरह भारतवंशियों की सात-आठ पीढ़ियां बीत चुकी हैं। इनमें बिहार और पूर्वी उत्तरप्रदेश के अलावा तमिलनाडु से लाए गए व्यक्तियों की ही संख्या अधिक थी। हमारी यात्रा के दौरान अनूप सिंह पथ प्रदर्शक के रूप में हमारे साथ थे। अनूप सिंह के लकड़दादा रीगु शिवचंद 1892 में यहां लाए गए थे। शिवचंद का पैतृक निवास भोजपुर इलाके के किसी गांव में है। गन्ने के खेत में काम करते हुए दो तीन साल बाद उन्होंने जिस युवती से विवाह किया वह भी उसी इलाके से बिना परिवार अकेली लाई गई थी। आज शिवचंद की आठवीं-नवीं पीढ़ी तक आकर उनके खानदान के लगभग नौ सौ सदस्य दक्षिण अफ्रीका में आबाद हैं। अनूप सिंह थोड़ा गर्व से बताते हैं कि महात्मा गांधी और शिवचंद लगभग एक ही समय में दक्षिण अफ्रीका आए थे। उनके ही परिवार के एक अत्यंत सम्मानित व्यक्ति मेवा रामगोबिन से इला गांधी का विवाह हुआ था। डरबन से पीटर मॉरित्जबर्ग जाते समय बस में अनूपसिंह ने हमें एक पुस्तक दिखलाई जिसमें उनके परिवार का वंशवृक्ष और आद्योपांत इतिहास अंकित था। शिवचंद का यह बडा कुनबा अब दो साल में एक बार पारिवारिक मिलन का आयोजन करता है, ताकि सब लोग एक दूसरे से जान पहचान और संपर्क बनाए रख सकें।

(देशबन्धु में 23 अगस्त 2012 को प्रकाशित)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2012/08/blog-post_25.html

पावन प्रसंग

जो देता है सो पाता है

पाने के लिए कुछ छोड़ना पड़ता है और कुछ देने की बात सामने आते ही मन निष्ठुर बन जाता है। मुंह मोड़ लेता है, ऐसे व्यक्ति उपहास्यास्पद बनते हैं और खाली हाथ निराश लौटते हैं। किसान जानता है कि फसल काटने की योजना बनाते समय उसे घर में जमा किया हुआ बीज खर्च कर खेत में डालने की तैयारी करनी चाहिए। जो बीज बोने का खर्च और श्रम सहन न करें, किंतु कोठे भर देने जितनी फसल पाने के मनसूबे बांधता रहे, उसकी इच्छा पूरी होना असंभव है। विद्यार्थी पढ़कर अफसर बन जाते हैं, पर इसके लिए उन्हें 14 वर्ष अनवरत श्रम करके स्नातकोत्तर परीक्षा प्राप्त करनी पड़ती है। फीस और किताब, कापी का खर्च सहन करना पड़ता है। गणेशजी का वरदान पाकर बिना कुछ किए विद्वान और पदाधिकारी बनने के स्वप्न इस जमाने में पूरे हो सकेंगे, ऐसी आशा किसी को भी नहीं करनी चाहिए। पेट साफ होने के उपरांत ही भूख लगती और स्वादिष्ट व्यंजन खाने का अवसर मिलता है। जो मल त्याग नहीं करना चाहता उसे नया भोजन प्राप्त करने की भी आशा नहीं करनी चाहिए। सांस छोड़ने के बाद ही नई प्राणवायु मिलती है जो सांस बंद किए बैठा है, उसके श्वांस-प्रश्वांस कैसे चलेंगे।

यह संसार दर्पण की तरह है, इसमें अपना ही चेहरा हर किसी के चेहरे में झांकता हुआ देख सकते हैं। हम जैसे भी भले-बुरे जो कुछ भी हैं, वैसी ही मुखाकृति दूसरों की भी दिखा देगी। यहां क्रिया की प्रतिक्रिया होती रहती है। कुएं या गुंबज की तरह प्रतिध्वनि सुनने को मिलती रहती है। जैसा भी कुछ हम अपने मुंह से बोलते हैं, उलटकर वैसी ही आवाज सुनते हैं। हमारा चिंतन एवं व्यवहार यदि यह है कि हमें किसी के लिए त्याग न करना पड़े, दूसरे ही सदा हमारी सेवा-सहायता के लिए दौड़े आएं। दूसरे सदा सद्भावना व्यक्त करते रहें और हम अपनी उपेक्षा-वृत्ति पर ही कायम रहें तो समझना चाहिए कि यह मनोरथ कभी पूरा न हो सकेगा। रबड़ की गेंद जिस दिशा में जितने जोर से मारी जाती है, वहां से वह ठीक उलटी दिशा में उतने ही जोर से वापस आती है। देखना यह है कि हम दूसरों के साथ कैसा रवैया अपनाते और कैसा व्यवहार करते हैं ? उसकी प्रतिक्रिया और व्यवहार जब दूसरों के साथ टकराते हैं, तो ठीक वैसी ही प्रतिध्वनि प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है।

घाटे का सौदा नहीं है। सत्पात्रों के हाथ हमारी सेवा, सद्भावना एवं सहायता पहुंचती तो निश्चित रूप से वह अनेक गुनी होकर वापस लौटती है। उदारतापूर्वक यदि हम अपने को खाली करते रहेंगे तो बदले में ईश्वरीय व्यवस्था हमें उसी अनुपात से भर देगी। खाली तालाब चाहे उथला हो या गहरा वर्षा आते ही लबालब भर जाता है।

युग निर्माण योजना

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770

ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

चिंतन

भारत को विश्व गुरु बनाने के लिए लेना होगा संकल्प

ज्ञान के मामले में प्राचीन भारत विश्व गुरु था। दुनियाभर से लोग हमारे यहां ज्ञान अर्जित करने आते थे। इसीलिए भारत को विश्वगुरु भी कहा गया, लेकिन अनेक आक्रांताओं को महान भारत का यह प्रभाव रास नहीं आया। हजारों साल तक आक्रमणकारियों के पैरों तले रौंदा गया। हमें गुलामी में जीना पड़ा। धार्मिक स्थलों को नष्ट किया गया। जबरदस्ती धर्मांतरण हुए। हमारे संस्कार, संस्कृति को नष्ट करने पर भरपूर प्रयास किए गए। एक के बाद एक लूट की वारदातें हुई। इसके बाद अंग्रेजों ने 200 साल तक राज किया। इस दौरान उन्होंने भारतीय संसाधनों का जमकर दोहन किया, वहीं नागरिकों का जमकर शोषण किया। अंग्रेजों ने खूब लूटा। ऑक्सफैम इंटरनेशनल की एक रिपोर्ट में इसका खुलासा हुआ कि ब्रिटेन ने 1765 से 1900 के बीच एक शताब्दी से अधिक समय के औपनिवेशिक काल के दौरान भारत से 64,820 अरब अमेरिकी डॉलर की रकम निकाली और इसमें से 33,800 अरब डॉलर देश के सबसे अमीर 10 प्रतिशत लोगों के पास गए। यह आंकड़ा सिर्फ 135 साल में निकाले गए पैसों का है और केवल वही है, जो रिकार्ड में दर्ज है। इसके अलावा बड़ी रकम है जो कहीं लिखी ही नहीं की गई, लेकिन अब हालात बदल रहे हैं। आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत ने सही कहा है कि हम विश्व गुरु बन सकते हैं। वो वैभव के दिन नहीं रहे, लेकिन आक्रमण के दिन भी चले गए। अब हम राममंदिर पर झंडा फहरा रहे हैं। अंतरिक्ष में नई छलांग लगा रहे हैं। हम दुनिया की सबसे तेज गति से बढ़ रही अर्थव्यवस्था हैं। अब एक बार फिर हम विश्व गुरु बनने की ओर बढ़ रहे हैं। विश्व गुरु बनने की चर्चा ज्ञान, विज्ञान, और संस्कृति के आधार पर होती है। इसका लक्ष्य ज्ञान का प्रकाश फैलाना, आधुनिकता के साथ प्राचीन मूल्यों को जोड़ना और 'वसुधैव कुटुंबकम' के सिद्धांत पर आधारित विश्व का मार्गदर्शन करना है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार, अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देना, कौशल विकास, उद्यमिता, और सामाजिक समरसता जैसे क्षेत्रों में काम करने की आवश्यकता है। कुछ लोग मानते हैं कि भारत पहले से ही विश्व गुरु था और यह प्रक्रिया केवल दोबारा उसे प्राप्त करने की है, जबकि कुछ का मानना है कि इसे संकल्प के रूप में साकार करने की आवश्यकता है। यह सही है कि मत अलग- अलग हो सकते हैं, लेकिन पूरे देश का लक्ष्य एक है। विश्व गुरु बनने से पहले सबसे ज्यादा जरूरी है कि शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया जाए। उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा तक पहुंच बढ़ाना और शिक्षा प्रणाली में सुधार करना बहुत जरूरी है। सरकार ने नई शिक्षा नीति से आगाज किया है, लेकिन इसका लाभ सबको मिले, इसके लिए प्रयास करने की जरूरत है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अन्य क्षेत्रों में अनुसंधान और नवाचार को प्रोत्साहित करना। नवाचार से ही दुनिया में विकास का डंका बजाया जा सकता है। दुनिया में अपनी अलग छाप छोड़ने के लिए सामाजिक समरसता को बढ़ावा देना और किसी भी प्रकार के भेदभाव को खत्म करना होगा। यह विकास में सबसे बड़ी बाधा है। हम एक मिसाल कायम कर सकते हैं कि कैसे आधुनिकता की ओर बढ़ते हुए भी खुद को बेतुके पश्चिमीकरण से बचाया जा सकता है। अगर हम ऐसा करने में कामयाब रहे तो वो दिन दूर नहीं, जब पूरी दुनिया में हमारा डंका बजेगा और एक बार फिर हम विश्व गुरु होंगे।

जन्म शताब्दी वर्ष
अजय कुमार श्रॉफ

प्रेम व करुणा के अवतार थे सत्य साई बाबा

श्री सत्य साई बाबा ने 14 वर्ष की आयु में ही 'सबसे प्रेम, सबकी सेवा' के अपने मिशन की शुरुआत कर दी थी। श्री सत्य साई संजीवनी अस्पताल की आधारशिला 23 नवंबर 2011 को रखी गई थी। इन 13 वर्षों में पूरे भारत में 4 बाल हृदय अस्पताल, 6 मातृ एवं शिशु अस्पताल, नर्सिंग कॉलेज, स्वास्थ्य सेवा में उत्कृष्टता केंद्र, अनुसंधान एवं नवाचार केंद्र स्थापित किए गए हैं। फिजी, श्रीलंका और नाइजीरिया में भी कई केंद्र स्थापित हैं। बाबा द्वारा की गई इतनी बड़ी परोपकारी सेवा पहले कभी नहीं देखी गई। वे कहा करते थे, मेरा जीवन ही मेरा संदेश' है। वर्षों के शिक्षा और प्रचार के बाद उन्होंने इस संदेश को संशोधित करके 'आपका जीवन ही मेरा संदेश है' कर दिया।

श्री सत्य साई बाबा का यह जन्म शताब्दी वर्ष है। उनका जन्म 23 नवंबर 1926 को वेंकप्पा राजू और ईश्वरम्मा के घर पुट्टपर्थी नामक गांव में हुआ था। 14 वर्ष की आयु में ही उन्होंने ' सबसे प्रेम, सबकी सेवा' के अपने मिशन की शुरुआत कर दी थी। सत्य साईं बाबा का असली नाम रत्नाकरम सत्यनारायण राजू था। उनके जीवन और करिश्मों को देखकर उनके भक्तों का मानना है कि वे शिरडी साईं बाबा के दूसरे अवतार थे। बताया जाता है कि साल 1940 में जब सत्यनारायण राजू 14 साल के थे, उन्हें एक बिच्छू ने काट लिया। इसके बाद वे कई घंटे बेहोश रहे। जब होश आया, तो उनकी जिंदगी पूरी तरह बदल चुकी थी। अचानक वे संस्कृत में बोलने लगे, जो उन्होंने कभी पढ़ा या सुना भी नहीं था। इसके कुछ समय बाद उन्होंने अपने परिवार को चौंकाते हुए हवा में मिठाई और फूल निकाल कर दिखाए। उनके पिता इस पर बहुत गुस्सा हुए और उन्होंने सीधे सच पूछ लिया, तभी सत्य साईं ने कहा कि वे शिरडी साईं बाबा के अवतार हैं।

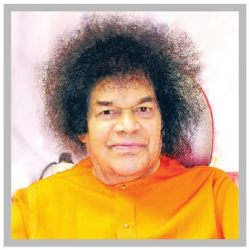

श्री सत्य साई संजीवनी अस्पताल की आधारशिला 24 अप्रैल 2011 को भगवान बाबा की महासमाधि के बाद 23 नवंबर 2011 को रखी गई थी। जैसा कि श्री सत्य साई स्वास्थ्य एवं शिक्षा ट्रस्ट के अध्यक्ष डॉ. सी. श्रीनिवास दोहराते हैं कि यह सत्य साई बाबा की दिव्य इच्छा ही थी जो अंततः उन्हें और सत्य साई संजीवनी को देश के इस हिस्से में ले आई। फिर भी, स्थान चुनने से लेकर विशेषज्ञता एवं हर चरण में बाबा ने उनका मार्गदर्शन किया। इन 13 वर्षों में पूरे भारत में 4 बाल हृदय अस्पताल, 6 मातृ एवं शिशु अस्पताल, नर्सिंग कॉलेज, स्वास्थ्य सेवा में उत्कृष्टता केंद्र, अनुसंधान एवं नवाचार केंद्र स्थापित किए गए हैं। साथ ही फिजी, श्रीलंका और नाइजीरिया में भी कई केंद्र स्थापित किए गए हैं। यह जानकर खुशी होती है कि इस अस्पतालों में लगभग 4 लाख मरीज़ परामर्श के लिए आ चुके हैं और 38,000 से ज़्यादा सर्जरी पूरी तरह निःशुल्क सर्जरी की जा चुकी हैं। सत्य साई संजीवनी दुनिया भर में छत्तीसगढ़ की पहचान बन गयी है। इसने राज्य की पूरी तस्वीर ही बदल दी है। भारत के समस्त राज्यों के बाल हृदय रोगी इलाज के लिए राजधानी और महानगरों की बजाय रायपुर आ रहे हैं। यह 'उलटा रुझान' अपने आप में एक अद्भुत उपलब्धि है। डॉ. सी. श्रीनिवास का कहना है कि इस अस्पताल से स्वस्थ हुए बच्चे हृदय के आकार के अस्पताल को देखते ही उछल पड़ते हैं और खुशी से ' यूरेका... यूरेका ' कहते हैं, तो मुझे बहुत संतुष्टि मिलती है । यही वह अस्पताल है जहां मुझे दूसरा जीवन यानी संजीवनी मिली थी। इस कथन का कोई पर्याय नहीं है। श्री सत्य साई संजीवनी अस्पताल में दिन की शुरुआत दैनिक प्रार्थना से होती है और जीवन का उपहार के साथ समाप्त होती है। दैनिक प्रार्थना में, हम सभी मरीजों की लंबी आयु और शीघ्र छुट्टी के लिए प्रार्थना करते हैं। हमारे ऑपरेशन थिएटरों में, हमने लिखा है कि 'साई ही सर्जन' हैं। इसका तात्पर्य है कि हम सब कुछ अपने पूज्य भगवान श्री सत्य साई बाबा को समर्पण करते हैं। हमारी सर्जरी का सफलता दर वाकई सराहनीय है और इस का श्रेय हमारी मेडिकल नर्सिंग और सर्जिकल टीमों के अथक और दृढ़ प्रयास को जाता है। अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ डॉ. सी राजेश्वरी का नाम उल्लेख करना अत्यंत

प्रासंगिक होगा। वे भगवान बाबा के आह्वान पर अमेरिका में अपनी प्रतिष्ठित नौकरी और शानदार करियर छोड़कर भारत आईं। वास्तव में, उन्होंने निःशुल्क स्वास्थ्य सेवा की क्रांतिकारी अवधारणा की नींव रखी। जैसा कि कहा जाता है, ' इतिहास खुद को दोहराता है '। डॉ. श्रीनिवास अपनी माताश्री डॉ. सी राजेश्वरी के निःशुल्क सेवा मिशन को आगे बढ़ा रहे हैं। सत्य साई संजीवनी महज एक अस्पताल नहीं बल्कि आरोग्य का मंदिर है। यहां कोई लेन-देन नहीं होता, केवल सकारात्मक परिवर्तन होता है। बिना कैश काउंटर वाले अस्पताल का जादुई टैग दिल के मरीजों की सबसे पहली पसंद है। निःशुल्क सर्जरी की भविष्य से संबंधित अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न के उत्तर में डॉ. श्रीनिवास कहते हैं कि हम निःशुल्क सर्जरी नहीं करते बल्कि यह निःशुल्क सेवा है। बाबा सेवा को निःस्वार्थ, अहंकार रहित, अभिमान रहित क्रिया कहते हैं। निःशुल्क सेवा का व्यक्ति और समाज पर चिरस्थायी प्रभाव पड़ता है। सत्य साई बाबा स्वयं गुरु हैं। हम मात्र साधन हैं और केवल उनकी इच्छा से निर्देशित होते हैं। उनका मिशन हमारे साथ भी और हमारे बिना भी जारी रहेगा। सच तो यह है कि नवा रायपुर केंद्र ने मानव जाति की शानदार सेवा के 13 वर्ष पूरे कर लिए हैं। डॉ. श्रीनिवास ने कहा कि यह पैसा नहीं बल्कि लाखों जरूरतमंद लोगों का दृष्टिकोण और शुद्ध सद्भावना है जो हमें आगे बढ़ाती है। नवा रायपुर केंद्र में शताब्दी समारोह की शुरुआत पवित्र साई माह नवंबर के पहले दिन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अस्पताल आगमन से हुई। सौभाग्यम के गर्भगृह में मरीजों से बातचीत करते हुए, उन्होंने भगवान बाबा के परोपकारी कार्यों का बखान किया। उन्होंने संजीवनी को प्रेम और करुणा का केंद्र बताया। वास्तव में सत्य साई संजीवनी अस्पताल विकसित छत्तीसगढ़ और विकसित भारत में सराहनीय योगदान दिया है। समाज, संस्था और सरकार का संगम संजीवनी में होता है। हमारा लक्ष्य वंचितों तक पहुंचकर उनकी सेवा करना है।

हम चाहते हैं कि छत्तीसगढ़ भारत का पहला बाल हृदय मुक्त राज्य बने। 13 वर्षों की सेवा के बाद, हमने महसूस किया है कि रायपुर में भारत की बाल हृदय राजधानी बनने की भी क्षमता है। भगवान के सपने भगवान की दिव्य इच्छा के कारण आते हैं। सत्य साई संजीवनी की वसुधैव कुटुंबकम से लेकर सभी को प्यार करो, सभी को सेवा दो से लेकर समस्त लोकाः सुखिनो भवन्तु तक की यात्रा में; वहां केवल प्यार है। प्यार ही प्यार को जन्म देता है। बता दें कि साल 1944 में साई बाबा के भक्तों ने उनके लिए एक मंदिर बनवाया। साल 1948 में पुट्टपर्ती में एक बड़ा आश्रम बना, जिसे प्रशांति निलयम कहा गया। यही उनके जीवन का मुख्य केंद्र बन गया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 19 नवंबर को पुट्टपर्थी का दौरा किया था, जिसे 'शक्तिस्वरूपिणी दिवस' के नाम से जाना जाता है। उन्होंने कहा कि श्री सत्य साई बाबा प्रेम और करुणा के अवतार थे। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि 140 देशों के लाखों भक्त उनकी महासमाधि के बाद भी निःस्वार्थ सेवा के उनके मिशन को आगे बढ़ा रहे हैं। यह उनके अद्वितीय व्यक्तित्व का परिचायक है। एसएआई का अर्थ है सेवा, आराधना और ज्ञान। बाबा द्वारा की गई इतनी बड़ी परोपकारी सेवा पहले कभी नहीं देखी गई। वे कहा करते थे, मेरा जीवन ही मेरा संदेश ' है। वर्षों के शिक्षा और प्रचार के बाद उन्होंने इस संदेश को संशोधित करके 'आपका जीवन ही मेरा संदेश है' कर दिया। उनके पावन 100वें जन्म दिवस पर आइए हम मन, वचन और कर्म से मानवता की सेवा करने का संकल्प लें। यदि हम उनके मिशन के माध्यम बन सकें, तो यही दिव्य गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी ।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

शहीद दिवस
आचार्य दीप चन्द भारद्वाज

सनातन संस्कृति की रक्षा में समर्पित रहे गुरु तेग बहादुर

सिक्खों के नौवें गुरु के रूप में विख्यात तेग बहादुर जोकि गुरु हरगोबिंद के सबसे छोटे पुत्र थे, को 1664 ई. में गुरु नियुक्त किया गया। सिख धर्म का प्रचार करने के लिए इन्होंने पूरे भारत का भ्रमण किया। गुरु तेग बहादुर का संपूर्ण जीवन मानवीय मूल्यों और हिंदू धर्म की रक्षा हेतु समर्पित था। हिंद की चादर, भारत का कवच इन उपाधियों से गुरुजी पूरे भारतवर्ष में विख्यात थे। गुरु तेग बहादुर के समय क्रूर अत्याचारी मुगल सम्राट औरंगजेब के अत्याचार अपने चरम पर थे। तलवार के बल पर पैशाची औरंगज़ेब के लिए बाध्य कर रहा था। ऐसी विकट परिस्थितियों में कश्मीरी पंडितों का एक समूह गुरु तेग बहादुर के पास हिंदू धर्म की रक्षा के लिए गया। दया, शनं करुणा शौर्य की प्रतिमूर्ति गुरु तेग बहादुर ने कश्मीरी पंडितों के आग्रह को स्वीकार करके औरंगजेब से टकराने का संकल्प किया। गुरु तेग बहादुर की ख्याति उस समय चारों तरफ थी।

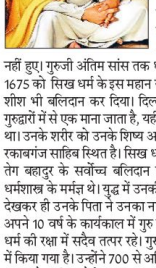

औरंगजेब को जब इस बात का पता चला तो उसने गुरु तेग को अनेक प्रकार से डराने व धमकाने का प्रयास किया। दृढ़ ईश्वर विश्वासी, न्याय प्रिय, करुणा, दया और शौर्य के पुंज तेग बहादुर अपने निर्णय पर अडिग रहे और उन्होंने औरंगजेब द्वारा चलाए जा रहे धर्मांतरण का व्यापक विरोध किया। औरंगजेब ने गुरू बहादुर को झुकाने के लिए उनके साथी भाई मतिदास को आरे से चिरवाया, भाई दयाला को उबलते पानी में फेंक दिया गया, गुरु तेग बहादुर के साथी भाई सती दास को जिंदा जलवा दिया गया। ये सभी मार्मिक हृदय विदीर्ण कर देने वाली भयानक घटनाएं गुरु तेग बहादुर के सामने घटित

हुई, फिर भी हिंदू संस्कृति और धर्म के संरक्षक तेग बहादुर अपने दृढ़ निश्चय से विचलित नहीं हुए। औरंगजेब ने गुरु जी को इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिए मजबूर किया परंतु वह उनके संकल्प और साहस को परास्त नहीं कर सका। औरंगजेब ने गुरु जी के आगे दो शर्तें रखीं कि वे इस्लाम और मृत्यु में से किसी एक का चुनाव कर लें। हिंदू धर्म की रक्षा हेतु इस महान योद्धा ने मृत्यु को चुना पर आततायी औरंगजेब के आगे नतमस्तक नहीं हुए। गुरुजी अंतिम सांस तक धर्मांतरण के विरुद्ध लड़ते रहे। 24 नवंबर 1675 को सिख धर्म के इस महान योद्धा ने दिल्ली के चांदनी चौक पर अपना शीश भी बलिदान कर दिया। दिल्ली का शीशगंज गुरुद्वारा नौ ऐतिहासिक गुरुद्वारों में से एक माना जाता है, यहीं पर गुरुजी ने अपना शीश बलिदान किया था। उनके शरीर को उनके शिष्य आनंदपुर साहिब ले गए, जहां आज गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब स्थित है। सिख धर्म के यह दोनों पवित्र स्थान आज भी गुरु तेग बहादुर के सर्वोच्च बलिदान के साक्षी हैं। गुरु तेग बहादुर युद्धशास्त्र, धर्मशास्त्र के मर्मज्ञ थे। युद्ध में उनकी तलवार (तेग) चलाने की कुशलता को देखकर ही उनके पिता ने उनका नाम तेग बहादुर रखा। 1665 से 1675 तक अपने 10 वर्ष के कार्यकाल में गुरु तेग बहादुर सिख धर्म के प्रचार और हिंदू धर्म की रक्षा में सदैव तत्पर रहे। गुरुजी के उपदेशों का संग्रह गुरु ग्रंथ साहिब में किया गया है। उन्होंने 700 से अधिक श्लोक लिखे हैं जिन्में ईश्वर, जीवन, मृत्यु और मुक्ति जैसे गहन आध्यात्मिक विषयों पर अपना स्वर्णिम चिंतन प्रस्तुत किया है। गुरु तेग ने केवल न्याय प्रिय मानवाधिकारों के रक्षक तथा बहादुर महान योद्धा थे बल्कि वह आध्यात्मिक चिंतक भी थे। पवित्र ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब में गुरुजी मानव जीवन का लक्ष्य इंगित करते हुए लिखते हैं कि - गुरु गोविन्द गायो नहीं, जनम अकारन कीन। कहो नानक हर भज मना, जहे बिद जल को मीन। अर्थात मनुष्य जीवन प्राप्त करके जिसने श्रेष्ठ गुरु और ईश्वर का आश्रय नहीं लिया उसका जीवन वैसे ही व्यर्थ है जैसे बिना जल के मछली का। मनुष्य को परमार्थ चिंतन के लिए सचेत करते हुए गुरुजी लिखते हैं कि- 'बिरद पयो सूजै नहीं, काल पहुँचियो आन। कहो नानक नर बावरे, क्यों न भजै भगवान।' अर्थात बुढ़ापा आने पर तथा मृत्यु निकट आने पर भी वे मनुष्य पागल हैं जो ईश्वर का भजन नहीं करते। गुरु तेग बहादुर महान निडर, दयावान योद्धा होने के साथ-साथ आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिंतक थे। सर्वोत्तम बलिदान के प्रतीक तेग बहादुर की शौर्य गाथा सिख समाज और हिंदू धर्म के अनुयायियों के लिए प्रेरणा पुंज के समान है।

(लेखक आध्यात्मिक चिंतक हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

ज्ञान, भक्ति व कर्म की पूर्णता श्रीराम

संकलित
दर्शन

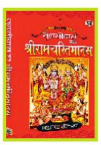

उपदेश जब ग्रंथ से दिया जाएगा तो लिखने के काम आएगा, जब पढ़कर दिया जाएगा तो सुनने के काम आएगा। उपदेश जब जीवन में चरितार्थ हो जाएगा, तब स्वाभाविक रूप से ग्राह्य और अनुकरणीय हो जाएगा। श्रीरामचरितमानस में लीला और चरित्र दोनों चरितार्थ हैं, जिसमें उपदेश दिया नहीं गया, चरितार्थ करके दिखाया गया है। चरितार्थ भी ऐसे हुआ है कि जिसमें चमत्कार और अप्रासंगिकता नहीं है। भगवान राम ने अपना कोई मूल्यांकन नहीं किया, पर दूसरे के हर कार्य की प्रशंसा की, उन्हें उत्साहित किया। ज्ञान की समझ, भक्ति-भावना और कर्म की शैली में यदि व्यावहारिकता नहीं है, तब साधक के जीवन में ज्ञान, भक्ति और कर्म की त्रिपुटी केवल प्रदर्शन योग्य ही रह जाएगी। उसका शुद्ध प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। इस सर्वांगीण पूर्णता के साथ पृथ्वी पर मात्र भगवान राम ही अवतरित हुए, जिनका मानवोचित गुणों का निर्वहन करते हुए भी स्वयं का सत, चित, और आनंद स्वरूप अपने शुद्ध स्वरूप में बना रहा। ज्ञान की व्यावहारिकता है कि किसी से कुछ इच्छा न रखे और सब में एक ही ब्रह्म का साक्षात्कार करे। भक्ति की व्यावहारिकता है कि संसार के सारे संबंधों का आधार भगवान को माने। सहज संतोषी स्वभाव हो। मन में कुटिलता न हो। कर्म की व्यावहारिकता यह है कि व्यक्ति स्वयं को सेवक माने। संसार के लोगों के शुभ और सत्कर्मों की प्रशंसा अवश्य करे। भगवान श्रीराम ने स्वयं में कोई गुण नहीं देखा, अपितु दूसरे के अवगुणों में भी गुण पक्ष को ग्रहण कर उसका उपयोग लोकहित में किया। यही ज्ञान, भक्ति और कर्म की पूर्णता है।

गलत काम जीवन की तपस्या बर्बाद कर सकता है

संकलित
प्रेरणा

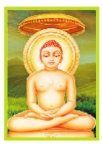

प्रसंग के अनुसार एक दिन महावीर स्वामी प्रवचन दे रहे थे और सभी शिष्य सुन रहे थे। प्रवचन के बीच-बीच में कुछ शिष्य प्रश्न भी पूछ रहे थे और महावीर जी उनके उत्तर दे रहे थे। एक शिष्य ने पूछा कि व्यक्ति कब अपने आचरण से गिर जाता है? कौन से काम हैं, जिनकी वजह से पतन होता है? क्या कोई एक काम है या कई ऐसे काम हैं? महावीर स्वामी ने कहा कि मैं उत्तर दूं, उससे पहले यहां बैठे अन्य शिष्य इस प्रश्न का उत्तर दीजिए। स्वामी जी की बात सुनकर एक शिष्य ने कहा कि अहंकार पतन का सबसे बड़ा कारण है। एक ने कहा कि कामवासना से सब कुछ बर्बाद हो जाता है। किसी ने लालच को बड़ी बुराई बताया तो किसी ने गुस्से को पतन का कारण बताया। महावीर जी ने सभी की बात ध्यान से सुनी। फिर पूछा कि बताइए अगर आपके पास एक कमंडल है, उसमें पानी भर दें और उसे नदी में छोड़ दें तो क्या वह डूबा जाएगा? शिष्यों ने कहा कि अगर कमंडल का आकार सही है तो वह डूबेगा नहीं, तैरेगा। महावीर जी ने पूछा कि अगर उसमें छेद कर दिया जाए तो? शिष्यों ने कहा कि फिर तो वह डूब ही जाएगा। महावीर जी बोले कि क्या छेद के आकार से कोई फर्क पड़ेगा? शिष्य बोले कि अगर छेद छोटा होगा तो कमंडल थोड़ी देर से डूबेगा और छेद बड़ा होगा तो जल्दी डूब जाएगा। छेद की वजह से कमंडल जरूर डूब जाएगा। महावीर जी ने कहा कि बस यही बात मैं समझाना चाहता हूं। हमारा शरीर एक कमंडल की तरह ही है और बुराइयां छेद की तरह होती हैं।

अंतर्मन

आज की पाती

वायु प्रदूषण प्राणी जाति के लिए खतरा

दिल्ली और अन्य कुछ राज्यों में बढ़ता वायु प्रदूषण चिंता का विषय बन गया है। कुछ राज्यों में सुबह-सुबह ही शुद्ध साफ-सुथरी हवा के समय प्रदूषित हवा से सामना करना पड़ता है। यहां सुबह की सैर भी अब खतरे से खाली नहीं है। लेकिन सवाल तो यह है कि देश में केंद्र और राज्यों में पर्यावरण विभाग हैं, इसमें मंत्री और अफसरों और अन्य कर्मचारियों को करोड़ों का वेतन और भत्ते भी दिए जाते हैं और आमजन से ग्रीन टैक्स, और न जाने पर्यावरण संरक्षण के लिए टैक्स किसी न किसी रूप में वसूला जाता है लेकिन फिर भी देश में प्रदूषण को रोकने के लिए गंभीरता से काम नहीं किया जा रहा है। क्यों नहीं यह चुनाव में वैसा मुद्दा बनता है जैसे आरक्षण, जातिवाद, धर्म आदि के मसले मुद्दे बन जाते हैं। *-वरुण झा, बिलासपुर*

करंट अफेयर

दुनिया ने जलवायु परिवर्तन की बाजी हारी, तापमान बढ़ा

दस साल पहले दुनिया के नेताओं ने एक ऐतिहासिक दांव लगाया था। वर्ष 2015 के पेरिस समझौते का उद्देश्य मानवता को जलवायु परिवर्तन के खतरनाक प्रभावों से बचाने के रास्ते पर लाना था। एक दशक बाद, ब्राजील के बेलेम में आयोजित जलवायु सम्मेलन के बिना निर्णायक कार्रवाई के समाप्त होने के बाद, हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि मानवता यह दांव हार चुकी है। तापमान वृद्धि 1.5° डिग्री सेल्सियस से अधिक होने वाली है। दुनिया और भी अशांत और खतरनाक होती जा रही है। तो, असफलता के बाद क्या होता है? इस प्रश्न का उत्तर देने के हमारे प्रयास ने इस वर्ष की शुरुआत में हैम्बर्ग में एक बैठक के लिए अर्थ लीग- वैज्ञानिकों का एक अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क जिसके साथ हम काम करते हैं - को एकत्रित किया। इस सवाल का जवाब ढूंढने की हमारी कोशिश ने इस साल की शुरुआत में हैम्बर्ग में अर्थ लीग- वैज्ञानिकों का एक अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क जिसके साथ हम काम करते हैं- की एक बैठक बुलाई। महीनों के गहन विचार-विमर्श के बाद, इस सप्ताह इसके निष्कर्ष प्रकाशित हुए, जिसमें यह परिणाम निकाला गया कि मानवता 'सीमाओं से परे जी रही है'। 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान पर चरम जलवायु घटनाएं, जैसे सूखा, बाढ़, आग और गर्म लहरों की संख्या बढ़ती हैं।

ऑफ बीट

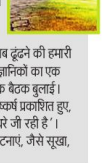

क्या कौए सचमुच चतुर और बुद्धिमान होते हैं?

यह कोई रहस्य नहीं है कि कौए उल्लेखनीय संज्ञानात्मक क्षमताओं से संपन्न होते हैं। इंटरनेट कौए की आवाज की नकल करने या दिमाग लगाने वाले जटिल गेम को हल करने के वीडियो से भरा पड़ा है। लेकिन क्या ये पक्षी उतने ही बुद्धिमान हैं जितना उन्हें समझा जाता है? कठोर आवरणयुक्त फल तोड़ने वाली पहेली। कौए में बेहतर बुद्धि की अवधारणा का समर्थन करने के लिए सबसे अधिक उद्धृत अध्ययनों में से एक कौए द्वारा फल के कठोर आवरण युक्त फल (नट) को तोड़ने के लिए कारों का इस्तेमाल करना है। 1978 में, कैलिफोर्निया के शोधकर्ताओं ने देखा कि अमेरिकी कौए सड़क पर अखरोट फेंकते थे, फिर उनके किसी कार से कुचले जाने का इंतजार करते थे और फिर टूटे हुए फल खाते थे। हालांकि, शोधकर्ताओं ने पाया कि जब कोई कार आ रही थी तो कौए अपने आवरणयुक्त फल सड़क पर नहीं फेंकते थे। इसके अलावा अध्ययन किए गए 200 मामलों में से, शोधकर्ताओं ने कभी भी किसी कार को किसी फल के आवरण को कुचलते हुए नहीं देखा। इससे पता चला कि यह सिद्धांत कि कौए जानबूझकर कार को अखरोट तोड़ने के रूप में उपयोग कर रहे थे, वास्तव में गलत था।

ट्रेंड

जापान से साझेदारी

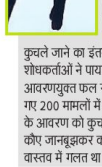

जापान की प्रधानमंत्री साने ताकाइची के साथ सार्थक बैठक हुई। हमने नवाचार, रक्षा, प्रतिभा गतिशीलता आदि क्षेत्रों में द्विपक्षीय सहयोग को गति देने के उपायों पर चर्चा की। एक बेहतर ग्रह के लिए भारत-जापान की मजबूत साझेदारी ज़रूरी है।
- नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

सिंधी समाज का हक

भारतीय जनता पार्टी हमेशा से सिंधी समाज के हक और उनकी अधिकार के पक्ष में खड़ी रही है। सिंधी भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल कराने के लिए श्रद्धेय अटल बिहारी वाजपेयी ने 1957 में पहला गैर-सरकारी विधेयक पेश कर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।
- राजनाथ सिंह, रक्षामंत्री

देशभर में अफरा-तफरी

एसआईआर के नाम पर देशभर में अफरा-तफरी मचा रखी है। भारत दुनिया के लिए अत्याधुनिक सॉफ्टवेयर बनाता है, मगर भारत का चुनाव आयोग आज भी कागज़ों का जंगल खड़ा करने पर ही अड़ा है।
- राहुल गांधी, सांसद, कांग्रेस

प्रदूषण नियंत्रण

271 वाटर स्प्रिंकलर्स लगातार 24 घंटे दिल्ली की सड़कों पर लगभग 1 लाख लीटर ट्रीटेड पानी का छिड़काव कर रहे हैं। प्रदूषण नियंत्रण के लिए हर मोर्चे पर हमारी टीमें ऑन-ग्राउंड एक्शन में हैं और पूरी तत्परता से कार्य कर रही हैं।
- रेखा गुप्ता, सीएम, नई दिल्ली

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

पायनियर
नई दिल्ली, सोमवार, 24 नवंबर 2025

डिजिटलीकरण का साइड इफेक्ट

ऑनलाइन शिक्षा का दूसरा पहलू

ऑनलाइन शिक्षा की कहानी कोरोना ने इस कदर बदल दी कि यह अब सटीक विकल्प बन कर छा गया। लेकिन इस नई वैकल्पिक व्यवस्था ने छात्रों को जहां एक बेहतर सहूलियत दी वहीं उन्हें डिजिटल एडिक्शन की गहरी खाई में धकेल दिया। माता-पिता इस व्यवस्था से संतुष्ट तो हो गए लेकिन आनलाइन गेमिंग ने उनके बच्चों को बुरी तरह बिगाड़ कर रख दिया। हाल के दिनों में पढ़ाई

के माध्यमों और जीवनशैली में बदलाव के चलते बच्चे तेजी से डिजिटल लत के शिकार होने लगे हैं। जब बच्चे आनलाइन गेमिंग के रुटीन में आ गए तो टोकाटाकी उन्हें अखरने लगी और इसे लेकर वे विद्रोही बन गए। यदि मां-बाप उन्हें इससे रोकते हैं, तो टोका-टाकी उन्हें बर्दाश्त नहीं होती है। उनका व्यवहार आक्रामक भी होने लगता है। हालात इस कदर भयावह हो गए कि विरोध पर छात्रों के आत्महत्या करने के मामले भी सामने आने लगे। अब केरल का उदाहरण लीजिए, वहां लगातार दजोनों बच्चों के जान देने का मामला आया। इन घटनाओं ने न केवल अभिभावकों बल्कि शासन-प्रशासन को भी हैरत में डाल दिया। डिजिटल लत से बच्चों को मुक्त करने के लिए केरल सरकार ने नई पहल की। पलक्कड़ में छह डि-एडिक्शन सेंटर शुरू किए हैं, जिनमें बच्चों की काउंसलिंग की जाती है। बच्चों की इंटरनेट एडिक्शन जांच भी होती है। जिसके आधार पर उनकी काउंसलिंग की जाती है। इसके लिए जहां कुछ एक्सरसाइज करायी जाती हैं, वहीं दूसरी रचनात्मक गतिविधियों से इसे छुड़ाने की कोशिश की जाती है। इस दौरान एक-एक घंटे के दस-पंद्रह सेशन कराये जाते हैं। सुखद है कि चार-पांच सेशन के बाद सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। दरअसल, डिजिटल लत के शिकार बच्चे वे मानने को तैयार ही नहीं होते कि वे कुछ असामान्य कर रहे हैं। उनके लिये यह व्यवहार सामान्य घटनाक्रम है। बाद में जब उन्हें इसकी असलियत पता लगती है तो वे समझते हैं कि बात अब पूरी तरह बिगड़ चुकी है। उधर, सोशल मीडिया का जाल हमारे समाज का ग्रास इतनी तेजी से कर रहा है, बच्चों को लगता ही नहीं कि वे कुछ असामान्य कर रहे हैं। जिसके चलते किशोर, इससे रोकने पर आक्रामक व्यवहार करने लगते हैं। कुछ मामलों में वे अवसादग्रस्त होने लगते हैं या फिर उनके मन में आत्महत्या के विचार आने लगते हैं। यह सुखद है कि पलक्कड़ में पिछले दो साल में साढ़े बारह सौ बच्चों को डिजिटल लत से मुक्ति दिलायी गई है। बच्चे मानसिक रूप से खुद को स्वस्थ महसूस कर रहे हैं। अब प्रयास ये होनीा चाहिए कि स्कूलों में पढ़ाई और इंटरनेट के प्रयोग में संतुलन बनाया जाए। सही मायने में यह संकट सिर्फ केरल के किसी एक जिले का ही नहीं है, यह संकट पूरे देश का है। ऐसे में केंद्र सरकार को भी से लेकर कोई ठोस पहल करनी चाहिए। इसमें राज्य सरकारों की भी जिम्मेदारी बनती है कि वे रणनीति के साथ कदम उठाएं। अलबत्ता स्वंयसेवी संस्थाओं के सहयोग से इस पर बड़े पैमाने पर काम किया जा सकता है।

भारतीय कृषि में गुणवत्ता और पारदर्शिता का नया युग

बदलते जलवायु-परिस्थितियों, बीजों में जैव- प्रौद्योगिकी के बढ़ते हस्तक्षेप और वैश्विक बाजारों में प्रतिस्पर्धा के दबाव ने इस नए विधेयक की आवश्यकता को और अधिक सशक्त बनाया है। यह प्रस्ताव इस बात का प्रमाण है कि भारत कृषि क्षेत्र को विश्वस्तरीय बनाने और किसान-हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है

एडवोकेट किशन सनमुखदास भावनानी

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ कृषि न केवल आजीविका का साधन है, बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन की आधारशिला भी है। इस विशाल कृषि व्यवस्था की आत्मा ''बीज'' है, क्योंकि बीज ही वह पहला तत्व है जिससे उत्पादन, नवाचार और खाद्य सुरक्षा की पूरी श्रृंखला आरंभ होती है। इसी बीज क्षेत्र में सुधार और पारदर्शिता लाने की दिशा में सरकार ने वर्ष 2025 में बीज मसौदा विधेयक, 2025 का प्रस्ताव तैयार किया है और इस पर 11 दिसंबर, 2025 तक नागरिकों, किसानों, वैज्ञानिकों, बीज उत्पादकों और अन्य हितधारकों से सुझाव आमंत्रित किए हैं। यह मसौदा विधेयक न केवल कृषि सुधारों के अगले चरण का संकेत है, बल्कि यह देश में क्वालिटी सीड गवर्नेंस का एक नया ढांचा भी प्रस्तुत करता है। भारत ने वर्ष 2025 में बीज मसौदा विधेयक, 2025 का प्रारूप जारी कर एक ऐसा विधायी प्रयास शुरू किया है, जो न केवल देश के कृषि तंत्र को आधुनिकता, पारदर्शिता और गुणवत्ता के उच्चतम मानकों से जोड़ता है, बल्कि बीजों की सुरक्षा, किसानों के अधिकारों और कृषि-व्यवसाय के नैतिक ढाँचे को भी नई दिशा प्रदान करता है। यह विधेयक 1966 के बीज अधिनियम और 1983 के बीज नियंत्रण आदेश का स्थान लेने जा रहा है, जो कि आज की तकनीक- संचालित कृषि आवश्यकताओं के सामने अपर्याप्त हो चुके हैं। बदलते जलवायु-परिस्थितियों, बीजों में जैव- प्रौद्योगिकी के बढ़ते हस्तक्षेप और वैश्विक बाजारों में प्रतिस्पर्धा के दबाव ने इस नए विधेयक की आवश्यकता को और अधिक सशक्त बनाया है। यह प्रस्ताव इस बात का प्रमाण है कि भारत कृषि क्षेत्र को विश्वस्तरीय बनाने और किसान-हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है।

साथियों बात अगर हम आज भारत वैश्विक बीज बाजार में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बन चुका है, व अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य इसको समझने की करें तो, देश के बीज निर्यात का मूल्य अरबों डॉलर तक पहुँच चुका है, और निजी क्षेत्र, विशेष रूप से बहुराष्ट्रीय बीज कंपनियाँ, इस उद्योग में बड़ी भूमिका निभा रही हैं। बीज मसौदा विधेयक, 2025 व्यापार सुगमता (ईज़ ऑफ़ डूइंग बिज़नेस) के सिद्धांत पर आधारित है। यह बीज पंजीकरण लाइसेंसिंग, परीक्षण और वितरण की प्रक्रियाओं को डिजिटल प्लेटफॉर्म पर लाने की बात करता है। इससे छोटे उद्यमियों, स्टार्टअप्स और स्थानीय बीज उत्पादकों को भी समान अवसर

मिलेगा। इसके साथ ही, यह विधेयक अवैध बीज बिक्री, फर्जी ब्रांडिंग और अनधिकृत जेनेटिक वैरायटी जैसे अपराधों के लिए कठोर दंड का प्रावधान भी करता है, जिससे बीज उद्योग में पारदर्शिता और उपभोक्ता विश्वास दोनों को बल मिलेगा। अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य- वैश्विक मानकों के अनुरूप भारतीय ढांचा, विश्व स्तर पर बीज व्यापार और नियमन यूपीओवी (इंटरनेशनल यूनियन फॉर द प्रोटेक्शन ऑफ़ न्यू वैरायटीज ऑफ़ प्लांट्स) आईएसटीए (इंटरनेशनल सीड टेस्टिंग एसोसिएशन) और ओईसीडी (ओईसीडी सीड स्कीमस) जैसे अंतरराष्ट्रीय मानकों के तहत चलता है।

भारत का नया बीज मसौदा विधेयक इन अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप नीति ढांचा तैयार करने का प्रयास करता है ताकि भारतीय बीज उद्योग को ग्लोबल ट्रेड नेटवर्क में और गहराई से एकीकृत किया जा सके। इससे भारत न केवल घरेलू आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगा, बल्कि अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमेरिका के उभरते कृषि बाजारों में बीज आपूर्ति का एक स्थिर और विश्वसनीय स्रोत भी बन सकता है। साथियों बात अगर हम, किसानों के अधिकारों की रक्षा कोसमझने की करें तो, केंद्र में किसान, केवलउपभोक्ता नहीं-भारत की कृषि नीति में लंबे समय तक किसान को केवल ''उपभोक्ता'' के रूप में देखा गया, जिसे बीज खरीदना होता है। लेकिन बीज मसौदा विधेयक, 2025 इस धारणा को बदलता है। यह किसान को हितधारक के रूप में मान्यता देता है, जिसके अधिकार, ज्ञान और सहभागिता को कानूनी ढांचे में स्थान दिया गया है। विधेयक में यह सुनिश्चित करने की दिशा में प्रावधान हैं कि यदि किसान को किसी बीज से अपेक्षित परिणाम नहीं मिलता है, तो वह बीज आपूर्तिकर्ता या निर्माता के खिलाफ कंपनसेशन क्लेम कर सकता है। यह प्रावधान कंज्यूमर प्रोटेक्शन के सिद्धांत को कृषि क्षेत्र में लागू करने की दिशा में एक क्रांतिकारी कदम है। साथ ही, मसौदा किसानों को पारंपरिक बीज बचाने, पुनः प्रयोग करने और आदान-प्रदान करने के अधिकार से वंचित नहीं करता, यह भारत के विविध कृषि पारिस्थितिकी और स्वदेशी बीज संरक्षण परंपरा की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण है।

बीज गुणवत्ता नियंत्रण, विज्ञान और जवाबदेही का संगम-बीज मसौदा विधेयक 2025 में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सभी बीज उत्पादक, वितरक और विक्रेता को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त प्रमाणन एजेंसी से अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक होगा। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बाजार में बिकने वाले बीज स्टैंडर्डाइज्ड हों और उनमें फसल की न्यूनतम अंकुरण दर तथा शुद्धता का स्तर निर्धारित सीमा से कम न हो। इस विधेयक के अंतर्गत नेशनल सीड अथॉरिटी तथा स्टेट सीड सर्टिफिकेशन बोर्ड्स की भूमिका को और मजबूत बनाया गया है। वे न केवल बीज परीक्षण, पंजीकरण और प्रमाणन की जिम्मेदारी निभाएंगे, बल्कि बीज उत्पादकों की जवाबदेही तय करने के लिए एक शिकायत निवारण तंत्र भी तैयार करेंगे।

साथियों बात अगर हम बीज नियमन को आधुनिक बनाने की आवश्यकता को समझने की करें तो, 1966 का बीज अधिनियम उस समय बनाया गया था जब भारत खाद्यान्न संकट से जूझ रहा था और हरित क्रांति की शुरुआत ही हुई थी। उस दौर की कृषि तकनीक न तो आज की तरह उन्नत थी, न ही निजी बीज कंपनियों की व्यापकता इतनी बड़ी थी। लेकिन 2025 में पहुंचते- पहुंचते परिस्थितियाँ बिल्कुल बदल चुकी हैं, देश में 300 से अधिक पंजीकृत बीज कंपनियाँ हैं, जैव-संशोधित किस्मों, हाईब्रिड वैरायटी, ड्रोन- आधारित बीज परीक्षण, और स्मार्ट फसल निगरानी जैसी तकनीकें मुख्यधारा में शामिल हो चुकी हैं। पुराना कानून गुणवत्ता परीक्षण, मानकीकरण, पारदर्शिता किसानों के अधिकारों और विपणन नियंत्रण के आधुनिक मानदंडों को पूरा नहीं कर पा रहा था। इन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने बीज मसौदा विधेयक, 2025 को तैयार किया है, जो बीज नियमन को समय-सापेक्ष, वैज्ञानिक और अंतरराष्ट्रीय दिशानिर्देशों के अनुरूप बनाता है। यह विधेयक अंतरराष्ट्रीय बीज परीक्षण संघ, ओईसीडी सीड्स स्टैंडर्ड्स और एफएओ के वैश्विक कृषि सुरक्षा मानकों से भी सामंजस्य स्थापित करता है।

साथियों बात अगर हम बीज मसौदा विधेयक, 2025 के मुख्य उद्देश्यों व किसानों के लिए विशेष प्रावधानों को समझने की करें तो, इस विधेयक के उद्देश्य बहुआयामी हैं, जिनमें उपभोक्ता सुरक्षा, किसान संरक्षण, वैज्ञानिक गुणवत्ता नियंत्रण, कृषिअनुसंधान को बढ़ावा और कृषि बाज़ार में निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा शामिल है। प्रमुख उद्देश्यों में, (1)किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले बीज उपलब्ध कराना(2)बीज बाजार में नकली, मिलावटी और निम्न-स्तरीय बीजों पर नियंत्रण(3)किसानों के अधिकारों और उनके मुआवज़े की गारंटी(4)बीज उत्पादकों, वितरकों और कंपनियों का अनिवार्य पंजीकरण (5) अनुसंधान व नवाचार को प्रोत्साहन(6)बीजों में जैव- सुरक्षा और जैव-विविधता की रक्षा, इन सभी उद्देश्यों का मूल यह है कि भारत की कृषि प्रणाली को भविष्य-उन्मुख और जोखिम-रहित बनाया जा सके, जिससे किसानों की आय और उत्पादन दोनों में स्थिरता आए। किसानों के लिए विशेष प्रावधान - संरक्षण, अधिकार और मुआवज़ा इस विधेयक का सबसे महत्वपूर्ण और प्रगतिशील पहलू किसानों के अधिकारों को मजबूत बनाना है। कृषि क्षेत्र में वर्षों से यह शिकायत थी कि बीज कंपनियों के दावे के मुताबिक उत्पादन नहीं मिलने पर किसानों को कोई मुआवज़ा नहीं मिलता। बीज मसौदा विधेयक 2025 में- (1)यदि बीज की गुणवत्ता में कमी पाई जाती है, (2)यदि बीज परीक्षण के मानक पूरे नहीं होते, (3)या यदि कंपनी द्वारा विज्ञापित उत्पादन प्राप्त नहीं होता, तो किसान मुआवज़ा पाने का पात्र होगा। इसके लिए जिला स्तर पर बीज मुआवज़ा समिति स्थापित करने का प्रावधान किया गया है। साथ ही किसानों को अपना बीज बचाने, उपयोग करने, अदल- बदल करने और बेचने का पूरा अधिकार होगा, बशर्ते वे ब्रांडिंग या पैकेजिंग के साथ कारोबार न करें। यह प्रावधान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किसानों के अधिकारों की रक्षा करने वाले एफएओ के किसान अधिकार चार्टर और भारत के अपने पीपीवीएफआर एक्ट के अनुरूप है। बीज मसौदा विधेयक 2025 की चुनौतियाँ- हालाँकि विधेयक प्रगतिशील है, लेकिन इसके कार्यान्वयन में कुछ चुनौतियाँ होंगी, छोटे किसानों में जागरूकता की कमी, ग्रामीण क्षेत्रों में परीक्षण लैब की कमी, पंजीकरण प्रक्रिया का भार छोटे बीज उत्पादकों पर पड़ना, व्यावहारिक रूप से मुआवज़े की प्रक्रिया को सरल बनाना, फिर भी सरकार डिजिटल प्लेटफॉर्म, कृषि विस्तार सेवाओं और राज्य सरकारों के तालमेल से इन चुनौतियों को हल करने का प्रयास कर रही है।

सुख का मापदण्ड और भारतीय यथार्थ

भारतीय समाज क्षेत्रीय, भाषायी आर्थिक तथा सामाजिक स्तरों पर अत्यंत विषम है; एक छोटे नमूने का उपयोग करके उस विविधता का प्रतिनिधित्व संभव नहीं। एक जिले के ग्रामीण किसान की जीवन-संतुष्टि की अवधारणा दिल्ली के शहरी पेशेवर व्यक्ति से भिन्न हो सकती है

डॉ. सत्यवान सौरभ

विश्व हैपीनेस रिपोर्ट हर वर्ष किसी देश की सुख-संतुष्टि का आकलन प्रस्तुत करती है। किंतु भारत जैसे विशाल, विविध और सांस्कृतिक रूप से जटिल देश के लिए यह रिपोर्ट कई बार उस यथार्थ को उजागर नहीं कर पाती जो समाज के भीतर गहरे स्तर पर मौजूद है। भारत की रैंकिंग अक्सर सौ से ऊपर दिखाई देती है, जबकि इसी अवधि में भारत ने स्वास्थ्य, पोषण, सामाजिक सुरक्षा, प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण, संरचनात्मक सुधारों और गरीबी कमी जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ दर्ज की हैं। यह विरोधाभास एक नैसर्गिक प्रश्न खड़ा करता है-क्या किसी देश के ''सुख'' को केवल सर्वेक्षण-आधारित दृष्टिकोण से समझा जा सकता है? और क्या यह मापन भारतीय जीवन-मूल्यों और सामाजिक वास्तविकताओं को पकड़ने में सक्षम है?

विश्व हैपीनेस रिपोर्ट का आधार मुख्यतः स्व-आकलन है। सर्वेक्षणकर्ता उत्तरदाताओं से पूछते हैं कि वे जीवन को दस-स्तरीय सीढ़ी में कहाँ रखते हैं। यह ''सीढ़ी-संबंधी मूल्यांकन'' पश्चिमी मनोविज्ञान में प्रयुक्त उस विचार पर आधारित है जिसमें सुख को व्यक्तिगत प्राप्तियों और परिस्थितियों के आधार पर मापा जाता है। परन्तु भारतीय समाज में सुख की अवधारणा केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामुदायिक, आध्यात्मिक और पारिवारिक आयामों से भी गहराई से जुड़ी होती है। भारतीय संस्कृति में संतोष, कर्तव्य, परस्पर सहायता, संबंधों की स्थिरता और आध्यात्मिक संतुलन भी सुख का महत्वपूर्ण आधार माने जाते हैं। इसलिए जब एक भारतीय उत्तरदाता से पूछा जाता है कि वह दस में से अपने जीवन को कितने अंक देगा, तो उसके भीतर कई सांस्कृतिक कारक सक्रिय होते हैं- विनम्रता, शांत-स्वीकृति, परिस्थिति को भाग्य-नियति से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति, या समाज में शिकायत दिखाने से बचना। इसके परिणामस्वरूप अनेक भारतीय अपने जीवन को कम अंक दे सकते हैं, भले ही वे वस्तुतः अनेक स्तरों पर बेहतर स्थिति में हों। सर्वेक्षण का नमूना आकार भी भारत के लिए पर्याप्त नहीं माना जा सकता। एक अरब से अधिक जनसंख्या वाले, शहरी और ग्रामीण विविधताओं से भरे देश के लिए मात्र लगभग एक हज़ार लोगों के उत्तर पर आधारित निष्कर्ष असंतुलित हो सकते हैं। भारतीय समाज क्षेत्रीय, भाषायी, आर्थिक तथा सामाजिक स्तरों पर अत्यंत विषम है; एक छोटे नमूने का उपयोग करके उस विविधता का प्रतिनिधित्व संभव नहीं। एक जिले के ग्रामीण किसान की जीवन-संतुष्टि की अवधारणा दिल्ली के शहरी पेशेवर व्यक्ति से भिन्न हो सकती है। फिर भी, दोनों को समान पैमाने पर रखकर किसी राष्ट्रीय ''सुख-अंक'' की व्याख्या करना वैज्ञानिक रूप से सीमित प्रतीत होता है।

इसके अतिरिक्त रिपोर्ट में प्रयुक्त सुख की अवधारणा भी सांस्कृतिक पक्षपात से प्रभावित है। पश्चिमी ढाँचा सुख को भौतिक उपलब्धियों, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और प्रत्यक्ष संतुष्टि से जोड़ता है, जबकि भारतीय समाज में अनेक बार सुख का अर्थ कठिनाइयों के बीच संतुलन बनाए रखना, भावनात्मक सहारा, सामुदायिक सहयोग या आध्यात्मिक शांति से भी जुड़ा होता है। यह अंतर सर्वेक्षणकर्ता की भाषा, शैली, शब्दों और उत्तरदाता के मनोभाव को प्रभावित करता है। अक्सर यह देखा गया है कि भारत के ग्रामीण या अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों में उत्तरदाता ''जीवन के अंक'' को किसी ऐसे प्रश्न की तरह स्वीकार करते हैं जिसमें शिकायत या असंतोष दिखाना उचित नहीं लगता। इसी वजह से कई भारतीय वास्तविक अनुभव होने के बावजूद संतुष्टि को अपेक्षाकृत कम आंकते हैं, जिससे परिणाम और अधिक विकृत होते हैं।

इसके विपरीत, भारत ने बीते वर्षों में सामाजिक कल्याण में कई बड़े परिवर्तन किए हैं। करोड़ों लोगों तक निःशुल्क खाद्यान्न पहुँचाना, सर्वजन स्वास्थ्य बीमा जैसी योजनाओं के माध्यम से आधारभूत सुरक्षा सुनिश्चित करना, ग्रामीण आजीविका कार्यक्रमों में विस्तार, शिक्षा तथा महिला-शिशु पोषण कार्यक्रमों में बढोत्तरी-ये सब समग्र जीवन-गुणवत्ता को बढ़ाने वाले उपाय रहे हैं। किन्तु अंतरराष्ट्रीय रिपोर्टें इन संकेतकों को केवल सीमित रूप से जोड़ती हैं, क्योंकि उनका मूल केंद्र ''अनुभूत संतुष्टि'' पर आधारित है, न कि ''वस्तुनिष्ठ कल्याण'' पर। यही कारण है कि वस्तुनिष्ठ रूप से बेहतर होती सुविधाएँ भी रिपोर्ट में पर्याप्त रूप से उजागर नहीं हो पातीं। भारत में गरीबी में कमी और स्वास्थ्य- सेवाओं की पहुँच में वृद्धि ने जीवन को अधिक सुरक्षित और स्थिर बनाया है, परन्तु सुख-सर्वेक्षण इस सकारात्मक परिवर्तन को मापने में अक्षम रहते हैं।

ऐसे में, प्रश्न यह उठता है कि भारत को अपने भीतर ऐसा क्या बदलना चाहिए जिससे समाज अधिक भावनात्मक रूप से सुरक्षित, सहानुभूतिपूर्ण और संतुलित बन सके। इसका उत्तर ''सहानुभूति संरचना''- एक व्यापक सामाजिक ढाँचा है जिसमें राज्य, समाज, संस्थान और समुदाय मिलकर नागरिकों को भावनात्मक सुरक्षा, मानसिक सहारा, संवाद और सहायता प्रदान करें। इस ढाँचे का पहला स्तंभ मानसिक-स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार है। भारत में मानसिक-स्वास्थ्य को लेकर अभी भी कई भ्रम और कलंक मौजूद हैं। लोग सहायता लेने में संकोच करते हैं, और प्राथमिक चिकित्सा ढाँचे में मानसिक स्वास्थ्य की अनुपस्थिति समस्या को बढ़ाती है। यदि प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में प्रशिक्षित परामर्शदाता हों, दूरभाष-आधारित सेवाएँ व्यापक हों और विद्यालयों-कॉलेजों में मनोवैज्ञानिक सहायता उपलब्ध हो, तो समाज में भावनात्मक असुरक्षा घट सकती है।

दूसरा महत्वपूर्ण पहलू समुदाय-आधारित सहयोग है। भारतीय संस्कृति में पड़ोस, परिवार और सामाजिक संबंधों की शक्ति अत्यधिक रही है, परन्तु शहरीकरण और व्यक्तिगत प्रतिस्पर्धा के कारण यह संरचना कमजोर हो रही है। यदि स्थानीय समुदायों में संवाद-चक्र, सहारा-समूह, वरिष्ठ नागरिक सहायता-केंद्र, महिलाओं के लिए सुरक्षित समुदाय-स्थल और युवाओं के लिए साझा सहयोग मंच विकसित किए जाएँ, तो सामाजिक एकांत कम हो सकता है। सहानुभूति तभी विकसित होती है जब लोग एक-दूसरे के जीवन में उपस्थिति का अनुभव करें।

सहानुभूति संरचना का तीसरा स्तंभ कार्यस्थल है। कार्यस्थलों पर तनाव, प्रतिस्पर्धा, लक्ष्य-दबाव और असुरक्षा बढ़ रही है, जिसके चलते कर्मचारियों का मानसिक संतुलन प्रभावित होता है। यदि संस्थान संवेदनशील नीति अपनाएँ-कार्य अवधि में लचीलापन, परामर्श सेवाएँ, साथी-सहयोग कार्यक्रम, नेतृत्व प्रशिक्षण में सहानुभूति-आधारित व्यवहार-तो यह वातावरण को स्वस्थ बना सकता है। एक सहानुभूतिपूर्ण संस्थागत संस्कृति न केवल कर्मचारी के मनोबल को बढ़ाती है बल्कि उत्पादकता भी बढ़ाती है।

चौथा आयाम विद्यालयों में भावनात्मक शिक्षा का है। बच्चों में सहानुभूति, अहिंसक संवाद, भावनात्मक बुद्धिमत्ता और सहयोगात्मक गतिविधियों को प्राथमिकता देना आवश्यक है। यदि बच्चे अपनी भावनाएँ समझना, व्यक्त करना और दूसरों की भावनाओं को पहचानना सीखें, तो समाज भविष्य में अधिक संवेदनशील बनेगा। शैक्षणिक ढाँचा केवल परीक्षा-आधारित न रहकर जीवन-आधारित होना चाहिए।

पाँचवाँ पक्ष तकनीकी सहारा है। यदि तकनीक का उपयोग मानसिक-स्वास्थ्य और भावनात्मक सहयोग के लिए किया जाए-जैसे परामर्श ऐप, संकट में सहायता, छात्रों और युवाओं के लिए डिजिटल संवाद केंद्र-तो यह सहानुभूति संरचना को व्यापक बना सकता है। तकनीक का जिम्मेदार उपयोग सामाजिक संवेदनशीलता को बढ़ावा दे सकता है, बशर्ते उसकी निगरानी और नैतिकता मजबूत हो।

अंततः, राज्य के प्रशासनिक ढाँचे में भी सहानुभूति की आवश्यकता है। जब सरकारी कार्यालयों, अस्पतालों, परिवहन, सुरक्षा और न्याय-प्रणाली में कार्यरत लोग नागरिकों के प्रति अधिक करुणामय व्यवहार अपनाएँ, तो नागरिक-राज्य संबंध और भी मजबूत होते हैं।

जनता की समस्याओं को सुनना, सम्मान देना और समाधान में मानवीय दृष्टिकोण अपनाना किसी भी लोकतंत्र की मजबूती का आधार है।

आप की बात

जब चुनाव नहीं, तो इतनी जल्दबाजी क्यों?

चुनाव आयोग द्वारा मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण (रक्क्ष) की कार्यवाही के दौरान लगातार पोर्टल की धीमी गति, एप की समस्या, फील्ड में आने वाली वास्तविक चुनौतियों ने बीएलओ के काम को गंभीर रूप से धीमा कर दिया है। आधा समय गुजर चुका है, पर कार्य का बड़ा हिस्सा अब भी लंबित है। ऊपर से कड़ाके की ठंड और विवाह-सीजन की बढ़ती व्यस्तताएँ बीएलओ की चुनौतियों को और अधिक विकट बना रही हैं।

जब मध्यप्रदेश में न कोई चुनाव प्रस्तावित है, न ही तत्काल संशोधित मतदाता सूची की कोई अनिवार्य आवश्यकता, तो फिर क्यों प्रशासनिक अमले व बीएलओ पर इतनी अव्यावहारिक समय-सीमा का बोझ? चुनाव आयोग से पूरी अपेक्षा और निवेदन के साथ कहा जाना चाहिए कि मध्यप्रदेश के लिए रक्क्षकी डेडलाइन को कम-से-कम एक माह बढ़ाए, इससे न केवल बीएलओ को राहत मिलेगी, बल्कि कार्य की गुणवत्ता, डाटा की सटीकता और पूरी प्रक्रिया की विश्वसनीयता भी बढ़ेगी। समय-सीमा बढ़ाना कोई सुविधा नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक, आवश्यक और जिम्मेदार निर्णय होगा–जिससे रक्क्ष का संपूर्ण कार्य बिना तनाव, बिना व्यवधान और पूरी सुचारूता के साथ सम्पन्न हो सकेगा।

प्रो. आरके जैन अरिजीत, बड़वानी (मप्र)

जनता केवल नारों, आरोपों और सोशल मीडिया की राजनीति से प्रभावित नहीं होती

बिहार विधानसभा चुनाव में भाजपा-नीत राजग की प्रचंड जीत किसी संयोग का परिणाम नहीं, बल्कि सुविचारित रणनीति, जमीनी स्तर की मेहनत और विपक्ष की अव्यवस्था का सामूहिक निष्कर्ष है। इस चुनाव ने एक बार फिर स्पष्ट कर दिया कि जनता केवल नारों, आरोपों और सोशल मीडिया की राजनीति से प्रभावित नहीं होती, बल्कि संगठित नेतृत्व, भरोसेमंद कार्यशैली और मजबूत बूथ प्रबंधन को तवज्जो देती है। राजग ने पिछले चुनाव की तुलना में लगभग नौ प्रतिशत अधिक वोट जुटाए, जो यह दशार्ता है कि उसके घटक दल,भाजपा, जदयू, लोजपा (आर) और लोकमोर्चा,अपने पारंपरिक वोट बेस को प्रभावी ढंग से एक-दूसरे में स्थानांतरित करने में सफल रहे। यह सामंजस्य भाजपा और जदयू के जमीनी कार्यकताओं, युवा मोर्चा, महिला मोर्चा, किसान मोर्चा से लेकर विभिन्न सामाजिक वर्गों में सक्रिय इकाइयों की मेहनत का परिणाम है। चुनाव प्रचार में इन इकाइयों की उपस्थिति निरंतर, संगठित और प्रभावशाली थी। वहीं मतदाता सूची से लाखों नाम कटने के बावजूद कोई बड़ा विरोध न उभरना इस बात का संकेत है कि एसआईआर को लेकर विपक्ष के दावे जनता पर प्रभाव नहीं डाल सके। इसके विपरीत महागठबंधन अपनी पुरानी समस्याओं और चुनावी ढिलाई में ही उलझा रहा।

सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम.मप्र

उष्णकटिबंधीय वर्षावन शहर बेलेम में संपन्न

हाँ न हाँ न करते हुए. दलों का 30वां जलवायु सम्मेलन, ब्राजील के अमेजन स्थित उष्णकटिबंधीय वर्षावन शहर बेलेम में संपन्न हुआ। देखा जाय तो इसकी शुरूआत में ही कई देशों का जलवायु को लेकर मतभेद उभर कर सामने आया। दुनिया में सबसे ज्यादा प्रदुषण फैलाने वाला संयुक्त राज्य अमेरिका ने इसमें भाग ही नहीं लिया। इसलिए कुछ शब्दों में इस सम्मेलन का निचोड़ को अगर सामने रखा जाय तो यही कहना सही होगा की, कॉप 30 ₹फ्लॉप₹ हुआ, जीवाश्म ईंधन को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने पर आम सहमति तक पहुंचने के लिए शिखर सम्मेलन संघर्ष करता रह गया। मगर बात नहीं बनी। अफ्रीका, यूरोप, एशिया और प्रशांत के 30 से अधिक अन्य देशों ने जवाब में एक पत्र पर सह-हस्ताक्षर किए, जिसमें मसौदे की निंदा की गई और कहा गया कि वे ऐसे परिणाम का समर्थन नहीं कर सकते हैं जिसमें गैर-नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों से एक न्यायसंगत, व्यवस्थित और न्यायसंगत संक्रमण को लागू करने के लिए एक रोडमैप शामिल न हो।प्राकृतिक गैस, कोयला और कच्चे तेल सहित जीवाश्म ईंधन से दूर जाने की प्रतिबद्धता को दुबई में कॉप 28 की एक ऐतिहासिक उपलब्धि माना गया था ।फिर भी, तेल उत्पादक देशों की भयंकर पैरवी के बीच यह सौदा ₹चरणबद्ध तरीके से समाप्त₹ करने का आह्वान करने से कम हो गया। दो सप्ताह के सम्मेलन में प्रतिनिधि एक समझौते पर पहुंचने में विफल रहे हैं।

जंग बहादुर सिंह गोलपहाड़ी,जमशेदपुर

खराब ट्रैफिक पार करने से आसान है अंतरिक्ष यात्रा...

पिछले दिनों अंतरिक्ष से लौटे एस्ट्रोनॉट शुभांशु शुक्ला ने बेंगलुरु में रोड ट्रैफिक में फंस जाने पर मजाकिया लहजे में कहा कि "शहर में सड़कों से खराब ट्रैफिक पार करने से अधिक आसान है अंतरिक्ष यात्रा". बात सही है. खुले व शुद्व वातावरणीय आसमानी अंतरिक्ष में यात्रा करना जितना सरल है उतना ही धरती पर बढ़ते प्रदूषण और उससे भी अधिक सड़कों पर होते खतरनाक जाम वाले ट्रैफिक में फंसकर यात्रा करना कठिन होता जा रहा है. बात बेंगलुरु की ही नहीं है दिल्ली को देख लीजिये या फिर देश के किसी भी बड़े/मझले/छोटे शहर के ट्रैफिक को ही देख लीजिए हर जगह वाहन चलाना दुश्वार सा हो गया है. आजकल तो गलियां भी ट्रैफक जाम में शुमार होती जा रही है तब मुख्यमार्ग के हालात का आलम ही क्या पूछें. कई बार तो मरीजों को ले जा रही एम्बुलेंस तक ट्रैफिक में ऐसी फंस जाती है कि बीमार की जान पर आ जाती है.

शकुंतला महेश नेनावा, 57, गिरधर नगर (तिलक नगर के पास), इंदौर

पाठकगण अपने विचार responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid